प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण

[दूसरा खण्ड]

सम्पादक

डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्

पटना

प्रकाशक

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्

सम्मेलन-भवन, पटना-३

प्रथम संस्करण; वि० सं० २०१२, सन् १९५५ ई०

मूल्य २॥)

मुद्रक

श्री तारकेश्वर पांडेय

ज्ञानपीठ लिमिटेड

पटना-४

वक्तव्य

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् की ओर से समस्त बिहार-राज्य में हस्तलिखित प्राचीन पोथियों और दुर्लभ मुद्रित पुस्तकों तथा अलभ्य पत्र-पत्रिकाओं की खोज कराई जाती है। परिषद् के ग्रन्थशोधक श्रीरामनारायण शास्त्री सर्वत्र भ्रमण करके खोज और संग्रह का काम करते हैं। इसके अतिरिक्त वे बिहार-राज्य के प्रमुख पुस्तकालयों में संचित पुरानी पोथियों का विवरणात्मक परिचय भी लिखते जाते हैं। यह काम परिषद् के मान्य सदस्य डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री के तत्त्वावधान में होता है। श्री ब्रह्मचारीजी की देख-रेख में श्री रामनारायणजी परिषद् के संग्रहालय में सुरक्षित सभी पोथियों का परिचयात्मक विवरण तैयार करते हैं। उनके तैयार किये हुए विवरण डा० ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संपादित होकर प्रकाशित होते हैं। परिषद् के संग्रहालय में जो पुरानी पोथियाँ सुरक्षित हैं, उनके विवरणों का पहला खंड पहले प्रकाशित हुआ था और यह दूसरा खंड अब प्रकाशित हो रहा है।

इस पुस्तक में गया के श्री मन्नूलाल-पुस्तकालय की एक सौ छः और पटना-सिटी (गाय-घाट) के श्रीचैतन्य-पुस्तकालय की इक्कीस पोथियों का विवरण प्रकाशित है। उक्त दोनों पुस्तकालयों में संचित शेष पोथियों के विवरण तैयार करके क्रमशः प्रकाशित किये जायँगे। उनके अतिरिक्त बिहार-राज्य के अन्य प्रमुख पुस्तकालयों में जो पुरानी पोथियाँ हैं, उनके विवरण भी तैयार कराके प्रकाशित करने का विचार है। यह काम समयसाध्य और श्रमसाध्य है, इसलिए समस्त बिहार-राज्य के विभिन्न पुस्तकालयों में संगृहीत पोथियों के विवरण प्रकाशित करने का क्रम बहुत दिनों तक चलता रहेगा।

गया के श्रीमन्नूलाल-पुस्तकालय के संस्थापक और संचालक श्रीसूर्यप्रसाद महाजन तथा श्री चैतन्य-पुस्तकालय (गायघाट–पटनासिटी) के अध्यक्ष श्रीकृष्ण-चैतन्य गोस्वामी के प्रति यह परिषद् कृतज्ञता प्रदर्शित करती है, जिनकी उदारता से उनके पुस्तकालयों में संगृहीत पोथियों के विवरण तैयार करने में परिषद् के ग्रन्थशोधक श्रीरामनारायण शास्त्री को आवश्यक सुविधा प्राप्त हुई है।

हिन्दी में अब साहित्यिक शोध-कार्य बड़ी लगन से होने लगा है। साहित्यिक विषयों के सम्बन्ध में अनुसंधान करनेवाले विद्वानों को प्रामाणिक शोध-सामग्री कहीं एकत्र नहीं मिलती; क्योंकि अधिकांश शोध-सामग्री विभिन्न स्थानों में बिखरी पड़ी है। यदि समग्र उपलब्ध सामग्री का पूरा विवरण प्रकाशित कर दिया जाय, तो शोध-सम्बन्धी कठि-नाइयाँ बहुलांश में दूर हो सकती हैं। इसी विचार से यह पुस्तक प्रकाशित की जा रही है और आगे भी इस तरह के प्रकाशन का क्रम जारी रहेगा।

श्रावणी पूर्णिमा
सं० २०१२ वि०

शिवपूजन सहाय
(परिषद्–मंत्री)

दो शब्द

भारत के प्राचीनतम साहित्य को मुख्यतः दो व्यापक संज्ञाएँ दी गई हैं—श्रुति और स्मृति। 'श्रुति' का आशय उस मूलसाहित्य से है, जिसे मानव-जाति ने प्रथम-प्रथम पाया। इस साहित्य का मुख्य स्रोत 'श्रुति' अथवा 'श्रवण' था और प्राचीन गुरु-परम्परा के अभाव में इसे ईश्वरीय वाणी मानकर परम सम्भावना का पात्र बनाया गया। किन्तु वह साहित्य जो इस मूल श्रुति-साहित्य के आधार पर निर्मित हुआ, और जिसे गुरु-परम्परा से लोग 'स्मृति' अथवा 'स्मरण' द्वारा रक्षित करते रहे, वह 'स्मृति' के नाम से प्रचलित हुआ। इस प्रसंग में यह कहना कठिन है कि श्रुति और स्मृति दोनों प्रकार का मौखिक साहित्य प्रथम-प्रथम लिपिबद्ध कब हुआ? किन्तु, इतना तो असंदिग्ध रूप से माना जायगा कि पाणिनि के व्याकरण की रचना के समय तक लिपि-कला का आविष्कार हो चुका था।

प्रथम-प्रथम जो लिपिबद्ध साहित्य हमें प्राप्त है, वह मुख्यतः शिलालेखों, मुद्राओं, अथवा ऐतिहासिक महत्त्व रखनेवाली इस प्रकार की अन्यान्य वस्तुओं पर अंकित मिलता है। जब बौद्धों और जैनों ने अपने विपुल अपभ्रंश, पालि तथा प्राकृत साहित्य का निर्माण किया और उसका अधिकाधिक प्रचार करना चाहा तब ग्रंथों को भूर्जपत्र अथवा तालपत्र पर लिखकर सुरक्षित करने की प्रथा चलाई। प्राचीनकाल में जितने बौद्धों के विहार और जैनियों के मन्दिर थे, उनसे सम्बद्ध हस्तलिखित ग्रंथों का संग्रहालय रहा करता था। जैन-धर्मावलम्बी इन संग्रहालयों को 'शास्त्र-भंडार', 'सरस्वती-भंडार', 'भारती-भांडागार' अथवा संक्षेप में 'भंडार' कहा करते थे। आज भी राजस्थान तथा अन्यत्र स्थित अनेकानेक मन्दिरों में जैन ग्रंथों की विपुल निधि सुरक्षित है। कश्मीर, काशी, मिथिला, नदिया (बंगाल) आदि कतिपय प्रदेशों अथवा स्थानों में वैदिक अथवा हिन्दू-धर्म से सम्बद्ध संस्कृत-भाषा का प्रचुर साहित्य हस्तलिखित रूप में संचित है। बौद्धों के भी तक्षशिला, विक्रमशिला और नालन्दा के विहारों तथा विश्वविद्यालयों में बहुसंख्यक ग्रंथ सुरक्षित थे, जिनमें से अनेक ग्रंथ विधर्मियों द्वारा भस्मसात् भी कर दिये गये।

वर्त्तमान युग में जब मुद्रण के आविष्कार ने ज्ञान की सामग्री को सर्वसुलभ बनाया, तब विद्वानों का ध्यान इस ओर गया कि हस्तलिखित ग्रंथों की अमूल्य निधि को प्रकाश में लाया जाय। फलतः इस प्रकार के ग्रंथों की खोज और उनके सम्बन्ध में संक्षिप्त सूचनाओं के प्रकाशन का कार्य सन् १८६८ ईसवी से आरम्भ हुआ। पहले-पहल यह कार्य

मुख्यतः संस्कृत-ग्रंथों की खोज तक सीमित था। डा० कीलहार्न, बूलर, पीटर्सन, वरनेल तथा भंडारकर आदि विद्वानों ने, एशियाटिक सोसाइटी एवं प्रादेशिक सरकारों के साहाय्य से, संस्कृत ग्रंथों की खोज के आधार पर, संग्रह प्रकाशित किये और उन सबको मिलाकर ऑफरेक्ट साहब ने एक बृहत् परिचयात्मक संकलन 'कैटेलोगस कैटेलोगेरम' के नाम से अनुसंधित्सु जगत् के सम्मुख प्रस्तुत किया। संस्कृतग्रंथों तथा जैन-धर्म-सम्बन्धी साहित्य के ऐसे कई बहुमूल्य परिचयात्मक संकलन विद्यमान हैं।

हिन्दी के हस्तलिखित ग्रंथों के संग्रह तथा उनके सम्बन्ध में सूचनाओं के प्रकाशन का व्यवस्थित रूप से कार्य करने का प्रयत्न सर्वप्रथम 'काशी-नागरी-प्रचारिणी' सभा ने किया और सन् १६०० ईसवी में श्री बाबू श्यामसुन्दरदास के तत्त्वावधान में खोज-विभाग की स्थापना हुई। सभा ने अबतक उन्नीस रिपोर्टें तैयार की हैं, जिनमें केवल बारह छप सकी हैं और शेष अभी लाल फीते के जटाजूट में निलीन हैं। इन रिपोर्टों का प्रकाशन सरकार के आर्थिक अनुदान पर ही अवलंबित रहा है। अतः अप्रकाशित रिपोर्टों के उद्धार के लिए कब गंगावतरण होगा, यह अनिश्चित है। हिन्दी-साहित्य का प्रत्येक विद्यार्थी यह स्वीकार करेगा कि हमारे साहित्य और संस्कृति के नवीन इतिहास तथा नवीन चेतना के निर्माण में हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज ने बहुत बड़ी देन दी है।

बिहार राष्ट्रभाषा-परिषद् के तत्त्वावधान में हस्तलिखित पोथियों के संग्रह और अनुसंधान का कार्य १६५१ ईसवी के फरवरी मास से प्रारम्भ हुआ है। तीन वर्ष के अल्पकालिक अन्वेषण के फलस्वरूप अबतक १०७३ हस्तलिखित ग्रंथ संग्रहालय में संकलित हो चुके हैं। परिषद्-संग्रहालय में संकलित ग्रन्थों के त्रैवार्षिक (१६५१-५३ ईसवी) विवरण का प्रथम खण्ड प्रकाशित हो चुका है। उक्त विवरण में हिन्दी, संस्कृत, गुरुमुखी और बंगला के २०० हस्तलिखित पोथियों के विवरण दिये गये हैं। उस विवरण में हमने इस दूसरे खण्ड के शीघ्र प्रकाशित होने की चर्चा की थी।

यह संग्रह गया के मन्नूलाल-पुस्तकालय और गायघाट (पटना) के 'चैतन्य पुस्तकालय' में संकलित-सुरक्षित हिन्दी ग्रंथों का संक्षिप्त विवरणात्मक परिचय है। इसमें १२७ हिन्दी हस्तलिखित ग्रंथों के विवरण हैं, जिनमें मन्नूलाल-पुस्तकालय (गया) के १०६ ग्रन्थ और चैतन्य पुस्तकालय (पटना) के २१ ग्रन्थ हैं। इनमें ५५ पोथियों के विवरण बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् और बिहार-हिन्दीसाहित्य-सम्मेलन के सम्मिलित शोध-समीक्षा प्रधान पत्र 'साहित्य' में क्रमशः प्रकाशित हो चुके हैं।

हमें आशा है कि अनुशीलन-शील सुधी-समाज के लिए यह विवरण अनुसंधान कार्य में सहायक सिद्ध होगा। पोथियों के विवरणों को तैयार करते समय यह ध्यान रखा गया है कि हस्तलिखित ग्रन्थों के उद्धरण अपने मौलिक अविकल रूप में आवें। इस विवरण

के प्रारम्भ में 'ग्रन्थकारों का संक्षिप्त परिचय' तो दिया ही गया है, तृतीय परिशिष्ट में महत्त्वपूर्ण हस्तलेखों के समय तथा अन्य प्रकाशित खोज विवरणिकाओं में उनके उल्लेख का संकेत कर दिया गया है।

निम्नलिखित तालिका में विक्रम शताब्दी के अनुसार प्रत्येक शताब्दी में रचित तथा लिपिकृत ग्रन्थों की संख्या का निर्देश किया गया है। शेष ग्रन्थों में रचनाकाल का उल्लेख नहीं है।

विक्रम-शताब्दी के अनुसार ग्रन्थों के रचनाकाल और लिपिकाल की तालिका—

शताब्दी	इस शताब्दी में रचित पोथियों की संख्या	इस शताब्दी में लिपिबद्ध पोथियों की संख्या
सोलहवीं	१	×
सत्रहवीं	३	×
अठारहवीं	२	२
उन्नीसवीं	७	२२
बीसवीं	६	५०

प्रस्तुत संग्रह में ४६ ग्रंथकारों के १२७ ग्रन्थों के विवरण हैं, जिनमें तेरह ऐसी रचनाएँ हैं, जिनके ग्रन्थकार साहित्यिक जगत् के लिए अपरिचित एवं अज्ञात (प्रथम परिशिष्ट में देखिए) हैं। इनमें से उतने ही ग्रन्थों में काल-निर्देश है, जिनकी संख्या उपर्युक्त तालिका में दी गई है।

इस संकलन में अनेक पोथियाँ ऐसी हैं जो अबतक अप्रकाशित हैं और इनपर यदि सम्यक् अनुसंधान किया जाय तो हिन्दी तथा बिहार के साहित्यिक इतिहास पर अभिनव प्रकाश पड़ेगा। अबतक, परिषद् में तथा राज्य के विभिन्न पुस्तकालयों में संगृहीत पोथियों से लगभग पचीस ऐसे कवियों, लेखकों का पता चला है, जिनके सम्बन्ध में अनुसंधान-अनु-

शीलन की नितान्त आवश्यकता है। इन पचीस में ग्यारह कवियों का संक्षिप्त परिचय तथा उनके रचित ग्रंथों के सम्बन्ध की चर्चा प्रथम खंड में की गई थी। इस संग्रह में भी हम निम्नलिखित बिहार-निवासी कवियों अथवा रचयिताओं की चर्चा करेंगे।

१. लालचदास, २. सूरजदास, ३. हलधरदास, ४. पदुमनदास, ५. दलेल सिंह, ६. रामप्रसाद, ७. देवीदास, ८. दिनेश कवि, ९. कान्हूलाल गुरदा, १०. शिव प्रसाद और ११. राधालाल गोस्वामी।

इनके सम्बन्ध में संक्षिप्त परिचयात्मक टिप्पणी संकलन के प्रारम्भ में दे दी गई है। इनमें यद्यपि श्री लालचदास और श्री राधालाल गोस्वामी का जन्म-स्थान बिहार नहीं है; किन्तु इनकी साहित्य-रचना-भूमि बिहार ही है। सूरजदास, लालचदास और पदुमनदास के ग्रथों की चर्चा पहले भी प्रकाशित विवरण के प्रथम खंड में कर चुके हैं। संत सूरज दास और उनकी कृति 'रामजन्म' भी हम सुसंपादित रूप में परिषद् की ओर से प्रकाशित करने जा रहे हैं। परिषद् ने प्रति वर्ष एक हस्तलिखित ग्रन्थ समीक्षात्मक अध्ययन के साथ, अपने मूल रूप में, प्रकाशित करने का निश्चय किया है।

इन कवियों के अतिरिक्त दूसरे प्रदेश के निवासी ग्रंथकार, जो खोज के फलस्वरूप प्रकाश में आये हैं, वे निम्नलिखित हैं—

१. इन्द्रसीदास (गोसाईं), २. ईसवी खाँ, ३. नन्दकिशोर, ४. प्यारेलाल, ५. फकीर सिंह, ६. बलदेव कवि, ७. बैजनाथ सुकवि, ८. भारामल, ९. रामवल्लभ शरण, १०. सुखलाल (सुखराम) और ११. शिवदीन कवि।

इन कवियों का संक्षिप्त परिचय संकलन के पूर्व में दिया गया है, और ग्रंथ-सम्बन्धी सूचना मुख्य विवरणवाले अंश में दी गई है।

हम 'श्रीसूर्यप्रसाद महाजन' तथा 'श्रीकृष्ण चैतन्य गोस्वामी' के अत्यन्त अनुगृहीत हैं जिनकी कृपा से श्री मन्नूलाल-पुस्तकालय (गया) तथा श्री चैतन्य पुस्तकालय (पटना) में संगृहीत पोथियों की छानबीन करने की सुविधा प्राप्त हुई। इन पुस्तकालयों की पोथियों की छान-बीन तथा उनके सम्बन्ध की सूचनाओं के प्रकाशन का क्रम चलता रहेगा। हम परिषद् के प्रधान अनुसंधायक श्री रामनारायण शास्त्री तथा उनके सहयोगी श्रीरञ्जन सूरिदेव और श्रीकामेश्वर शर्मा को भी धन्यवाद देते हैं, जिन्होंने अपने कार्य को केवल कर्त्तव्यमात्र समझकर नहीं सम्पन्न किया है, अपितु साहित्यसेवा की पुनीत प्रेरणा से अनुप्राणित होकर भी।

धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री

(अध्यक्ष—हस्तलिखित-ग्रन्थ-शोधविभाग)

सूची

प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण

ग्रंथकारों का संक्षिप्त परिचय

[ग्रंथकारों के सामने (कोष्ठान्तर्गत) की संख्याएँ विवरणिका में दी गई ग्रंथ-संख्याओं की क्रम-संख्याएँ हैं]

१—अग्रदास (१०४)—अग्रदास की 'कुण्डलिया' इस खोज में मिली है। इसमें रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। इनके अन्य ग्रंथ नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में मिले हैं। सभा की खोज-विवरणिका के अनुसार ये गलता, आमेर (जयपुर राज्य) की वैष्णव गद्दी के अधिकारी थे। ये वैष्णव सम्प्रदाय के नाभादास के गुरु, कृष्णदास पयहारी के शिष्य थे और वि० सं० १६३२ (सन् १५७५ ई०) के लगभग वर्त्तमान थे। इस ग्रंथ की एक प्रति की चर्चा नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) के खोज-विवरण (सन् १६०६–८, ग्रं० सं० १२१ बी.) में हुई है। इनके द्वारा लिखित अन्य तीन हस्तलेख भी नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में मिले हैं।

२—अजबदास (२४)—अजवदास के झूलने बड़े रोचक और दार्शनिक हैं। इनके स्थान और काल का उल्लेख इस ग्रंथ में नहीं हुआ है। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) के खोज-विवरण के अनुसार इनका जन्म सुलतानपुर जिले के पलिया (कायस्थ) नामक स्थान में हुआ था। अजवदास कान्यकुब्ज ब्राह्मण (केसरमऊ के दूबे) और वैष्णव थे। इनकी मृत्यु अयोध्या में सन् १८६३ ई० में हुई थी दे.—ना. प्र. स. (काशी) के त्रयोदश त्रैवार्षिक विवरण–सन् १६२६–२८ ई०, पृष्ठ-संख्या ११। इस 'झूलना' की दो प्रतियाँ सन् १६२२–२५ के खोज-विवरण में मिली हैं। उक्त खोज-विवरण के उद्धरणों से इस ग्रंथ में पाठान्तर मिलते हैं। दे.–ना. प्र. स. (काशी) का द्वादश त्रैवार्षिक विवरण, सन् १६२३—२५, खंड १ ग्रंथ-संख्या ६–वी.।

इन्होंने अक्षर-क्रम से तो 'झूलने' रचे ही हैं झूलना-शब्दावली के भी दो हस्तलेख नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को मिले हैं।

३—इन्द्रसीदास [गोसाईं] (३५)—इनकी एक रचना 'पार्वती-मंगल' नाम से मिली है। जिसमें रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। यह कवि-नाम नवोपलब्ध है। अन्य खोज-विवरणों में इनकी चर्चा नहीं है।

४—ईसवी खाँ (५२)—ईसवी खाँ का नाम नया मिला है। इन्होंने राजा छत्रसिंह की आज्ञा से 'बिहारी सतसई' की 'रस-मंजरी' टीका की है। ये सत्रहवीं सदी के कवि हैं। इनपर तथा इनकी रचना पर अभी अनुसंधान नहीं हुआ है

५—करणकवि (५१)—बंसीधर के पुत्र; सं० १८५७ के लगभग वर्त्तमान; पन्ना नरेश महाराज हिन्दूपति के आश्रित। इनके रचित ग्रंथ 'रसकल्लोल', की एक प्रति नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में मिली है। दे.—खो. वि. सन् १९०४ ई०, ग्रंथ-संख्या १५।

६—कान्हूलाल गुरदा (७९)—गुरदाजी का नाम नया उपलब्ध हुआ है। इन्होंने 'सुधारसतरंगिणी' नामक काव्य (लक्षण-ग्रंथ) की रचना की है। इनका रचनाकाल १९वीं सदी का अन्तिम चरण है। वि० सं० १९५४ (सन् १८९७ ई०) के लगभग वर्त्तमान थे। इनका निवासस्थान गया था।

७—किंकर गोविंद [रामचरन](६५)—किंकर गोविंद अनुसंधित्सुओं के लिए एक नया नाम है। इनकी रचना 'रामचरणचिह्नप्रकाश' भी एक नयी उपलब्धि है। सं० १८९७ वि० इनका रचनाकाल है। इस रचना में राम के चरण अथवा रामनाम की महिमा का वर्णन तो है ही, साथ ही साथ रस और अलंकार-सम्बन्धी रचना भी है।

यद्यपि इस ग्रंथ की पुष्पिका में ग्रंथकार का नाम 'किंकर गोविंद' दिया हुआ है, किन्तु प्रतीत होता है, ग्रंथकार नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) द्वारा की गई खोज में उपलब्ध 'रामचरण' (रामचरनदास) हैं। यदि ग्रंथकार 'रामचरन' ही हैं; तो ना. प्र. के खोज-विवरण में इनके जितने ग्रंथ अब तक मिले हैं, उससे यह ग्रंथ नवीन है। किन्तु, इसका रचनाकाल उससे भिन्न है। विस्तार के लिए देखिए—नागरी-प्रचारिणी, सभा (काशी) की खोज-विवरणिका—सन् १६२०–२२, ग्रं. सं. १४२ बी., १४५, १४५ डी., १४५ जी.; खो. वि. १६०६–११, २४५ बी., सं. २४५ डी., २४५ आई., २४५ जे. २४५ के., और २४५ एम्., २४५ एफ्.; खो. वि. १६१७–१६ सं. १४३ ए., बी., सी., डी.; १६२३–२५ सं. ३३६, १६२६–२८ सं. ३७७, ३७७ डी. ई०, एच्. और खो. वि १६२६–३१ सं. २८१ तथा खो. वि. १६३२–३४ सं. १७५। इनके सम्बन्ध की अन्य सूचना के लिए दे. खो. वि. १६०१ सं. ६४। मिश्र-बन्धु-विनोद की सं. १०७५ में भी इनकी रचना की चर्चा है।

८—केशवदास (१०,११,५६,५७,५८,५६,६८)—ओरछा (बुन्देलखंड) निवासी। सनाढ्य ब्राह्मण, सुप्रसिद्ध एवं महत्त्वशाली रचनाकार। १६३७ के लगभग वर्त्तमान; ओरछा-नरेश महाराज मधुकरशाह और उनके पुत्र महाराज इन्द्रजीत सिंह के आश्रित। निम्नलिखित हस्तलेख इस संग्रह में हैं—

(१) कविप्रिया के दो हस्तलेख—समय सं० १८८३ वि. और सं० १६०० वि. अर्थात् सन् १८२६ ई०।

(ग्रं. सं. १० सटीक है। टीका की रचना सं० १८३४ वि० में हुई है। टीकाकार श्रीसहजराम (महाराज गज सिंह के आश्रित) हैं।

(२) रसिक प्रिया के दो हस्तलेख–समय सं० १८६७, सं० १९१६ अर्थात् सन् १८१० और १८५६ ई० (रचनाकाल-सं० १६८४ वि०)

(३) रामचन्द्रिका की तीन प्रतियाँ—समय सं० १८३५–१९३७ सं० अर्थात् सन् १७७८–१८८० ई० (रचनाकाल-सं० १६५८ वि०)

इनकी रचनाएँ नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) के खोज-विवरण में भी विवृत हुइ हैं। विशेष विस्तार के लिए ना. प्र. की खोज-विवरणिका दे.–१९२३–२५ ई० की ग्रं० सं० २०७ और १९२६–२८-सं० २३३, १९२९–३१ सं० १९२ तथा १९३२–३४-सं० ११३। केशवदास का समय लगभग १६०० ई० अनुमित किया गया है।

९—गिरधरदास [कविराय] (१४)–गंगा-यमुना के मध्य में स्थित किसी स्थान में इनका जन्म सं० १७७० वि० में हुआ। इनकी कुण्डलियाँ प्रसिद्ध हैं। ना. प्र. के खोज-विवरण में भी इनके ग्रंथ की चर्चा है। दे.-खो. वि. १९०६–८ सं० १६७।

१०—तुलसीदास (१२-क, १३, १७, १९, २०, २१, २२, ३६, ३७, ३८, ४४, ४८, ४९, ५३, ६२, ६३, ६४, ६५, ६६, ८४, ८६, ८७, ९४, १२८)–ये हिन्दी के सर्व-श्रेष्ठ कवि हैं। निम्नलिखित रचनाओं की कुल २५ प्रतियाँ मिली हैं जिनका विवरण इस प्रकार है :—

क्रम-सं०	ग्रंथकार का नाम	प्रतियाँ	लि० का० निम्नलिखित रूप में
१	कवित्तरामायन	२	सं० १९१९ वि०
२	छप्पैरामायन	२	सं० १९१९ वि० (सन् १८६२ ई०)
३	तुलसी सतसई	२	सं० १९१५ वि० (सन् १८५८ ई०), सं० १९७४ वि०।
४	दोहावली	१	सं० १८४६ वि०
५	बरवै रामायण	३	सं० १९०५ वि०, १८८७ वि० (१८-३० ई०), सं० १९१९ वि० (सन् १८६२ ई०)
६	मणिमय दोहा	१	सं० १८१९ वि० (सन् १७६२ ई०)
७	विनय-पत्रिका	६	सं० १८८५ वि०, सं० १८६६ वि० (सन् १८२२ ई०)

८	वैराग्य-सन्दीपनी	१	सं० १६१६ वि० (सन् १८६२ ई०)
६	सप्तसतिका	१	सन् १२८६ साल
१०	गीतावली रामायन	३	सं० १६१० वि०, १८८३ वि०
११	सूक्ष्मरामायणछप्पावली	१	सं० १६४६ वि० (सन् १८८६ ई०)
१२	भरतविलाप	१	सं० १८८८ वि० (सन् १२६५ साल)
१३	रामसगुनमाला	१	सं० १६११ वि० (सन् १८५४ ई०, १२३२ साल)

११—दलेल सिंह (१०२)—बिहार प्रान्त के हजारीबाग जिले में स्थित रामगढ़ राज्य के महाराजा साहब। साहित्य और काव्य से विशेष अनुराग। अनेक कवियों और संगीतज्ञों के आश्रयदाता। सं० १७३० वि० के लगभग वर्त्तमान। श्रीराम सिंह महाराज के पुत्र कर्णपुर ग्राम में निवास। अनेक अप्रकाशित ग्रंथों के प्रणेता। श्री पदुमनदास इनके आश्रितकवियों में प्रमुख थे। इनकी एक रचना 'रामरसार्णव' इस खोज-विवरण में है। अनुसंधान की दृष्टि से कवि नवोलब्ध हैं। इनकी चर्चा अन्य किसी खोज-विवरण में संभवतः नहीं है।

१२—दिनेशकवि (५५)—बिहार प्रान्तस्थ गया जिलान्तर्गत टिकारी राज्य के आश्रित कवि। सन् १८८३ ई० के लगभग वर्त्तमान। इनकी रचना 'रस-रहस्य' में नायक-नायिका आदि के लक्षण-उदाहरण के अतिरिक्त टिकारी राज्य, राजवंश, फल्गु नदी, मगध-गौरव आदि का बड़ा सरस और सुन्दर चित्रण है।

१३—दीनदयाल गिरि (१,२,३,८६,६१,६३)—गोस्वामी; सं० १८१८ वि० के लगभग वर्त्तमान; काशी-निवासी; शिवभक्त थे। इनके निम्नलिखित ६ ग्रंथ इस संग्रह में है।

क्र० सं०	ग्रंथनाम	प्रति	र० का०	लि० का०
१	अन्योक्ति-कल्पद्रुम	२	सं० ६११७ वि०	सं० १८२२वि०, १६२२ वि०; १६२७ वि०;

२— अनुराग-बाग २ सं० १८८८ वि०, १२७८ साल (१८३१ ई०) सं० १९०६ वि० (सन् १८५२ई०)

३— दृष्टान्त-तरङ्ग १ सं० १८३६ वि०, (१७८२ ई०)

इसके आठ ग्रंथ नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में उपलब्ध हुए हैं। दे० ना० प्र० खो० वि० १९०४, ग्रं० सं०—४०, ४४, ७१, ७७, ९१, ९२, ९९ और खो० वि० १९०९—११,—ग्रन्थ सं०—७४, ए०, बी०। इनमें ४ ग्रन्थ मुद्रित हो चुके हैं —दे० "हिन्दी-पुस्तक-साहित्य"—पृ० ४७७।

१४—देवकवि (६)—इनका पूरा नाम श्री देवदत्त था। हिंदी के नवरत्नों में एक। सं० १७३० के लगभग वर्त्तमान। इन्होंने लगभग ७० ग्रन्थों की रचना की है। इस संग्रह में इनके दो ग्रंथ मिले हैं। नागरी-प्रचारिणी-सभा (काशी) को भी इनके १३ ग्रंथ उपलब्ध हुए हैं। इनका जन्मस्थान धौसरिया (इटावा); समनेगाँव (मैनपुरी) निवासी; ये फफूँद (इटावा) के राजा मधुकर साहि के पुत्र राजा कुशल सिंह के आश्रित थे। कवि को संस्कृत में भी नायिका-भेद लिखने का श्रेय प्राप्त है जिसकी एक प्रति नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) के संग्रहालय में सुरक्षित है। दे० ना० प्र० के खो० वि० १९२६-२८, पृ० सं० ३१ क्र० सं० ९५ का लेख। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में उपलब्ध ग्रंथों के लिए दे०—खो० वि०—१९०२—सं० ७, १२१; खो० वि० १९०० सं० ५३,खो० वि० १९०३ ग्रं० सं० २८, ४१, १०८; खो० वि० १९०४ क्र० सं० ३७, १०५, १२०, १२२; खो० वि० १९०५ ग्रं० सं० २६; खो० वि०, १९०६—१९०८ ग्रं० सं० ५६; खो० वि० १९०९ —१९११—ग्रं० सं०-६४ एफ्, ६४,बी०,सी०,डी०, ई०। अब तक कवि के निम्नलिखित ग्रंथ मुद्रित हुए हैं—अष्टयाम, भाव-विलास, रसविलास और भवानीविलास। दे० 'हिन्दी-पुस्तक-साहित्य'—पृ० सं० ४७६ (डा० माताप्रसाद गुप्त)।

१५—देवीदास (३४)—(अम्बष्ठ, कायस्थ) बिहार प्रान्त के हजारीबाग जिले के ईचाक ग्रामवासी; रामगढ़ राज्य के आश्रित; श्री धरणीधरदास के पौत्र और श्री राघवदास के पुत्र। इनके अनुज श्री भवानीदास भी संभवतः कवि थे। इनकी रचना 'पाण्डव-चरितार्णव' की खंडित प्रति मिली है। ये नवोपलब्ध कवि हैं।

१६—नन्ददास (८८, १२४)—प्रसिद्ध कवि तुलसीदास के भाई; इनका अष्टछाप के कवियों में सातवाँ स्थान है। स्वामी विट्ठलदास के शिष्य; १६२४ के लगभग वर्त्तमान। इस विवरण में एक ही ग्रंथ 'अनेकार्थनाममाला' की दो प्रतियाँ मिली हैं । जिसका, लेख-काल सं० १८५८ वि० (सन् १८०४ ई०) है। दोनों में पाठान्तर प्रतीत होता है । इनके अन्य ग्रथ नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में उपलब्ध हुए हैं। दे० ना०प्र० का खो० वि० १९०१ ग्रन्थ सं०—११,६६; खो० वि० १९०२ ग्रं० सं० ५८, ७०; खो० वि० १९०६–१९०८—ग्रं० सं० २०० ए०, बी०, सी०, डी०,ई०;खो० वि० १९०६–१९११–ग्रं० सं० २०८ बी०, डी०,ए०,सी०,ई०,एफ्०;खो०वि० १९०३–ग्रं० सं० १५३; खो० वि० १९१७–२० ग्रं० सं० ११६ ए०; खो० वि० १९२०–२२ ग्रं० सं० ११३ डी०,ई०; खो० वि० १९२३–२५—ग्रं० सं० २६४; खो० वि० १९२६–२८—ग्रं० सं० ३१६ ए०, बी०, सी०, डी०, ई, एफ्०, जी०; खो० वि०, ग्रं० सं० २४४।

अब तक इनके निम्नलिखित १५ ग्रंथ खोज में मिले हैं—

१—अनेकार्थमंजरी (नाममाला) २—भँवर गीत, ३—नाममंजरी या मानमंजरी, ४—फूलमंजरी, ५—रानी मंगौ, ६—रासपंचाध्यायी, ७—रुक्मिणी मंगल, ८—विरह मंजरी, ९—दशमस्कंध भागवत, १०—नामचिन्तामणिमाला, ११—जोगलीला, १२—श्याम-सगाई, १३—नासुकेत पुराण भाषा, १४—रसमंजरी, १५—विरहमंजरी।

१७—नन्दकिशोर (१०६) –(पंडित) प्रस्तुत खोज में इनका पता प्रथम है। 'विनोद' और पिछले खोज-विवरणों में इनका कोई उल्लेख नहीं है । प्रस्तुत संग्रह में 'रासपंचाध्यायी' की भाषाटीका-इनके द्वारा रचित मिली है । इसमें रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं हुआ है । ग्रन्थ में संभवतः इनका कोई वृत्त भी नहीं मिलता है ।

१८—नागरीदास (१२५)—वृन्दावनवासी; राधावल्लभी (वैष्णव) संप्रदाय के गुरु श्री विहारिनदास के शिष्य; सोलहवीं शती के अन्त में (सन् १५६३ ई० के लगभग) वर्त्तमान 'नागरीदास की बानी' और 'नागरीदास के दोहे' के रचयिता; 'स्वामी हरिदास जी को मंगल' के भी रचयिता। महाराज सावंतसिंह (नागरीदास) से भिन्न। इनके सम्बन्ध में दे०—मिश्र-बन्धु-विनोद, ग्रं० सं० १७६, ना० प्र० सं० (काशी) खो० वि० १६०५ ग्रं० सं० ३१,४०; खो० वि० १६१२–ग्रं० सं० ११६; खो० वि० १६२३–२५, ग्रं० सं० २६१ । इस नाम से प्रसिद्ध अन्य कवि भी हो गए हैं, किन्तु ये उनसे भिन्न और सबसे पुराने हैं । इस संग्रह की प्रति से ना० प्र० खो० वि० की १६२३–२५ की ग्रं० स० २६१ के उद्धारण को मिलाइए ।

१६—पद्माकर (१५,१६)—प्रसिद्ध कवि, जन्म (सन् १७५३ ई०), मृत्यु (१८३२ ई०) जन्मभूमिसागर (वाँदा), मोहनलाल भट्ट के पुत्र । इनके पूर्वज मथुरानिवासी थे। १६ वर्ष की अवस्था में जन्मभूमि सागर के मराठा दरबार में सम्मान प्राप्त किया। जयपुर, उदयपुर, ग्वालियर, सतारा और बुंदेलखण्ड की अनेक रियासतों में सम्मानित। जयपुर नरेश महाराजा प्रताप सिंह सवाई और महाराजा जगत सिंह सवाई के आश्रय में साहित्य-रचना। विशेष विवरण के लिए दे०—ना० प्र० सं० (काशी) का खो० वि० १६२०–२२, ग्रं० सं० १२३; खो० वि० १६२६–२८, सं० ३३८; खो० वि० २६०६–११ सं० २२० । इस संग्रह में इनके दो ग्रन्थ हैं ।

२०—पद्मुमनदास (१८, ४०, ८१, ८२)—विहार के कवि, हजारीबाग जिले के रामगढ़ राज्य के आश्रित, खैरबार श्री दलेल सिंह

(स्वयं राजा भी कवि थे) की संरक्षकता में में रचना । भाषा और साहित्य पर समान अधिकार। सं० १७३८ वि०(सन् १६८१ई०) के लगभग वर्त्तमान। इनके ग्रन्थ अप्रकाशित और साहित्यिक जगत् के लिए नये हैं। नागरी-प्रचारिणी-सभा (काशी) के खोज विवरण में इनकी चर्चा है। दे०-ना० प्र० सभा (काशी) की खोज विवरणिका १६२६–२८ ई० की ग्रं० सं०—३३६ । इस संग्रह में इनके ग्रंथों की चार प्रतियाँ मिली हैं।

२१—प्यारेलाल (११०)—श्री प्यारेलाल जी नवोपलब्ध रचनाकार हैं। प्रतीत होता है, इन्होंने 'नन्दोत्सव' की टीका की है । जिसमें अपने विषय में कुछ भी संकेत नहीं किया है। टीका की भाषा से 'व्रज' के निकट के निवासी ज्ञात होते हैं। अन्य खोज-विवरणिकाओं मे इनका उल्लेख नहीं हुआ है।

२२—फकीरसिंह (४६)—इनका ग्रंथ 'वैतालपचीसी' प्राप्त हुआ है, जिसका रचनाकाल सं० १७८२ वि० है। यह ग्रंथ अब तक के अन्य अन्वेषणों में प्राप्त प्रतियों से भिन्न है । ग्रन्थ से ग्रन्थकार के निवास-स्थान आदि का पता नहीं चलता है।

२३—बलदेव कवि (६१)—'रामविनोद' के कवि बलदेव जी भी खोज में नये हैं। इनकी रचना अनुसंधेय है। ग्रन्थ अप्रकाशित है। विस्तार के लिए इस ग्रन्थ पर दी गई टिप्पणी देखिये ।

२४—बिहारीलाल (४२, ४३)—हिंदी के प्रसिद्ध कवि (रीति कालीन); माथुर चौबे; ग्वालियर राज्य के निवासी; सं० १७३० वि० के लगभग वर्त्तमान। इस खोज में 'बिहारी सतसई' की दो प्रतियाँ मिली हैं ।

२५--वैजनाथ सुकवि (६,१०१)—'आलंबनि विभाव' और 'वामविलास' के ग्रन्थकार श्री सुकवि वैजनाथ जी नवीन अनुसंधान हैं । प्रस्तुत संग्रह में इनकी दो रचनाएँ मिली हैं। दूसरी रचना 'वाम विलास' के देखने से इनकी विद्वत्ता और

साहित्यिक प्रतिभा का पता चलता है। ये उत्तर-प्रदेशीय जौनपुर जिले के बादशाहपुर ग्राम के निवासी बाबू सीताराम के आश्रित थे। इनके पिता श्री दिनेश जी भी सुकवि थे। ग्रंथ का रचनाकाल सं० १७३४ वि० है। ग्रंथ में रचना-काल-सूचक दोहा अस्पष्ट है। ग्रंथ में लिपिकार ने लिपिकाल सं० १९२८ बताया है और लिखा है, कवि की आज्ञा पाकर ही लिपि की गई है। इससे संगति नहीं बैठती है।

२६—भारामल (९९)—'सीलकथा' के रचयिता श्री भारामल जी नए मिले हैं। ये कश्चित् जैनकवि प्रतीत होते हैं। इनकी रचना अप्रकाशित है। रचनाकाल सं० १९५३ वि० है। ग्रंथ की भाषा राजस्थानी है। रचना में कवि का कोई परिचय नहीं मिलता है। न किसी अन्य खोज-विवरणिकाओं में।

२७—मतिराम (५४)—कानपुर जिले के तिकवाँपुरवासी प्रसिद्ध कवि; कान्यकुब्ज त्रिपाठी ब्राह्मण; सं० १७०७ वि० के लगभग वर्तमान; बादशाह औरंगजेब और बूँदी नरेश भाऊसिंह के दरबारी कवि थे। इनके और तीन भाई-चिन्तामणि, भूषण और नीलकंठ (जटाशंकर) थे। सम्प्रति इनकी निम्नलिखित रचनाएँ मिली हैं—

१—ललित ललाम—ना० प्र० स० (काशी) खो० वि०—१९०३, सं० ६७।
२—साहित्यसार— ” खो० वि० १९०६-८, सं० १९६ बी०
३—लक्षणशृंगार— ” खो० वि० १९६ सी०
४—मतिराम सतसई— ” खो० वि० १९०९-११ सं० १९६
५—रसराज— ” खो० वि० १९००, सं० ४० १९०६-८, सं० १९६ ए० ९०१, सं० ६७।

ग्रन्थ-सं० ५ (रसराज) प्रस्तुत संग्रह में मिला है। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) की खोज में इसके सात हस्तलेख अब तक मिले हैं।

२८—मलिक मुहम्मद जायसी (३०, ३२, ३३)—जायस निवासी; प्रसिद्ध सूफी कवि; सं० १५९७ के लगभग वर्त्तमान; इस संग्रह में इनकी प्रसिद्ध रचना 'पदमावत' की तीन हस्तलिखित प्रतियाँ वित्रत हैं। ग्रंथ का लिपिकाल है—सं० १८७३-वि०, (सन्०१८१६ ई०) और सं० १८६१ वि०।

२९—महाराज उदित नारायण (१२-ख)—काशी-नरेश; सं० १८४२–१८६२ के लगभग वर्त्तमान; साहित्यिक समाज के प्रेमी, महाराज वरिवंड सिंह के पुत्र। प्रस्तुत संग्रह में इनकी रचना मिली है। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को भी इनका ग्रन्थ खोज में मिला है। दे० खो० वि० १९०४, १०६ और 'हस्तलिखित हिन्दी-पुस्तकों का संक्षित विवरण, पृ० सं० १५।

३०—राधालाल गोस्वामी (१२३)-मथुरा निवासी, वैष्णव मत (माध्व संप्रदाय) के आचार्य; पटना-गायघाटस्थित चैतन्य पुस्तकालय के संस्थापक; अनेक ग्रन्थों के प्रणेता, संपादक और टीकाकार। साहित्य-रचना-स्थान-विहार प्रान्त। सं० १९१० वि० के लगभग वर्त्तमान।

३१—रामप्रसाद (८)—बेतिया राज्य (चम्पारन-विहार) के राजा आनन्दकिशोर के आश्रित कवि। सं० १८७७ के लगभग वर्त्तमान। प्रस्तुत संग्रह में 'आनन्दरसकल्पतरु' नामक रचना मिली है, जो अप्रकाशित है। महाराजा के विशेष आग्रह से कवि ने इस ग्रंथ की रचना की थी। कवि ने संक्षेप में राजवंश-वर्णन भी किया है। ग्रन्थ की विशेषता यह है कि इसमें नायक के भी उतने ही भेद किये गये हैं, जितने नायिकाओं के।

३२—रामलाल गोस्वामी (१११)—'नन्दोत्सव' के ग्रन्थकार श्री रामलाल गोस्वामी; व्रजवासी (मथुरा) थे। ये वैष्णव मत (माध्व संप्रदाय) के आचार्य और संस्कृत तथा हिन्दी के सम्मानित

विद्वान् और लेखक रहे हैं। सं० १६२० वि० के लगभग वर्त्तमान।

३३—रामलालशरण वैद्य (२८)—जानकी कुंज (अयोध्या) वासी वैष्णव; नवोपलब्ध ग्रन्थकार। इनका ग्रंथ 'दृष्टान्तप्रबोधिका' है। ग्रन्थ में स्थान-स्थान पर प्रयुक्त 'रामचरन' (शब्द अथवा नाम) से प्रतीत होता है कि इस ग्रन्थ के ग्रंथकार और ग्रंथकार सं० ७ की टिप्पणी वाले ग्रन्थकार एक ही हैं। ग्रंथ का लिपिकाल सं० १८६६ वि० (सन् १८४२) है।

३४—रामवल्लभशरण (६०)—'प्रिया प्रीतम रहस्य' के रचयिता श्री स्वामी रामवल्लभ शरण जी नये मिले हैं। इनकी रचना में रचनाकाल अथवा लिपिकाल का उल्लेख नहीं हुआ है। ग्रन्थ अप्रकाशित है।

३५—लालचदास (१०५, १०६)—बरेली-निवासी; जाति के हलवाई; भागवत पुराण (दशम स्कंध) के अनुवादक; हरि-चरित्र के ग्रन्थकार सं० १५२७ वि० (सन् १४७० ई०) के लगभग वर्त्तमान। इनकी 'शिवसिंह सरोज' और 'मिश्रबन्धु-विनोद' में मात्र नाम-चर्चा। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को भी खोज में इनके हस्तलेख मिले हैं। दे०—खो० वि० १६२३–२५, सं० २३८, खो० वि० १६२६–२८, सं० २६१। विहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना को इनके चार हस्तलेख प्राप्त हुए हैं। दे० परिषद्-विवरण का खंड—१, ग्रं० सं० १। इनके संबंध में पूरा अनुसंधान अभी नहीं हुआ है।

३६—विद्यारण्यतीर्थ (३१, ५०)—'पञ्चकोश-सुधा' और 'युगल-सुधा' के ग्रन्थकार श्री विद्यारण्यतीर्थ जी 'विद्यारण्य स्वामी' नाम से भी खोज में मिले हैं। इनकी रचना अप्रकाशित है। ग्रन्थकार का समय विक्रमी सं० १८६८ (सन् १८४१ ई०) है।

३७—सरदार कवि-(६८)—ललितपुर (झाँसी) निवासी; काशी-नरेश महाराजा ईश्वरी प्रसाद के आश्रित; सं० १९०३ के लगभग वर्त्तमान; अन्य ८ (आठ) ग्रंथों के प्रणेता। इनके अन्य ग्रंथ नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में मिले हैं।

३८—सुखलाल (१०३)—'राधा सुधानिधि' के रचयिता अथवा रूपान्तरकार श्री सुखलाल जी खोज में नये हैं। इन्होंने 'महाभारत' का हिन्दी पद्यानुवाद किया है। जिसकी खंडित प्रति परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। इन्होंने अपनी रचना में अपने को प्रसिद्ध कवि हितहरिवंश जी का शिष्य अथवा उनके मन्दिर का पुजारी बताया है। ग्रन्थ में रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। इनकी चर्चा अन्य खोज-विवरणिकाओं में भी संभवतः नहीं है। विशेष सूचना के लिए देखिए ग्रं०सं० १०३ की टिप्पणी।

३९—सुन्दरदास (७५, ७६)—दादू जी के शिष्य; शाह परमानन्द के पुत्र;खंडेलवाल वैश्य; द्यौसा (जयपुर-राज्य) निवासी श्री सुन्दर दासजी प्रसिद्ध कवि और ग्रन्थकार हैं। इनका जन्मकाल सं० १६५३ वि० है और मृत्यु सं० १७४६ वि० में हुआ। 'सवैया' के अतिरिक्त इनके द्वारा रचित अन्य २० (बीस) ग्रंथ नागरी-प्रचारिणी-सभा (काशी) को खोज में मिले हैं। प्रस्तुत संग्रह में इनके दो हस्तलेख हैं।

४०—सुन्दरलाल गोस्वामी (१०८, ११५, ११७, ११८, १२० और १२२) श्री गोस्वामी सुन्दरलालजी वैष्णव सिद्धान्त (माध्व

संप्रदाय) के आचार्य हो चुके हैं। प्रस्तुत संग्रह में इनके द्वारा रचित, सम्पादित अथवा अनूदित छः ग्रंथ हैं। ग्रंथों में रचनाकाल नहीं दिया हुआ है। उन्नीसवीं सदी के प्रारंभ में इनका स्थितिकाल माना गया है। इनकी कुछ रचनाएँ। प्रकाशित भी हुई हैं।

४१—सूरज दास (४७)—'रामजन्म' (कथा) के रचयिता श्री सूरजदास की रचना अप्रकाशित है। रचना से प्रतीत होता है कि इनकी साहित्य-भूमि विहार है। इनके ग्रन्थ 'रामजन्म' के आठ हस्त-लेख खोज में मिले हैं। इनकी एक और रचना 'एकादशी-माहात्म्य' नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में मिली है। दे० खो० वि० १६२३-२५ सं० ४१७; खो० वि० १६२६—२८ सं० ४७३ और दे०—विहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् की खोज-विवरणिका (ख० १) ग्रं० सं० ४५ (क)। इनके सम्बन्ध में अनुसंधान अभी नहीं हुआ है।

४२—सूरदास (३६, ६३, ८०, १००)—हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि; वल्लभ-संप्रदाय के वैष्णव भक्त और अष्टछाप के कवियों में एक; व्रज-निवासी; सं० १५४० से १६२० तक वर्त्तमान। इनके निम्नलिखित ग्रन्थ इस खोज में मिले हैं—

सूरसागर २ प्रतियाँ वि० सं० १६१३, सन् १८५७ ई०;

विनय पत्रिका स० १६२४ वि०

नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को इनके अन्य ग्रन्थ भी खोज में प्राप्त हुए हैं। 'सूर-सागर' का एक और हस्तलेख बिहार-राष्ट्र-भाषा-परिषद् (पटना) को, खोज में उपलब्ध हुआ है और वह परिषद् के संग्रहालय में सुरक्षित है जिसका लिपिकाल सं० १८२५ वि० है। देखिए-वि० रा०भा० प०—खोज-विवरणिका (खंड १)

४३—शिव प्रसाद (४, २६, ७२, ७३, ७७, ८३)—दरभंगा-राज्य के दीवान थे; जाति के ब्राह्मण; सं० १९४१ वि० के लगभग वर्त्तमान; राम-कथा के कवि। इनकी रचनाएँ अप्रकाशित हैं। प्रस्तुत संग्रह में 'सप्तछप्पै रामायण' और 'संक्षिप्त दोहावली रामायण' नामक इनके दो ग्रन्थ हैं। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को भी इनके हस्तलेख खोज में मिले हैं। दे०—खो-वि०—सं० १९००, ग्रं-सं०५१।

४४—शिवदीन कवि (६०)—नवोपलब्ध कवि श्री शिवदीन जी की रचना 'रामरत्नावली' इस खोज में नई है। ग्रन्थ की पंक्तियाँ अथवा कथा-वस्तु विशेष महत्त्व नहीं रखते हैं। ग्रंथ में रचनाकाल और लिपिकाल का उल्लेख नहीं है।

४५—श्रीभट्ट (५)—'आभास दोहा' के ग्रंथकार; निमादित्य के शिष्य; वृन्दावन-निवासी; सं० १६०१ के लगभग वर्त्तमान; ठाकुर जुगलकिशोर नामक किसी राजा के आश्रित कवि। इस संग्रह में इनकी एक रचना मिली है। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को भी इनका 'जुगलसत' नाम का हस्तलेख मिला है। दे० खो० वि० १९००, ग्रं० सं० ३६, ७५; खो० वि० सं० १९०६-८, सं० २३७। यह ग्रंथ परिषद् को भी खोज में प्राप्त हुआ है। दे० बि० रा० प० खोज-विवरणिका (खंड १) ग्रं० सं० ३७।

४६—हरदेव (४१)—श्री हरदेवजी 'पिंगलसार'के नवानुसंहित ग्रंथकार हैं। यह कोई विशिष्ट रचना नहीं प्रतीत होती है। ग्रंथ का लिपिकाल सं० १९१३ वि० (सन् १८५७ ई०) है। ये संभवतः नागपुर के रघुनाथराव के आश्रित थे। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को इनके द्वारा रचित 'नायिका० लक्षण' मिला है। दे०—खो० वि० १९०६—१९०८, ग्रं० सं० १७१।

४७—हलधरदास (२५)—'सुदामाचरित्र' के रचयिता श्री हलधरदासजी बिहार-प्रदेश के मुजफ्फरपुर जिलावासी थे। ये १६वीं सदी के प्रारम्भ में हुए थे, ऐसा प्रतीत होता है। उपलब्ध ग्रंथ की प्रति में रचनाकाल का संकेत संदिग्ध-सा है। ग्रन्थ अप्रकाशित है। कवि पर अभी अनुसंधान नहीं हुआ है।

४८—हरिराम (६६) —'श्रीनाथजी के मन्दिर की भावना' ग्रन्थ के रचयिता श्री हरिराम जी का यह ग्रंथ खोज में नया है। ग्रन्थ का लिपिकाल सं० १६७८ वि० (सन् १६२१ ई०) है। ग्रन्थ अप्रकाशित प्रतीत होता है। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को, खोज में इस नाम के अन्य अनेक कवि मिले हैं। सभा की निम्नलिखित खोज-विवरणिकाओं की टिप्पणी द्रष्टव्य है—खो० वि० १६३२–३४ ई०, सं० ८३; खो० वि० १६२६–१६३१ ई०, सं०१४० और १४४। और देखिए—नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) से प्रकाशित 'हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण' शीर्षक ग्रन्थ की पृष्ठ–सं० २६६ में 'हरिराय' और 'हरिराम' की टिप्पणी।

४६—हितहरिवंश (१२६)—राधावल्लभी (वैष्णव) संप्रदाय के संस्थापक; हिन्दी के प्रसिद्ध भक्त कवि; सं० १५८०–१६२४ तक वर्त्तमान; वृंदावन-निवासी; संस्कृत और हिन्दी के ज्ञाता। इनका 'चौरासीपद' नामक ग्रन्थ प्रसिद्ध है। इस खोज में उपलब्ध 'हितवाणी' ग्रन्थ नया है, किन्तु प्रतीत होता है, यह 'चौरासी पद' का ही खंडित अंश है। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) की खोज-विवरणिकाओं में दे०—खो० १६०० सं ८; १६०६–८, सं० १७४; १६०६–११, सं० १२०; १६२३–२५ सं० १६८; १६२६––२८, सं० १७६; १६२६—३१ सं० १५५।

श्री मन्नूलाल पुस्तकालय (गया) में संगृहीत प्राचीन
हस्त-लिखित पोथियों का विवरण *
संपादक--डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री, एम्० ए०, पी० एच्० डी०

(१)---अन्योक्ति कल्पद्रुम---ग्रंथकर्ता---दीनदयाल गिरि। ग्रंथ-लेखक---जुगल किसोर। अवस्था---प्राचीन देशी कागज। पृष्ठ-सं---३५। आकार---१३"×६३/४"। प्रतिपृष्ठ पंक्ति लगभग---२०। लिपि---नागरी। रचनाकाल---१९१७ वि० माघ, शुक्ल वसंत पंचमी, रविवार। लेखनकाल---संवत् १९२२, भाद्र, कृष्ण ७, रविवार,। यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय गया में है। पुस्तकालय की क्रम- संख्या क--१ है।

प्रारंभ की पंक्तियाँ---"ॐ श्री गणेशाय नमः। श्री राधावल्लभाय नमः।
अथ अन्योक्ति कल्पद्रुम ग्रंथो लिख्यते॥ कुंडलिया छंद॥
बंदो मंगल मै विमल व्रज सेवक सुष दैन॥
जो करिवर मुष मूक ही गिरा नचाव सुबैंन॥
गिरा नचाव सुबैंन सिद्धि दायक सव लायक॥
पसुपति प्रिय हिय वोध करन निरजरगन नायक॥
वरनै दीनदयाल दरसि पद द्वंद अनंदौं॥ लंवोदर मुदकंद देव दामोदर वंदौं॥१॥
इति श्लेषमय मंगलम्॥ अथ कल्पद्रुमाऽन्योक्ति॥
दानी हो सव जगत मै एके तुममंदार॥
दारन दुष दुषियांन के अभिमत फल दातार॥
अभिमत फलदार देवगन सेवे हित सों॥ सकल संपदा सोह छोह किन राषत चित्त सों॥
वरनै दीनदयाल छांहं तव सुषद वषानी॥
ताहि सेइ जौं दीन रहै दुष तौ कस दांनी॥२॥

मध्य की पंक्तियाँ---"(१७ पृ०) अथ कोकिलाऽन्योक्ति॥ कोकिल लोचन ललित करि करियन कोप विषाद॥ भयो कि मूढ़ द्रपोन जो सुनि के पंचमनाद॥
सुनि कै पंचमनाद द्रवैसुर चतुर विवेकी॥ तेंन द्रवै जे हि लगै सुषद वानी कौवेकी॥
वरनै दीनदयाल लगे प्रीय साप निको विल॥ कहा करेंते रंग भौंन सुनि एहे कोकिल॥५४॥"

---

* बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के तत्वावधान में हस्त-लिखित पोथियों की खोज की योजना स्वीकृत हो चुकी है। इस योजना के अनुसार खोज करने के लिए श्री राम-नारायण शास्त्री नियुक्त हुए हैं। खोज और सम्पादन डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री की देखरेख में होता है। इस अंक में खोज में प्राप्त कुछ पोथियों के विवरण दिये गए हैं। ये विवरण क्रमशः अन्य अंकों में भी प्रकाशित होंगे। ---सपादक

अन्त की पंक्तियाँ—"दोहा ॥ पंचक यह है प्रेम को रंचक चित जो देइ ॥ छल वंचक वंचेन तेहि दीनदयाल जु सेइ ॥७५॥ ग्रंथान्ते मंगलम् ॥ मेटन हारे विघनके विघन विनायक नाम ॥ रिधि सिधि विद्या उदर तें लंवोदर अभिराम ॥ लंवोदर अभिराम सकल सुभगुण हिय धारे ॥ और गहन के हेत देत मनु दंत पसारे ॥ वरनै दीनदयाल भरयौ अजहूं लो पेटन ॥ वक्र तुंड करि काह चहत ब्रह्मंड समेटन ॥७६॥ यह अन्योक्ति सुकल्प द्रुम साषा वेद वषानि ॥ विरचीदीनदयालगिरिकवि दुजवर सुषदानि ॥७७॥ कुंडलिका मु सवनाक्षरी सुषद सुदोहावृत्त ॥ हरे सवैया मालिनी मिलि पंचामृत मित्त ॥७८॥ यहकल्पद्रुमग्रंथमैमधुर छंद सुचि पंच ॥ पंचामृत हिय पान करि जडता रहेन रंच ॥७९॥ कर छिति निधि ससि साल मै माघ मास सित पक्ष तिथि वसंत जुत पंचमी रविवासर सुभ स्वक्ष ॥८०॥ सोभित तेहि औसर विषे वसि कासी सुषधाम विरच्यौ दीनदयाल गिरि कल्पद्रुम अभिराम ॥८१॥ अभिमत फल दातार यह विविधि अर्थ को देत ॥ ज्यों धुनि गुनि कवि मुदित मन पठिहै प्रेमसमेत ॥८२॥ उपालंभ अरुनीति जुत प्रिति रसहुं सुविराग ॥ विविधि भांति सुमनसलसैं यामें सुमनसराग ॥८३॥ सोभित अति मति थल सुषद सुमन सहित सबकाल ॥ अरच्यौ दीनदयाल गिरि वनमालिहि सुरसाल ॥८४॥ इत्यन्योक्ति कल्पद्रुम सम्पूर्नम् ॥"

विषय—**अन्योक्तियाँ** ।

टिप्पणी—ग्रंथ के प्रारंभ में, पद्य में—'अभिमत फलदार देवगन सेवे' अशुद्ध प्रतीत होता है। वह 'फलदातार देव' होना चाहिए। ग्रंथ—सं० २ में ऐसा ही है।

(२)—**अन्योक्ति कल्पद्रुम**—ग्रंथकर्ता—दीनदयाल गिरि। ग्रंथ-लेखक—जुगल किशोर लाल। अवस्था—अच्छी है। पृष्ठ-सं०—२३। आकार—१२$\frac{3}{4}$" × ९$\frac{1}{2}$"। प्रतिपृष्ठ पंक्ति लगभग—४०। लिपि—नागरी। रचनाकाल—१९१२, वि० माघ शुक्ल, वसंत पंचमी, रविवार। लिपिकाल 'संवत् १९२७ मार्ग मास, सित पक्ष, ८, बुधवार, ता० २३ शन् १२७८' शाल ॥ यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में है। पुस्तक की क्रम-संख्या क-२ है।

प्रारंभ की पंक्तियाँ—"श्री गणेशाय नमः ॥ कुंडलिया छंद वंदौ मंगल मै विमल व्रज सेवक सुषदैन ॥ जो करि वर मुख मूकहीं गिरा न चाव सुषैन ॥ गिरा न चाव सुखैन सिद्धि दायक सव लायक ॥ पसुपति पृय हिय वोव करन निरजरगन नायक ॥ वरनै दीनदयाल दरसि पद द्वंद अनंदौं ॥ लंवोदर मुद कंद देव दामोदर वंदौ ॥१॥ इति श्लेपमय मंगलम् ॥ अथ कल्पद्रुमान्योक्तिः ॥ दानी हो सव जगत मै एंके तुम मंदार ॥ दारण दुष

दुषियांन के अभिमत फल दातार।। अभिमंत फलदातार देवगण सेवे हित सों।। सकल संपदा सोह छोह किन रापत चित्त सों। वरनै दीनदयाल छांह तव सुपद वषानी।। ताहि सेइ जौं दीन रहे दुषती कस दानी।।२।।"

मध्य०—"अथ चातकाऽन्योक्तिः—लागे सर सरवर परयौ करी चोंच घन ओर।। धनि धनि चातक प्रेंम तो पन पाल्यौ वर जोर पन पाल्यौ वरजोर प्रान परजंत निवाह्यौ।। कूपन दीनदताल सिंधुजल ऐकन चाह्यौ। बरनें दीनदयाल स्वाति विन सवही त्यागे।। रही जनम भरि बूंद आस अजहूं सर लागे।।"

अन्त०—।।२६०।। "दोहा—यह न्योक्ति सुकल्पद्रुम साषा वेद बषानि।। विरची दीनदयाल गिरि कवि दुजवर सुषदानि। कुंडलिका सुघनाक्षरी सुषद सुदोहावृत्त ।। हरे सवैया मालिनी मिलि पंचामृत मित्त ।। यह कल्पद्रुम ग्रंथ मै मधुर छंद सुचि पंच।। पंचामृत हिय पान करी जडता रहे न रंच।। कर छिति निधि ससिसाल मैं माघ मांस सित पक्ष। तिथि वसंत जुत पंचमी रविवासर सुभ स्वक्ष।। सोभित तेहि औसर विपैवसि कासी सुषधाम।। बिरच्यौ दीनदयाल गिरि कल्पद्रुम अभिराम ।। अभिमत फल दातार यह विविध अर्थ को देत।। ज्यों धुनि गुनि कवि मुदित मन पठिहैं प्रेंम समेत ।। उपालंभ अरु नीति जुत प्रीति रसहुं सुविराग ।। विविध भांति सुमनसलसै यामे सुमनसराग।। सोभित अति मति थलसु यह सुमन सहित सवकाल।। अरच्यौ दीनदयाल गिरि वनमालिहि सुरसाल।।२६१।।"

विषय—अन्योक्तियाँ ।

विशेष टिप्पणी—इस ग्रंथ के लिपिकार श्री जुगल किशोर जी ने ग्रंथ के अंत में अपना परिचय यों दिया है—"हस्ताक्षर जुगल किशोर लाल वासिंदे दादपुर प्रगन्ने पचरूषी जिले गया।। पोथी लिषाया वाबू सीताराम मालिक मोकररीदार मौजे वकसंडा जिले सदर प्रगने सदर।।"

३—अनुराग बाग—ग्रंथकर्ता—दीनदयाल गिरि। लिपिकार—जुगल किशोर लाल। अवस्था—अच्छी, प्रचीन कागज। पृष्ठ-सं०—३५। आकार—१२$\frac{1}{2}$" × ९$\frac{1}{4}$"। प्रतिपृष्ठ पंक्ति—लगभग ३७। लिपि—नागरी। रचनाकाल—१८८८ सं० मधुमास, ९, भौमवार। लिपिकाल—ता० १५ माह फागुन, सन १२७८ शाल। यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में है। पुस्तकालय की क्र० सं० क-३ है।

प्रारंभ०—"श्री गणेशाय नमः दोहा—श्री पसुपति प्रिय पद पदुम प्रनवों परमपुनीत।। मंगल रूप अनूप छबि कवि बरदानि सुगीत।।१।।

कवित्त—बिनसै विघिनिवृंद द्वंद पद बंदत हीं मानि अरबिंद जे मिलिंद परसत हैं।। ध्यावत जोगींद गुन गावत कबिंद जासु पावत पराग अनुराग सरसत हैं।।१।।

भागे डर भाग अंग राग देपि दीनद्याल पूरण प्रताप पाप पुंज धरसत है ।।
ज्योंज्योंहीपिनाकीतनैवक्र तुंड झांकिपरेत्योंत्योंकविताके झुंडवांके दरसत है ।।२।।"

मध्य०—"अथ मधुपुरी गमन समय वात्सल्यरस—यसोदावाक् सरणी कवित्त—
प्रान के अधारे मेरे वारे एष धारै चहै भूप के अषारे जहाँ भारे सजे सूरमै ।।
पीर बढी है सरीर बूडति वियोग नीर धीर धरों कैसे करो आषिन के दूरमै ।।
डारो वरू कंस कारागार में जंजीर भरि एरी वीर जाँउ जरि धनधाम धूरमें।।
जो पै ऐ कन्हैया वलभया दोऊलाल मेरे षेले कहिमैया वैन नैन के हजूर मै ।।"

अन्त०—"यह अनुराग सुवाग मै सुचि पंचम केदार बिरच्यौं दीनदयाल गिरि वनमाली सुबिहार ।। सुषद देहली पै जहां वसत विनायक देव पश्चिम द्वार उदार है कासी को सुरसेव ।। तह निवास गणपति कृपा वूझि परचौं कवि पंथ दीनदयाल गिरिसपद वंदि करयौ यह ग्रंथ ।। मुनि करनी सुरसरि सरन परि करि कियो प्रकास । गति सुरनी वरनी कविन महिमा धरनी जासु । वसु वसु वसु ससि साल मै रितु वसंत मधुमास राम जनम तिथि भौंम दिन भयो सुवाग विकास ।। सुमन सहित यह वाग है यामे संत वसंत । सुष दायक सब काल मै दुज नायक विलसंत । जो कहुं अंग विहीन हूं होय कवित वृत दोष । छमियो सो अपराध मम समरथ कवि तजि रोष ।। रोहिनीय मुषरद मवा हस्तकमल से जासु । अनुराधा जाके फिरैं श्रवण करो गुण तासु ।।"

विषय—ऋतुओं के वर्णन के साथ ही उद्धव–गोपी-संवाद है। पृ० ९ के पद १०६ में एक खंडिता कृष्ण के प्रति कहती है :—
"आए हो सकारे स्याम स्रमित हमारे धाम प्यारे अभिराम भौंन भीतर पधारिऐ
कीजिए सयन सेज सारस नयन यह मंद मंद गौव पैंग चंद कोरि वारिऐ ।।
निगुण कहायो किन विगुण धरे हो हार वेद पर पुरुष वषानत विचारिऐ
व्रज के विहारी तुम रसिक अपूरब हो जांउवलिहारी लाल मुकुर निहारिऐ ।।"

४—सप्त छप्पै रामायण—ग्रंथकर्त्ता—शिव प्रसाद। लिपिकार—शिव प्रसाद। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ-सं०—४। आकार—५" × ८३/४"। प्रतिपृष्ठ पंक्ति लगभग—१२। लिपि—नागरी। रचनाकाल—१९४१ सं० माघ, शुक्ल ५ वुधवार। लिपिकाल—सं० १९४६ का० शुक्ल १० सनिवार। यह ग्रंथ मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पुस्तक की क्र० सं० क-४ है।

प्रारंभ०—"श्री गणेशाय नमः। श्री हरये नमः। श्री रामाय नमः। छप्पै
अवध जन्म लै वटी राम जानकी सुशीला ।। पितु आयसु मुनि वेष जाइ वन कृत वहु लीला ।। पृया हरग पुनि गृद्ध मग्ग सुग्रीव राज पुनि ।
हनुमतादि गण गमन दहन लंका सिय सुधि सुनि ।।
वर वारिधि बांधि सकीश दल। उतरिं पार परिवार सह ।।
रण शिव प्रसाद रावण हत्यौ रामायण वुध जानु यह ।

अथ सप्त छप्पै रामायणः ॥ दोहा ॥ श्री गुरु गणपति शरण गहि गिरा गौरि गौरीश ॥ कहौं कछुक सिय राम यश . . .।" (इसके वाद फटा हुआ है।)

अन्त०—"दोहा ॥ इन्दु वेद ग्रह शुक्र दृग शुभ सम्वत परिमानु ॥
माघ शुक्ल तिथि पंचमी वुधवासर वुध जानु ॥
इति श्री सप्त छप्पै रामायण शिव प्रसाद कृत संपूणम् ॥"

विषय—रामचन्द्रजी के जीवन की विशेष घटनाओं के आधार पर संक्षिप्त रचना की गई है।

टिप्पणी—प्रारंभ का पद अप्ट छप्पै रामायण के रूप में है। उसके वाद के पद सप्त छप्पै में सम्पूर्ण है। ग्रंथ स्थान-स्थान पर फट गया है। फटे अंश पर कागज साट दिया गया है। अतः पढ़ने में असुविधा होती है। ग्रंथकारने अंत में लिखा है—"हस्ताक्षर शिवप्रसाद वावू गंगा विष्नु हेतु लिखित्वा शुभ सं० १९४६ कार्त्तिक शुक्ल १० सनि ॥"

५—**आभास दोहा**—ग्रंथकर्त्ता—श्री भट्ट। लिपिकार—. . . ×। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ-सं० ७६। आकार—७" × ५"। प्र० पृ० पं० लगभग—१६। लिपि—नागरी। रचनाकाल—. . . ×। लेखनकाल—. . . ×। यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० सं० क—५ है।

प्रारंभ०—"श्री गणेशाय नमः ॥ आभास दोहा ॥ चरण कमल की दीजिये सेवा सहज रसाल। घर जायो मोहि जानिकै चेरो मदन गोपाल ॥१॥
पद इकताला ॥ मदन गोपाल शरण तेरी आयो ॥
चरण की सेवा दीजै चेरौ करि राखौं घर जायो ॥ टेक ॥
धनि धनि मात पिता सुत वन्धू धनि जननी निज गोद खिलायो ॥
धनि धनि चरण चलत तीरथ को धनि गुरु जिन हरिनाम सुनायो ॥१॥
जे नर विमुख भये गोविंद से जनम अनेक महा दुख पायौ ॥
श्री भटके प्रभु दियौ है अभय पद जम डरप्यौ जव दास कहायो ॥२॥"

मध्य०—"आभास दोहा ॥ जमुना जल मे निरख ही झुकी चंचल निज छांहि ॥
दोउ जन ठाढे लपटि उर एकहि खुहिया माहि ॥१॥
पद इकताला—ठाढे दोउ एक खुहिया माहीं ॥
वंसीवट तट जमुना में निरखत चंचल छाहीं ॥
टेक ॥ कारी कमरिया अंतर दंपति स्यामा स्याम लपटाहीं ॥
श्री भट कृष्ण कूट मै कंचन जल वरषत झलंकाहीं ॥१॥९॥९०॥"

अन्त०—"आभास दोहा ॥ तेहि छन की वलि जाउं सखि जिहि छन भावरि लेत ॥
लाल विहारी सांवरे गौर विहारिनि हेत ॥
पदताल चपक—जै सिय विहारिनि गौर विहारीलाल सांवरे ॥
तेहि छन की वलि जाउं सखी री परत जेहि छन भांवरे ॥

टेक।। कंचन मनि मरकत मनि प्रगटी वरसाने नंद गांवरे।।
विधि वा रचित न होहि जै श्री भट राधा मोहन नांवरे ।।१००।। संपूर्णम् ।।"

विषय—यह ग्रंथ राधा, कृष्ण और गोपियों के परस्पर हाव-भाव और कथनोपकथन के आधार पर एक मुक्तक रचना है। एक-एक दोहा के वाद गेय पद है। गेय पद का पुनः टेक है। गेय पद दोहे के आधार पर ही है। इस ग्रंथ में साहित्य और संगीत दोनों हैं। प्रत्येक टेक में 'श्री भट' का नाम आया है।

टिप्पणी—१—यद्यपि ग्रंथ के प्रारंभ और अंत में ग्रंथकार ने नाम-निर्देश नहीं किया है तथापि यत्र-तत्र सभी पदों में 'श्री भट' नाम आया है। पृ० सं० ६५ में भट केशव प्रसाद का नाम—"नित अभंग केलि हित हिय मे राग ।। फाग खेलि चलीं गावत वाद।। देखत श्री भट केशव प्रसाद"।। कई स्थानों पर 'जुग किशोर' और 'जुगलाल' नाम भी आया है। प्रतीत होता है कोई जुगल किशोर ठाकुर थे। श्री भट कवि, उनके आश्रित थे। पृ० ५ में—"आभास दोहा।। जनम जनम जिनके सदा हम चाकर निशि भोर।। त्रिभुवन पोषक सुधाकर ठाकुर जुगुल किशोर।।७।। पद इकताला।। जुगुल किशोर हमारे ठाकुर ।। सदा सर्वदा हम जिनके हैं जनम जनम घर जाये चाकर ।। टेक ।। चूक परै परिहरै न कवहूं सवही भांति दया के आगर।। जै श्री भट प्रगट त्रिभुवन में प्रणत निपोषक परम सुधाकर ।।"

२—ग्रंथ का नाम यद्यपि 'आभास दोहा' है। किन्तु सर्वत्र साधारण दोहा आया है अतः यह नाम समुचित नहीं प्रतीत होता। स्थान-स्थान पर प्रसंग-समाप्ति के वाद लिखा है—"इति श्री आदि वानी जुगल सत वृजलीला पद संपूर्णम् ।। शुभम् ।।" (पृ० २३ में देखिये) ।।

३—ग्रंथ में सवसे पूर्व दूसरी लिपि में लिखा है—"वावू माधो परसाद साहेव का पुस्तक है साकिन मिरजापुर, हाल मोकामी वनारस, महल्ला ज्ञानवापी थाने दसासमेध, मी० वैसाख, वदी १ संमत १९५३।"

६—**अष्टयाम**—ग्रंथकर्ता—देव कवि। लेखक—....×। अवस्था—अच्छी। कागज—देशी और प्राचीन है। पृष्ठ-सं०—१३। आकार—८$\frac{१}{६}$"×५$\frac{१}{५}$"। प्र० पृ०पं० लगभग–३७। लिपि—नागरी। रचनाकाल–..×। लिपिकाल....×। ग्रंथ मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० सं० क-७ है।

प्रारंभ०—"श्री गणेशाय नमः।। अथ अष्ट जाम लिख्यते ।। यथा सवैया ।।
सराहैं जिन्हें सुर सिद्ध समाज जिन्है लषि लाज मरै रति मार ।।
महा मुद मंगल संग लशैं। विलशैं भव भार निवार निहार।।
विराजै त्रिलोक लोनाई के वोक मुनीस मनोहर नूपुर सार।।
सदा दुलही वृषभानु सुता दिन दूलह श्री वृजराज कुमार।।१।।

दोहा—दम्पतीन के देव कवि वरणत विविधि विलास ॥
आठ पहर चौसठ घरी॥ पूरण प्रेम प्रकास ॥२॥
प्रथम जाम पहिली घरी। पहिले सूर उदोत।
सकुचि सेज दम्पति तज्यो। वोलत हसत कपोत ॥३॥"

अन्त०—"कवित्त—जाको मुष देषति ही देषत लहत सुख जाहि देषि देपन की साधना वुझाए री। तासो कोन्ही तोपी डोठि पीठि दीन्ही भौहें तानि याजी की महा कवानि देव कहा पाए री। कहा जानो का सो कहाँ कौन हरि मेटी गति न्यारे कीन्हो प्रानपति प्यारो जो कन्हाई री॥ कहा कहो मानी मान कीन्हो मन भावन ते सो मैं न जानो मेरो मन मेरो दुखदाईरी ९६॥"

विषय—इस ग्रंथ में सवैया, दोहा और कवित्त में विषयका वर्णन है। राधा-कृष्ण को प्रतीक मान कर आश्रित राजा वृजराज कुमार के जीवन का भी वर्णन है। ग्रंथ में आठ पहर को ध्यान में रख कर ही कविता की गई है। पुस्तक में ब्रजभाषा की शैली है। खड़ी वोली भी कहीं-कहीं स्पष्ट है।

टिप्पणी—ग्रंथ प्रारंभ होने के पूर्व दो पृष्ठों का श्री वलभद्र कृत "नख-शिख-वर्णन" दे दिया गया है। इसमें केश, पाटी, माँग, वेणी, सिंदूर भौंह और पर्यंक का शृंगार-वर्णन है। ग्रंथ की लिखावट परिष्कृत है।

७—अष्टयाम—ग्रंथकर्त्ता—देव कवि। लेखक—करण सिंह राजपूत। पुस्तक का-कुछ भाग नष्ट हो गया है। जिल्द वाँधने के समय भी गड़वड़ी हो गई है। पृष्ठ-सं०-४। आकार—९½"×५"। प्र० पृ० पं० लगभग—१७ लिपि—नागरी। रचनाकाल.... ×। लेखनकाल— सं० १८९२, ज्येष्ठ कृ० ११ शनिवार। यह ग्रंथ मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० सं० क—८ है।

प्रारंभ०—"श्री गणेशाय नमः श्री महादेवाय नमः। श्री गंगाजी शाहाय नमः। श्री लक्ष्माय नमः। सराहै सवै सुर सिवि समाज जिन्हें लखि लाज मरै रति मार महा मुद मंगल संगलसै विलसै भुव-मार निवारन हार विराजै त्रिलोक लोनाइ के वोक सुदेव मनोहर रूप अपार।
सदा दुलही वृष भानु सुता दिन दूलहः श्री वृजराज कुमार ॥१॥

दोहा—दंपतीन के देव कवि वरनत विविधि विलास॥ आठ पहर चौसठ घरी पुरन प्रेम प्रकास॥२॥ प्रथम जाम पहिली घरी पहिले सूर उदोत।
सकुचि सेज दंपति तजौ वोलत लसत कपोत ॥३॥"

अंत०—"दोहा॥ आठ पहर चौसठ घरी वरनि कहि कवि देव॥ कंहत सुनत अरु पठत जे वड़े भाग के तेव॥१३०॥ इति श्री कवि देव विरचितायां अष्टयाम समाप्तम्।"

विषय—पूर्व ग्रंथवत् है। इसकी लिखावट उससे थोड़ी परिष्कृत है।

टिप्पणी—यह ग्रंथ विशाल प्रतीत होता है। इसका वड़ा भाग इसमें नहीं है। पूरा ग्रंथ १३० दोहे में है। प्रारंभ के २५ दोहे हैं। अन्त के १२६ से

१३० दोहे ग्रंथ-समाप्ति तक हैं। बीच के १०१ दोहे नहीं हैं। ग्रंथ के जिल्द बँधते समय भी ग्रंथ की समाप्ति २२ दोहे के बाद १२६ से १३० दोहे तक कर दिया है उसके बाद २३ से २५ दोहे तक दिया है। एक पृष्ठ आगे-पीछे हो गया है।

८—**आनन्द रस कल्पतरु**—ग्रंथकार—राम प्रसाद। लेखक—स्वयं ग्रंथकार। अवस्था—अच्छी देशी कागज। पृष्ठ-सं०—८६। आकार—८″×६″। प्र० पृ० पं० लगभग—३७। लिपि—नागरी। रचनाकाल—१८७७ सं० का० शु० ८ रविवार। लेखनकाल—...×। यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० सं० क—९ है।

प्रारंभ०—"श्री गणेशाय नमः॥ अथ ग्रंथ आनन्द रस कल्पतरु लिख्यते ॥
दोहा॥ जय जय जयति गणेश तव पुन्य पयोधि उदार।
जाचक अभिमत दान प्रद सद आनन्द अगार॥१॥

दोहा॥ आश्रित राम प्रसाद की यह विनती शुनि लेहु।
नूतन ग्रंथ अनन्दमय रचत वुद्धि वर देहु॥"

मध्य०—पृ०४३—"अथउद्वेगलक्षणयथा—दोहा॥ व्याकुलता अति विरह तेसरसै रुचै न गेह॥
ताहि कहत उद्वेग है कोविद सहित सनेह॥ ३४॥
अथ नायिका को उद्वेग यथा सवैया मत्तगयन्द॥ औचक चाहि गई जव तैं मनमोहन मूरति रावरी नीकी॥ दौरति है तव तैं विरहाकुल कुन्दन सी दुति ह्वै रही फीकी॥ आंगन मै षिन भौंन अटा छन सेज महा दुष दाई निजी की॥ वेतन तीर के पीर नीतें भई अैसी दशा वृष-भान लली की॥

अथ नायक को उद्वेग यथा दोहा॥ प्यारी तोहि विलोकिगे जव तें मोहनलाल
तव तें कछु मन सोहात है धावत विरह विहाल॥१॥"

अन्त०—"दोहा॥ जे ते हैं ह्वै हैं जिते। कवि कोविद गुन मान॥
रस ग्याता रस भोगता सव विधि चतुर सुजान॥१॥
तिन सौं यह विनती करत कवि प्रशाद कर जोरी॥
अकथनीय वरनन कियो छमव चूक सव मोरि॥२॥
हैं कवि कौन प्रशाद यह जानो चाहैं जोइ॥
छन्द रूप घन अक्षरी नीकैं वांचै सोइ॥३॥
अंतवरन कवित्त को लैउवरो तजि देइ॥
नाम जाति वंशावरी पुर परगनय ठिलेइ॥४॥
राम भक्ति रसमय सुषद पा कवित्त को अर्थ॥
अंतर वरन सुचित्र ह जानत शकल समर्थ॥१॥
संवत रिषि स्वर सिद्धि ससि १८७७ मास निदाघ उदार॥
राज रजायसु पाइकै लियो ग्रंथ अवतार॥२॥

संवत दिन मुनि नाग महि १८७७ कार्तिक मास सुपंथ ॥
शुक्ल अष्टमी वार रवि भो संपूरन ग्रंथ ॥३॥ इति"

विषय—इस ग्रंथ में रस, नायक, नायिका तथा अनुभाव, संचारी भाव आदि के सोदाहरण लक्षण दिये हुए हैं। ग्रंथ में विशेषतः नायक को स्थान दिया गया है। अन्य ग्रंथकार अधिकतर नायक से नायिका को अधिक महत्व देते हैं। यह ग्रंथकार और इसके राजा को अच्छा नहीं मालूम होता, अतएव इसकी रचना करनी पड़ी है। जैसा कि ग्रंथकार ने ग्रंथ के प्रारंभ में कहा है :—

दोहा—"सम्वत दिन मुनि नाग महि ज्येष्ठ कृष्ण शुभ पाष।
परिवा तिथि कवि दिवस तिन कियो ग्रंथ अभिलाष ॥१॥
सकल सभा जुत मुदित मन सीस महल सुख पाइ॥
वैठे कवि कोविद सवै लीन्हे निकट वोलाय ॥१३॥
सादर सव सो वचन यह वोले श्री महराज ।
नयो ग्रंथ रस कल्पतरु रच्यो चही सुख साज ॥१७॥
आश्रित राम प्रसाद सुनी भूपति वचन विनीति।
विनय कियो केहि भांति सो होय ग्रंथ की रीति ॥१८॥
श्री श्री श्री आनन्द निधि श्री आनन्द किशोर ।
विहित वचन वोले वहुरि देखि दया दृग कोर ॥१९॥
जेते कवि रस ग्रंथ कृत प्रथम वचन यह चाह।
होत नायिका नायकहि आलंवित शृंगार ॥२०॥
तातें अधिकारी दोउ सम रस सम सुख अैन।
तिय विनु पियहि न चैन हय पिय विनु तियहि न चैन॥२१॥
सव कवि वरनत नायिका वहु विधि सहित सनेह ।
नायक वहु वरनै नही यह गुनि मन संदेह ॥२२॥
कहे भेद करि ग्रंथ मे जितने तिय के जोग। तितने नायक होत है महि वरने कवि लोग। तेहि ते जस वहु नायिका वरने परम प्रवीन। कहहु नायिका तै सियै विरचि कवित्त नवीन। वही नाम लक्षण वही नायक मै दरसाय । सजहु कन्त प्रति नायिकहि नूतन ग्रंथ वनाय ॥२४॥
राज रजाएसु शीस धरि आश्रित राम प्रसाद। रचत ग्रंथ रस कल्पतरु दायक अति अहलाद। रस ग्याता रस भोगता कवि कोविद गुण मान आश्रित राम प्रसाद कृत सोधव जानि अजान ॥२६॥"

टिप्पणी—१—ग्रंथकर्ता विहार प्रान्त के चम्पारण जिले के वेतिया राज के राजा आनन्द किशोर के यहाँ रहते थे। कवि ने लिखा है :—

दोहा—"तिलक सकल सूवा निको सूवा वृहद विहार।
प्रगट मझौवा परगनो चंपारन सरकार ॥३४॥

तहाँ बेतिया नगर वर विदित राज अस्थान।
सुखी वर्सहि चारो वरन यथा योग्य धनमान ॥५॥"

इसके वाद वड़े ही अच्छे शव्दों में चारो वर्ण के कार्यों तथा उनकी स्थिति का वर्णन किया है। उसके वाद—

"अथ विमल राजवंश वर्णन कवित्त सुघनाक्षरी ॥ स्वस्ति श्री श्री श्री श्री श्री नृप मणि महाराज उदित प्रताप जिन्है जानत जहाँ न हैं॥ ज्ञानमान साहसी सुजान उग्र सेनि सिंह ताके गज साहि भये जीत्यो जिन दानु है॥ फैलि रही कीरति चहूंघों चन्द्र चांदनी सी जाके गुन आजु हूं लो गावैं गुन मानु हैं॥ शाके वन्त भये ताके भूपति दिलीप साहि सुजस समूह जाकी दशहु दिशानु हैं ॥१०॥"

छप्प—"प्रगट भये ध्रुव साहि नृपति तिनके सुखकारी ॥
देग तेग में पूर प्रवल जिन शत्रु संघारी ॥
जुगल किशोर महीप भये तिनके गुन आगर॥
तिनके वीर किशोर सील सागर नय नागर ॥
जग विदित जासु जस कल्पतरु दायक वांछित अति अमल॥
सुत जुगल प्रगट तिनके भये नृपति शिरोमणि कुल कमल ॥११॥

दोहा—श्री श्री श्री नृप मुकुट मणि महाराज शिर मौर॥
श्री आनन्द किशोर श्री वावू नवल किशोर ॥१३॥"

२—इस ग्रंथ में चंपारण जिले की विहारी वोली के भी शव्द हैं। संवोधन के लिए 'दई मारी' शव्द पृष्ठ ६७, घनाक्षरी १८ में है। एक स्थान पर 'फुरति' शव्द आया है। 'वेतन-तीर' कामदेव के वाण के लिए प्रयुक्त हुआ है। इसी प्रकार अनेक शव्द हैं। 'धूमधार' भी है।

९—**आलंवनि विभाव**—ग्रंथकार—दिनेशात्मज वैजनाथ सुकवि। लेखक—...×। अवस्था—प्राचीन, नीले कागज पर लिखा है। पृष्ठ-सं०—२। आकार—८"×५"। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। लिपि—नागरी। रचनाकाल—...×। लेखनकाल—......×। यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-१० है।

प्रारंभ०—"श्री गणेशाय नमः। सिषवत कत जोग ऊवो विरहिन गोपिन सन॥
सीतल मंद सुगंधित वात ॥ कुसुमित कुसुम अनेक लपात॥
सुवेलिन ते जनु वरसत आगि॥ विरहिनि वाम वचत नहि भागि।
चैत माधव विन ॥१॥"

अंत०—"वैजनाथ जेहि नाथ अगार। भावत ताहि संजोग शींगार॥
सो गावत यह वारह मास ॥ पावत निसि दिन परम सुपास॥
संग भामिनी को ॥१३॥

इति श्रीमत् द्विवेदिना सुकवि दीनेशात्मज

वैजनाथ विरचिते आलंवनिविभावे संजोग शींगारे अलि अलिमति वचनो नाम द्वादश मासि संपूर्णम् ।।"

विषय—आलंबन विभाव का वर्णन वारह मासों के आधार पर किया गया है। जिस मास में जैसी अवस्था होती हैं, वैसा ही चित्रण है।

१०—कविप्रिया—ग्रंथकार—केशवदास। लेखक—दिनेश। अवस्था—अच्छी, प्रारंभ का एक पृष्ठ नहीं है। पृष्ठ-सं०—८५। आकार—६"× १२"। प्र० पृ० पं० लगभग—२८। लिपि—नागरी। रचनाकाल—....×। टीकाकाल—१८३४। लेखनकाल—१८८३। यह ग्रंथ मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षितहै। पु० सं० क–११ है।

प्रारंभ०—लिखावट स्पष्ट नही है। ११ दोहे के वाद लिखा है :—

"संवत अठदश शत वरस चौंतीसै चितधार।
रची ग्रंथ रचना रुचिर विजय दशमि सनिवार ।।१२।।
सहज राम कृत चंद्रिका धऱ्यो ग्रंथ को नाम। पठे गुने पंडित... (आगे अस्पष्ट है) अथ मूल मंगलाचरन दोहा ।। गजमुख सनमुख होतही विघन विमुख लै जात ज्यों पग परत प्रयाग में पाप पहार विलात ।।१।।"

अंत०—"केशव सोरह भाव शुभ सुवचन मय सुकुमार
कवि प्रिया जे जानियहु रहउ सिंगार ।।९५।।

सुगमनि—सहज राम कृत चंद्रिका शसि चंद्रिका समान
ताकत हीं शंसय तिमिर प्रति दिन करत प्रपान ।।९६।।
इति श्री नाजर सहज राम विरचितायां कवि प्रिया टीकायां सहज राम चंद्रिकायां चित्रालंकार विवेचण नाम षोडशः प्रकाशः ।।१६।।
लोचन वसु वसु चंद सम्वत सावन अधिआसिन वसु तिथि कस्य... (आगे अस्पष्ट है)"

विषय—केशवदास के काव्य-ग्रन्थ 'कवि प्रिया' की टीका है। टीका गद्यपद्यमय प्रश्नोत्तर के रूप में है। उदाहरण भी दिया गया है।

टिप्पणी—इस ग्रंथ के टीकाकार श्री सहज राम जी किसी महाराज गर्जसिंह के यहाँ रहते थे। ग्रंथ के प्रारंभ में नाम आया है। टीकाकार ने अपने विषय में भी कुछ लिखा है।

[क्रमशः]

श्री मन्नूलाल पुस्तकालय (गया) में संगृहीत प्राचीन हस्त-लिखित, पोथियों का विवरण

सं०—डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री, एम्० ए०, पी० एच्० डी०

(गतांक से आगे)

११—कविप्रिया—ग्रन्थकार—केशवदास। लिपिकार—करनसिंह, राजपूत गयावासी। अवस्था—अच्छी, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—२१। प्र० पृ० पं०—लगभग—१५। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लेखनकाल—श्री संवत् १६००, चैत्र, शुक्ल ६ षष्ठी, गुरुवार।

प्रारम्भ की पंक्तियाँ—"अथ चित्रालंकार वर्णनम् ॥ दोहा ॥ केशव चित्र कवित्त मे ॥ बूझत परम विचित्र ॥ ताके बुंदक के कनहि वरनत हौं सुनि मित्र ॥१॥ अथ उरध विनु विंदु युत जति रस हीन अपार ॥ वधिर अंध गन अगन के गनियन अगनि विचार ॥२॥ केशव चित्र कवित्त में इतने रोष न दोष ॥ अक्षर मोटे पातरे व व ज य एकै लेपि ॥३॥ अति रति मति गति एक करि बहु विवेक युत चित्र ज्यों न होइ क्रम भंग त्यौं वरनौ चित्र कवित्त ॥"

मध्य की पंक्तियाँ—"अथ व्यस्त समस्त गतागत वर्णनम् ॥ उत्तर व्यस्त समस्त मै दुऔ गतागत जानि एकहि अर्थ समस्त गति केशव दास वषानि ॥६७॥ सोरठा। कंठ वसन को सात को ककहा बहु विधि कहै ॥ को कहिए सुर तात को कामी हित सुर त रस ॥६८॥"

अन्त की पंक्तियाँ—"मूल-दोहा। कामधेनु है आदि अरु कल्पवृक्ष पर्यन्त ॥ वरनत केशौदास कवि चित्र कवित्त अनन्त ॥९०॥ इहि विधि केशव जानि यहु चित्र कवित्त अपार ॥ वरनत पंथ बताइ मै दीनो बुद्धि अनुसार ॥९१॥ सुवरन जटित पदारथनि भूषण भूषित मानि ॥ कवि प्रिया है कवि प्रिया कवि संजीवनि जानि ॥२॥ पल पल प्रति अवलोकिवो सुनिवो गनिवो चित्र। कवि प्रिया यौं रक्षियो कवि प्रिया ज्यों मित्र ॥९६॥"

विषय—चित्रालंकार वर्णन से प्रारंभ करके 'निरोष्टक' वर्णन, मात्रा रहित एक स्वर चित्र वर्णन, एकाक्षरादि शब्द वर्णन, द्वयक्षरशब्द कथन—

षड्विंशति अक्षर वर्णन तक है। अन्तर्लिपि का और भिन्न-भिन्न नायिकाओं की दशाओं के भी वर्णन हैं।

टिप्पणी—१—इस ग्रन्थ के साथ ही श्री नाजर सहज कृत टीका भी है। यहाँ 'नाजर' अशुद्ध प्रतीत होता है। 'नाजर' के स्थान पर 'नाजिर' पढ़ा जाय तो ठीक होगा। टीका का नाम 'रामचन्द्रिका' टीका है। टीका अच्छी है। ग्रन्थ का मूल लिखने के बाद टीका और उदाहरण दिया है। ग्रन्थ के अन्त में टीकाकार टीका के सम्बन्ध में लिखता है—"केशव सोरह भाव शुभ सुवरनमय सुकुमार कवि प्रिया जे जानियहु सो रहउ सिंगार॥ सहज रामकृत चन्द्रिका शसि चन्द्रिका समान ताकत ही संशय तिमिर प्रतिदिन करत प्रयान॥"

२—ग्रन्थ पूर्ण नहीं है। अन्त के 'इति षोडशोप्रकाशः' से अन्य पन्द्रह प्रकाशों का भी स्पष्ट संकेत है। ग्रन्थ के अन्त में—"इति श्री नाजर सहजराज विरचितायां कविप्रिया टीकायां सहजराम चन्द्रिकायां चित्रालंकार विवरणनं नाम षोडशो प्रकाशः॥६॥"

३—ग्रन्थ में चित्रालंकारों और बन्धों के सचित्र उदाहरण बड़े ही स्पष्ट और अच्छे हैं। जैसे—"जगजगमगतमगतजनरसवसभवभयहरकरकरत अचरचर।कनकवसनतनअसनअनलवडवटदलवसनसजलथलथलकर...।"

४—यह ग्रन्थ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय गया में सुरक्षित है।

१२–क–रामसतसै (सप्तसतिका)-ग्रन्थकार—तुलसीदास। लिपिकार—जुगल किशोर लाल। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ—सं०–४०। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—१२८६ सन्, आश्विन, शुक्ल ६, शुक्रवार।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशाय नमः दोहा—नमो नमो श्री रामप्रभु परमातम परधाम जेहि सुमरे सिधि होत है तुलसी जन मन काम।

राम वाम दिसि जानकी लषन दाहिने वोर
ध्यान सकल कल्यान कर तुलसी सुर तरु तोर
परम पुरुष पर धामवर जापर ऊपरन आन
तुलसी समुझत सुनत राम सोई निर्वान
सकल सुपद गुण जासु सो राम कामना हीन
सकल काम प्रद सर्वहित तुलसी कहहि प्रवीन
जाके रोम सुरोम अमित अमित ब्रह्मंड
सो देषत तुलसी प्रगट अमल सु अचल अषंड

जगत जननि श्री जानकि जनक राम शुभरुप
जासु कृपा अति अघ हरन करण विवेक अनूप"

मध्य०—३४ पृष्ठ—"मंत्र तंत्र तंत्री तिया पुरुष अस्वधन पाठ
पति गुण जोग विजोग तें तुरित जोहिऐं आठ
नीच निचाई नहि तजै जो पावहि सतसंग
तुलसी चंदन विटप वसि विन विष भुवन भुजंग
दुरजन दरपन सम सदा करि देषौ हिय दौर
सन्मुष की गति और है विमुख भये कुछ और॥"

अन्त०—"जनम जनम तुलसी चहत राम चरन अनुराग
का भाषा का संसकृत विभौ चाहियत सांच॥
कामजू आवै कामरी काले करिय कुमांच।
वरन विशद जुक्ता सरिस अर्थ सूत्र सम तूल॥
सतसैया स्तुति वर विशद गुण सोभा सुभ मूल
वर माला वाला सु मति उर धारै जुत नेह।
सुप सोभा सरसाइ नित लहै राम प्रति गेह॥
भूप कहहि लघु गुनिन कहँ गुनी कहहि लघु भूप
महि गिरि गत दोउ लषत जिमि तुलसी पर्व सनूप।
दोहा चारु विचारु चलु परिहरु वाद विवाद
सुकृत सीम स्वारथ अवधि परमारथ मरजाद"

विषय—इस ग्रन्थ में—१—प्रेम भक्ति निर्देशो नाम, २—उपासना पराभक्ति निर्देशो नाम, ३—संकेत वक्रोक्ति राम-रस वर्णनं, ४—आतम बोध निर्देशो नाम, ५—कर्म सिद्धांत योगो नाम, ६—ज्ञान सिद्धांत योगो नाम, और ७—राजनीति प्रस्ताव वर्णनो नाम, ये सात सर्ग हैं। प्रत्येक सर्ग में सौ-सौ पद्य हैं।

टिप्पणी—१—ग्रन्थ-लेखक ने अपना पूरा परिचय दिया है—"जुगल किशोर लाल, वासिंदे मौजे दादपुर प्रगन्ने पचरुपि पोथी लिखावल वापू मुकटधारी लाल मालिक मोकररीदार मौजे वकसंडा प्रगन्ने पचरुपी जिले गया।"

२—यह ग्रन्थ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है।

ख—कवित्त लीला प्रकाश—ग्रन्थकार—'महाराज उदीतनारायण'। लिपिकार–जुगलकिशोर लाल। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ-सं०—६। प्र० पृ० पं० लगभग—३५। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपि-

काल—सन् १२८६, आश्विन, शुक्ल ११—एकादशी, शनिवार ॥

प्रारंभ०—"श्रीगणेशाय नमः रामचंद्र वंश वर्णनं ॥ कवित्त ब्रह्म के सनाल कंजु कंज सो भयो है ब्रह्म ब्रह्म के मरीच ताके कश्यप के भान भौ भानु के यही ॥"

अन्त०—"गायो वाल्मीकि नीलकंठ जो न ठीक ठीक नीक नीक नाटक में बात जो जो कीन्हो है। गायो कागराज पक्षीराज सो सो कहो गयो ताहि को भयो है।"

विषय—राम-जीवन-चरित।

टिप्पणी—१—ग्रन्थ के अन्त में लिखा है—"महाराज उदितनारायन मो महाराज रामचंद्र चरित प्रकास कर दीन्हो है।" इससे ग्रन्थकार के नाम का पता लगता है। ग्रन्थकार ने अपने विषय में और कुछ भी नहीं लिखा है।

२—क, ख, दोनों ग्रन्थ एक ही जिल्द में बँधे हुए हैं। दोनों के लिपिकार एक ही व्यक्ति हैं।

३—यह ग्रन्थ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है।

१३—कवित्त रामायन-(कवितावली)—ग्रन्थकार—श्री तुलसीदास जी। लिपिकार—जुगलकेश्वर लाल। अवस्था—अच्छी, देशी पुराना हाथ का बना कागज। पृष्ठ-संख्या—३३। प्र० पृ० पं० लगभग—४४। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—संवत १९१९, आषाढ़ शुक्ल, दशमी, सोमवार ॥

प्रारंभ०—"ओं श्रीगणेशाय नमः अथ कवित्त रामायन लिख्यते ॥—सवैया ॥ अवधेस के द्वार सकार गई सुत गोद के भूपति लै निकसे ॥ अवलोकि हौं सोच विमोचन को ठगि सी रही जो न ठके धिक से ॥ तुलसी मन रंजन रंजित अंजन नैन सुखंजन जातक से ॥ सजनी ससि मे समसील उभै नवनील सरोरुह से विकसे ॥१॥

अन्त०—"आस्रभय रन करि विवस विकल भये निज निज मरजाद मोररी सी डारही ॥ संकर सरोष महाँ मारिहीं ते जानियत साहिव सरोष दुनी दीन दीन

दारदो ॥ नारि नर आरत पुकारत सुनैन कोउ काहु देवतनि मिलि मोररी मुरी मारिदी ॥ तुलसी सभीत पाल सुमिरे कृपालु राम समय सुकरुना सराहि सनकारि दी ॥१७६॥ इति श्री कवित्त रामायने श्री गोशाई तुलसीदास कृते उत्तरकांड सम्पूर्णम् ॥७॥"

विषय—श्री रामचन्द्र के जीवन से सम्बन्धित प्रसिद्ध मुक्तक-काव्य ।

टिप्पणी १—ग्रन्थ-लेखक ने अन्त में अपना परिचय दिया है—"जुगलकेस्वरलाल । वासीं दे अमावाँ प्रगने जरा जिले वीहार पोथी लिखावल वावू सीताराम मालिक मोकररीदार मौजे वकसंडा प्रगने पचरुखी जिले मजकूर ॥"

२—यह पुस्तक श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है ।

—कुण्डलियाँ—ग्रन्थकारर—गिरधर दास कविराय । लिपिकार—×। अवस्था अच्छी—देशी कागज । पृष्ठ—सं०—१० । प्र० पृ० पं० लगभग—१८ ।

लिपि—नागरी । रचनाकाल—×। लेखनकाल—×॥

प्रारम्भ०—"मेटनहारे विघिन के विधिन विनायक नाम
रधि सिधि विद्या उदरते लंबोदर अभिराम
सकल सुभ गुन हिय धारे और गहन के हेत देत मनु दंत पसारे
कह गिरिधर कविराय भरयौ अजहूँ ले पेटन
वक्र तुंड करि काह वहत ब्रह्मंड समेटन ॥१॥"
जगदम्वा जग तारनी तू सो करो प्रकास
एकवार ऊव डारिये सत्रुन के दृग छार ॥·········।

अन्त०—"कहत विलैया बाघ सो हम तुम है इक रंग तुम वस्ती के वन वसो हम वस्ती के संग हम वसती के संग नित भोजनै दधी को तुम चढि रणते उतरु हुकुम जव होत धनी को कह गिरिधर कविराय सुनो हे जंगल रैया दै मोछन पर ताव वाघ सो कहत विलैया ॥७७॥"

विषय—जीवनोपयोगी, उपदेशात्मक पद्य-ग्रन्थ ।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है । ग्रन्थ की लिपि

प्राचीन है। सुपाठ्य नहीं है। पुस्तकालय की सूची में 'श्री आगरदास' की कुण्डलिया भी है, किन्तु ग्रन्थ पुस्तकालय में नहीं है।

१५—गंगालहरी—ग्रन्थकार—पद्माकर। लिपिकार—जुगलकेस्वरलाल। अवस्था—अच्छी, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—११। प्र० पृ० पं० लगभग—१८।
लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—संवत् १९२०, फाल्गुन, कृष्ण, चतुर्दशी।

प्रारम्भ०—"ओं श्री गणेशायनमः॥ कवि पद्माकर कृत गंगालहरी लिख्यते ॥दोहा॥
हरिहर विधि को सुमिरि के कार्टहि कलुष कलेस
कवि पद्माकर रचत हे गंगालहरी वेस ॥१॥"

कवित्त—"वईति विरंचि भई वामन पगन पर फैली फैली फीरीइ ससी सवै सुगथ की॥
आइके जहान जन्हु जंघा लपटाय फिरी दीनन के लीन्हे दौर कीन्ही तीन पथ की॥
कहे पद्माकर गु महिमा कहां लौ कहौं गंगा नाम पायो सही सबके अरथ की॥
चारचौ फल फूली गह गही वह वही लह लही कीरति लता है भगीरथ की॥
कूरम पे कोल कोल हू पै सेस कुंडली है कुंडली पे फबी फैल सुफन हजार की॥
कहे पद्माकर त्यौं फन परफ वीहे भूमि भूमि पे फली है थिति रजत हार की॥
रजत पहार पर संभु सुरनायक है संभु पर ज्योति जटाजूट सो अपार की॥
संभु जटा जूट पर चंद्र की छुटी है छटा चंद्र की छटान पे छटा है गंगधार की ॥२॥"

अन्त०—"जोग हू मे भोग मे वियोग हू मे संयोग मे रोग हू मे रस नैनन को विसराइये
कहै पद्माकर पुरी मे पुन्य सैलन मे फैलन मे फैल फैल गैलन में गाइये॥
वैरिन मे बंधु मे विथा मे वंस वालन मे वन मे विपे मै रन हू मे जहां जाइये॥
सोच हू मे सुप मै सुरी मै साहिवी मैं कहू गंगा गंगा कहि जनम विताइये ॥५३॥"

दोहा—"गिरीस गजानन गिरिसुता ध्याम समुझि स्तुति पंथ॥
कवि पद्माकर ही कियो गंगा लहरी ग्रन्थ ॥५४॥
श्री गंगालहरी जो जन कहे सुने स्तुति सार
ताको गंगा देति है सदा सुभग फल चार ॥५५॥
इति श्री पद्माकर गंगालहरी समप्तम् ॥"

विषय—गंगा-महिमा-काव्य। स्तोत्र-ग्रन्थ।

टिप्पणी—१-यह ग्रन्थ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है।
२-ग्रन्थ-लेखक ने अपना परिचय—"जुगल केसवरलाल वासी दे दाद्पुर प्रगने पचरुपी जीले विहार" शब्दों में दिया है।

१६—जगत विनोद—ग्रन्थकार—पद्माकर कवि। लिपिकार—सुसिग्रिफलाल। अवस्था—अच्छी है, मोटे और नीले रंग के कागज पर लिखावट सुन्दर है।

पृष्ठ-सं०—५६ । प्र० पृ० पं० लगभग—४६ । लिपि—नागरी ।

रचनाकाल— सं० १६२२, फाल्गुन, शुक्ल, नवमी ।

प्रारम्भ०—"श्री नणेशाय नमः ॥ अथ कवि पद्माकर कृत जगत विनोद लिख्यते ॥

दोहा—सिद्धि सदन सुन्दर वदन नंद नंदन मुद मूल ॥
रसिक सिरोमनि सावरे सदा रहहु अनुकूल ॥१॥
जय जय सकति सिला मई जय जय गढ़ आमेर ॥
जय जयपुर सुर पुर सदृश जो जाहिर चहुं वोर ॥२॥
जय जय जाहिर जगतपति जगतसिंह नरनाह ।
श्री प्रताप नंदनवली रविवंसी कछवाह ॥३॥
जगत सिंह नरनाह को समुझि सवन को ईस ।
कवि पद्माकर देत है कवित्त बनाइ असीस ॥४॥"

कवित्त—"छत्रिन के छत्र छत्र धारिन के छत्रपति छाजत छटनि छिति छेम के छवैया हो ।
कहै पदमाकर प्रभाव के प्रभाकर दया के दरियावहुहि हू हद के रषैया हौ ।
जागते जगत सिंह साहेब सवाइ श्री प्रताप नंदकुल चंद आज रघुरैया हौ ।
आछे रहौ राज राजन के महाराज कछ कुल कलस हमारे तो कन्हैया हौ ॥५॥
आप जगदीश्वर ह्वै जग मै विराजमान होहूं तौ कवीश्वर ह्वै राजते रहत हौं ।
कहे पदमाकर ज्यों जोरत सुजस आपु हौं त्यों तिहारो जस जोरि उमहत हौं ।
श्री जगत सिंह महाराज मानसिंह वत बात यह सांची कछु कांची न कहत हौं ।
आपु ज्यौं चहत मेरी कविता दराज त्यौं मैं उमिरि दराज राज राउरी चरत हौं ॥"

दोहा—"जगत सिंह नृप जगत हित हरष हिये निधिनेहु ।
कवि पदमाकर सो कह्यो सुरस ग्रन्थ रचि देहु ॥७॥
जगत सिंह नृप हुकुम तें पाइ महा मन मोद ।
पदमाकर जाहिर कहत जगहित जगत विनोद ॥८॥"

अन्त०—"दोहा—सवहित तै विरकत रहत कछू न संका त्रास ।
विहित करत सुनहित समुझि सिखवत जे हरिदास ॥१२२॥
इति नवरस निरूपनम् ।" (यह दोहा शान्त-रस के उदाहरण में कहा गया है)

दोहा—"जगत सिंह नृप हुकुमतें पदमाकर लहि मोद ।
रसिकन के वस करन को कीन्हो जगत विनोद ॥१२३॥
सिद्धि श्री कूर्म्मवंशावतंस श्री मन्महाराजाधिराज राजेन्द्र श्री सवाइ महाराज जगतसिंहाज्ञया मथुरा स्थाने मोहनलाल भट्टात्मज कवि पदमाकर विरचित जगत विनोद नाम काव्ये पष्टमोऽध्यायः समाप्तः ॥६॥ शुभमस्तु ॥सीताराम ॥"

विषय—नव-रस और नायक-नायिका का पाण्डित्य-पूर्ण वर्णन है। उदाहरण-प्रत्युदाहरण भी दिये गए हैं। जैसे—"अथ नायका लक्षणम् ॥

रस सिंगार को भाव उर उपजहि जाहि निहारि।
ताही को कवि नायका बरनत विविधि विचारि ॥११॥"

"उदाहरण यथा कवित्त ॥

सुंदर सुरंग नैन सोभित अनंग रंग अंग अंग फैलत तरंग परिमल के।
वारन के भार सुकुमारि कौ लचत लंक राजै परजंक पर भीतर महल के।
कहै पदमाकर विलोकि जन रीझैं जाहि अंबर अमल के सकल जल-थल के।
कोमल कमल के गुलाबन के दल के सुजात गड़ि पायन विछौना मपमल के ॥१२॥"

टिप्पणी-१—ग्रन्थ का नाम कवि ने अपने आश्रयदाता महाराज जगत सिंह के नाम पर जगत-विनोद रखा है, किन्तु ग्रन्थ में रस और नायक-नायिका का विशद वर्णन है। ग्रन्थ के लिपिकार ने, अपनी ग्रन्थ-लिपि के विषय में यों लिखा है:—

"छप्पय—जगत सिंह नृप हुकुम पाइ करि कवि पदमाकर।
विरच्यो जगत विनोद काव्य-सुंदर सुप-सागर ॥
जगमगात जग माहिं सरस गाय्यो गुन गन ते ॥
कह्यौ नायिका भेद सुहाव भाव रस मन ते ॥
लहेउ मोद नृप निरपि करि और सकल कवि जन सुपद ॥
लपि चाव भयउ सिग्रिफ हृदय लिख्यो पूर्ण करि अति विसद ॥१॥

दोहा—राम नयन रिपु नयन निधि वसु सम्वत मानि।
सुकुल पक्ष मधु मास शुभ राम जनम तिथि जानि ॥

सोरठा—जगत विनोद हरसाल। जग मे जग मग जगि रह्यो
लिख्यो सुसिग्रिफ लाल। रावा कृष्ण विलास लपि ॥२॥ इति शुभः"

"इस ग्रन्थ-का प्रारंभ पडनदी तटनि धरा सम्वत मे किया था सो बहुत काल वितीत होय गया अब श्री राम कृपा ते सम्पूर्ण होय गया ॥ इस ग्रन्थ के विपेः—टवर्गीणकार संभोगी क्षकार कवर्गी खकार तालव्य शकार ए सब वर्ण नहीं लिखे हैं क्योंकी भाषा मे कवियों ने निषेध किया है।"

"दोहा—दोहा में लक्षण कह्यौ लक्ष कवित्त दोहादि ॥ धरयौ सोच करि कवि सुघर समुझि होइ अहलादि ॥ दोहा और कवित्त के संख्या लिख्यो सुधारि। रसकर मुनि सब जोरि करि लीजे सुजन विचारि। इति। प्रारंभ १९२५ संवत्। संपूर्ण—संवत् १९३३।"

२—ग्रन्थ के लिपिकार ने इस पोथी के अतिरिक्त ७२५ पोथियाँ और भी लिखी हैं इस पोथी के अन्त में ७२६ संख्या दी हुई है। ऐसा प्रतीत होता है, ग्रन्थ की समाप्ति पर लिपिकार पोथी की संख्या भी लिख दिया करते थे।

३—यह ग्रन्थ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है।

१७—गीतावली रामायन—ग्रन्थकार—गो॰ तुलसीदास। लिपिकार—×। अवस्था—मोटा, हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१४५। प्र० पृ० पं० लगभग—३८। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लेखन-काल—अगहन, शुक्ल, पंचमी, १९१० वि०।

प्रारंभ०—"श्री गनेसजी सहाऐ श्री सुरसतीजी सहाऐ श्री हनुमानजी सहाऐ। श्री पोथी राम गीतावली विनय पद्दरामाएन कीरत गोसाईं तुलसी दासजू का ॥ बालकांड लीख्यते। श्री रामजी सहाए नमः ॥ राग असावरी। आज सुदिन सुभ घड़ी सुहाए ॥५ रूप सील गुन......................प्रगट भए प्रेआग ॥"

अन्त०—"चौदह भुवन चराचर हरषित आए राम राजधानी ॥
मिले भनत जननी गुन पनिजन चाहत पनमानन्द बने
उसह वियोग जनित..........................
वेद पुरान विचारि सगुन सुभ महाराज अभिषेक कियो।
तुलसिदास जिय जानि सुओसर भगित दान वर मांगि लियो ॥'

विषय—श्री रामचन्द्रजी के जीवन-सम्बन्धी गीति-काव्य।

टिप्पणी—१—इस ग्रन्थ की लिपि अत्यन्त प्राचीन प्रतीत होती है। लिपि नागरी और कैथी के मिले-जुले अक्षरों में है। दोनों लिपियों के मिले-जुले अक्षर होने से पढ़ने में कठिनाई होती है। पोथी में अशुद्धियों का भी आधिक्य है। प्रकाशित प्रतियों से पाठ-भेद भी है।

२—यह ग्रन्थ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है।

[क्रमशः]

——:——

श्री मन्नूलाल पुस्तकालय (गया) में संगृहीत प्राचीन हस्त-लिखित पोथियों का विवरण

सं०–डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री, एम्० ए०, पी० एच्० डी०

१८—काव्य-मञ्जरी—ग्रंथकार—श्री पदुमनदाश। लिपिकार—श्री दलेल सिंह। अवस्था—अच्छी, हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं०—५। प्र० पृ० पं०—लगभग—१६। आकार—×। लिपि—नागरी। रचना काल—×। लिपिकाल—१७४१ संवत्।

प्रारंभ की पंक्तियाँ—"अथ हास रस दोहा ॥ हाँस भाव तसुमूल है हरष संचरत तासु ॥
मन प्रसन्न ते होत है तितहि प्रगट रस हासु ॥

यथा कवित्त ॥ आइ आजु वृष भान सुता गो दुहावन को ॥ सखिन्ह समेत वछरा घनेरे जोरि कै ॥ जेते वग वारि तेह कारि वलवारणी के ॥ पान के रभस सभ गौ तितहि दौरि कै ॥ दोहन को मोहन अके भए गाय धनी ॥ छूटे वक्षरौ के कौन तिन्ह को अरोरि कै ॥ अैसे अकुलाने लेरुआ लैनो यो वृषभ ने ॥ हंसि सषीगन भयौ राधा मुख मौरि कै ॥२०॥

करुण रस दोहा—अस्थाई यशु सोक है आसू मोह विवर्ण ॥
भूमि पतन विलपन रुदन करुणारस मे वर्ण ॥२१॥"

अन्त की पंक्तियाँ—"दोहा—ए नव रस रुद्रुट जगत महावीर वलवान।
जो जेहि को हित अहित सभ तिन्ह को शुनत वपान ॥४१॥

यथा दोहा—स्याम वरण श्रृंगार को मित्र हांस रस जासु ॥
वैरी करुण शान्त तसु। और सकल सम ताशु ॥४२॥
उज्ज्वल तन रस हास को हित अद्भुत श्रृंगार ॥
वैरी करुणा ताहि को अवरहि सभव्रेवहार ॥४३॥
करुणा कर्वुर रंग है वैरी हास सिंगार ॥
मयत्री मानै सांत तें अपरहि शिष्टाचार ॥४४॥
अरुण रूप रस रौद्र को हिता को है वीर ॥
वैरी सान्त वषानियै औरहि समता थीर ॥४५॥

पीत वरण तन वीर को हास रौद्र ते रीति ॥
भे रस की अद्भुत सुहृद करुण विभत्सहि प्रीति ॥४६॥
सान्त हि संगी को नही सरस माह विरोध ॥
उज्ज्वल तन रुचि जानिवो करउश्ताहि को योध ॥४७॥
इहि विधि नवरस वर्णिअउ कोउ करहिं नहिं वाद ॥
पूरण भौ प्रारंभ यह गुरु द्विज देव प्रशाद ॥४८॥
भूपनि शिह दलेल ढिग वरणे पदुमन दाश ॥
जिन्ह महीप को दाश न यश जग मे करत प्रकाश ॥

कवित्त—दान दिये गजराज जिन्हे गनिकौ शकन के कव शिजत धारैं ॥
शेवक को शिर पाव निरन्तर । जायक को जर वाप के जोगे ।
रीझन हौ जिनके गुण मे तिन्ह के कल के कलि दारिद तोगे ॥
सिह दलेल उदार महीपति देत मे लापै लगे जेहि थोगे ॥५०॥

दोहा—सभकलिका विगशित भई अमल कुशुम अमलान ।
अर्पण कीन्हे विस्नु को जेहि प्रशाद कल्यान ॥५१॥ संख्या ७१६॥
इति श्री पदुमन दाश विरचितायां श्री दलेल सिंह प्रतापार्क प्रकाशित काव्य मंजर्य्यां नव रस वर्णनो नाम चतुर्दश कलिका प्रकाशः ॥१४॥"

विषय—साहित्य । रस, अलंकारों के सोदाहरण वर्णन ।

टिप्पणी—यह ग्रंथ अपूर्ण है । प्रारंभ के पृष्ठ नहीं हैं । प्रारंभ होता है हासरस से । इससे प्रतीत होता है, अन्य रसों के वर्णनवाले पृष्ठ फट गये हैं । दोहे की संख्या भी २० दी गई है । स्पष्ट है कि पूर्व के १६ दोहों के वर्णनवाले पृष्ट फट गये हैं । ग्रन्थकार ने नव रस के अतिरिक्त अलंकार पर भी रचना की है । ग्रन्थ के अन्त में "इति चतुर्दश कलिका" से ज्ञात होता है कि पहले और बाद में भी और 'कलिकाएँ' हैं । ग्रन्थकार ने अध्याय के लिए 'कलिका' का प्रयोग किया है ।

२—यह ग्रन्थ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है । पुस्तकालय की—पु० सं० क—१५ है ।

१६—छप्पेरामायण—ग्रंथकार—गोस्वामी तुलसीदास । लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी, मोटा, देशी कागज पर लिखा है । कहीं-कहीं स्याही पुत गई है । पृष्ठ-सं०—६ । प्र० पृ० पं० लगभग—२८ । आकार—×। लिपि—नागरी, अस्पष्ट । रचनाकाल ×।—लिपिकाल—×।

प्रारम्भ०—"श्रीगनेस जी सहाय अथ पोथी छप्पेरामायन कृत गोसाईं तुलसीदास लीषतेः

श्री गुरुचरन सरोज वंदि गननाथ मनावौं जेहि प्रसाद सुभहोइ रामसोइ विनय सुनावौं। आरत भंजनरामनाम मुनि साधुनिगाइ सुमिरत गहिनाथहोत सवठौर सहाइ। श्रीपति रघुपति अवध-पति करौं नामसोइ जापना कृपा करहु श्रीरामचन्द्रमम हरहु सोकसंतापना १ रहि कपोत शिशुपति समेत वैठे तरु पासा गगण उडे सवचान भूमितल दवे मगासा व्याध गहें करवान देपि लोचन जल मोचनि पंछी सो मन महसभीत दम्पति उर सोचति दुष्ट दमन करुणायतन रापि लेहु सरणा पना कृपा करहु श्रीरामचंद्र मम हरहु सोग संतापना ॥२॥"

अन्त०—"सरणागत के आवते माँगिसिंधु को नीर
लंका दियो विभीपणहि जय जय जय रघुवीर ॥५॥
कुंभकरण घननाद सो रावण कटक सरीर
सकल निसाचर मारेउ जय जय जय रघुवीर ॥६॥
आए अवधपुर सुख दियो मेट्यो पुरजन पीर
सुरभि धर धरनि रह्यौ जय जय जय रघुवीर ॥७॥
सिंहासन वैठे रामजू भयो विमानन्ह भीर
हरपित वरपहि सुमन सुर जय जय जय रघुवीर ॥८॥
मरिजन आनंद वन सकल वरो शिति धीर
तुलशि दास के उर वसो जय जय जय रघुवीर ॥९॥
सक्षपान को दोहरा तुलशी सुरसरि नीर
दरस परस कलि मल हरे जय जय जय रघुवीर ॥१०॥
इति श्री छप्पैरामायण तुलशीकृत संपूरण"

विषय—राम-जीवनी।

टिप्पणी—यह ग्रंथ आधुनिक प्रतीत होता है। प्रारम्भ की पांच पंक्तियाँ दूसरे अक्षरों में हैं, जो अस्पष्ट हैं। शेष के ऊपर अक्षर स्पष्ट हैं। छप्पै के ३१ पदों और १० दोहों में ग्रन्थ समाप्त है। यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पुस्तकालय में इसकी क्रम-संख्या क—२४ है।

२०—छप्पैरामायन—ग्रंथकार—गोस्वामी तुलसी दास जी। लिपिकार—युगलकिशोर लाल। अवस्था—अच्छी, देशी कागज। पृष्ठ सं०—४। प्र० पृ० पं० लगभग—४६। आकार—×। लिपि—नागरी। रचना-

काल—आषाढ़, शुक्ल ११ एकादशी, भौमवार, सं०
लिपिकाल—१९१९ (१८६२)।

प्रारंभ०—"श्री गनेसजी साय नमः॥ ओं श्री पोथी छप्पै रामायनकृत
गोसाईं तुलसीदास जी का लिष्यते ॥छप्पै॥
श्री गुरुचरन सरोज वंदिगननाथ मनावों॥ जेहि प्रशाद शुभ
होइ रामसोई विने सुनावों॥ आरत भंजन राम नाम मुनि
शाधु न गाई॥ सुमिरत गाठे नाथ होत सव ठौर सोहाई॥
श्रीपति रघुपति अवधपति करौं नाम सोइ जापना
कृपा करहु श्री रामचन्द्र मम हरहु शोक संतापना॥ १॥"

मध्य की पंक्तियाँ—"विविध भांति दय धीर मातु पद वंदि कपीसा।
चले सुभासिप पाय आय भेंटे सब कीसा॥
चरन चूमिकर सकल श्रीस पूछि कुसलाइ।
कहत कथा सव भांति आए मधुवन फल पाई॥
वंदि राम पद पंकजहि सीता सुधि इतिहासना।
कृपा करहु श्री रामचन्द्र मम हरहु सोक संतापना॥१७॥
विरहानल तनु तपत आपु हित रापति नयना।
अव विलंवि जनि करिय सीय कहि राजीव नैना
शक्र सुअनमृग हेंम :जानु तव बान प्रतापा॥
जान कवंध अरु वालि कहां भयो सो सर चांपा॥
सीय विनय चरनन्हि परी चूडामनि दिहु आपना।
कृपा करहु श्री रामचंद्र मम हरहु सोक संतापना॥१८॥

अन्त०—"दोहा—आय अवधपुर सुष दियो मेट्यौ पुर जन पीर॥
सुरभी घर घर रमि रह्यौ जय जय जय रघुवीर॥३८॥
सींहासन वैठे रामजू भयो विमानन्ह भीर।
हरपित वरषहि सुमन सुर जय जय जय रघुवीर॥३९॥
अरि गंजन आनंद घन सकल धरो मति धीर।
तुलसीदास के उर वसो जय जय जय रघुवीर॥४०॥
ससपान के दोहरा तुलसी सुरसरि नीर॥
दरस परस कलि मल हरे जय जय जय रघुवीर॥४१॥
इति श्री छप्पै रामायन कृत गोशाईं तुलसीदास जी, का समपूरनम्॥
सिद्धिरस्तु शुभ मस्तु सुभम् भूयियात्॥

शुभ संवत् ॥१९१९ शाल समय नाम मिति आषाढ़ मासे शुक्ल पक्षे एकादश्यां दिनौ भौंमवासरां के लीपल भेल ॥ हस्ताक्षर जुगल के स्वर लाल । वासींदे आमावाँ प्रगने जरा जीले बीहार ॥"

विषय—रामचरित मानस के सातों काण्डों की गाथा के आधार पर संक्षिप्त रचना ।

टिप्पणी—१—छप्पै ३१ हैं, बाद में १० दस दोहे हैं। इसमें बाल्य जीवन नहीं है। ताड़का-वध से प्रारंभ होकर राज्याभिषेक तक की गाथा है। इस ग्रंथ की लिपि स्पष्ट और सुन्दर है।

२—यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है पुस्तकालय की क्रम-सं० क—२५ है।

२१—सूक्ष्म रामायण छप्पावली—ग्रंथकार—गो० तुलसीदास। लिपिकार—श्री शिव प्रसाद। अवस्था अच्छी, मोटा कागज। पृष्ठ-सं०—११। प्र० पृ० पं० लगभग—१३। आकार—×। लिपि—नागरी। रचना-काल—×। लिपिकाल—कार्तिक शुक्ल, ३ तृतीया रविवार, सं० १९४६(१८८९)।

प्रारंभ०—"श्री गणेशाय नमः ॥ अथ सूक्ष्म रामायण छप्पावली लिख्यते ॥

दोहा—पहले गुरु को गाइये जो गुरु रच्यौ जहान ।
पानी से जो पिंड किय अलष पुरुष निर्वाण ॥१॥
विघन विनाशन भय हरण करत बुद्धि परगास ।
नाम लेत गणराज को होत शत्रु के नाश ॥२॥
रामचरित रामायण करौं कथा अनुसार ।
आसन लीजै परम हित आवहु पवन कुमार ॥३॥

छप्पै—श्री गुरुचरण सरोज वंदि गणनाथ मनावौं ॥
जेहि प्रसाद शुभ होय राम सों विनय सुनावौं ॥
आरत भंजन राम नाम मुनि साधुन गाई ॥
सुमिरत गाढे नाथ होत सब ठौर सहाई ॥
श्री पति रघुपति अवधपति करौं नाम मै जापना ॥
कृपा करहु श्री रामचन्द्र मम हरहु शोक संतापना ॥१॥'

अन्त की पं०—"दोहा—आनँद दायक दुख हरण रघुनायक मति धीर ।

रतीराम के उर बसौ जय जय जय श्री रघुवीर ॥८॥
सप्त सोपान को दोहरा जिमि सुरसरि को नीर ॥
दरस परस कलिमल हरे जय जय जय श्री रघुवीर ॥९॥
इति श्री सूक्ष्म रामचरित्र रामायण छप्पावली सम्पूर्णम् ॥"

विषय—रामजीवन-सम्बन्धी काव्य ।

टिप्पणी—१—पूर्व के ग्रंथों से इसके प्रारंभ में अतिरिक्त तीन दोहे दिये हुए हैं। इन्हें या तो इस ग्रंथ के लिपिकार ने अपनी ओर से दिया है या अन्य प्रतियों में छूट गया है।

२—इन तीनों ग्रंथों के अन्त में दिये गये दोहों में नवां दोहा जब समाप्त होता है तो, 'रतिराम' नाम आता है। 'रतीराम के उर बसौ' इससे प्रतीत होता है कि तुलसीदास के बाद अन्त के दोहों की रचना इस नाम के किसी अन्य व्यक्ति ने की है। यह प्रसंग अनुसंधेय है।

३—यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पुस्तकालय की क्रम-संख्या क—१६ है।

४—लिपिकार ने ग्रंथ के अन्त में अपना परिचय देते हुए लिखा है—"शिव प्रसाद कायस्थ, श्रीवास्तव, गया, निवासी बाबू गंगा विस्नु कायस्थ श्रीवास्तव गया क्षेत्र निवासी हेतु लिखित्वा श्री राम।"

२२—तुलसी सतसंई (राम सतसइ)—ग्रन्थकार—तुलसीदास। लिपिकार—सिंग्रिफे लाल, सुजान। अवस्था—अच्छी; मोटा, हाथ का बना, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—७३। प्र० पृ० पं० लगभग—२४। आकार—×। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—आषाढ़ शुक्ल ६ षष्ठी, सं० १९१५ (१८५८) बृहस्पतिवार।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशाय नमः॥ अथ राम सत्सइ लिख्यते ॥ दोहा ॥ नमो नमो श्री राम प्रभु ॥ परमातम पर धाम ॥ जेहि सुमिरत सिधि होत है ॥ तुलशी जन मन काम ॥ १ ॥

राम वाम दिशि जानकी लखन दाहिने ओर।
ध्यान सकल कल्यान कर तुलशी सुर तरु तोर ॥२॥
परम पुरुष परधाम पर जापर अपरण आन।
तुलशी सो समुझत सुनत राम सोई निर्वान ॥३॥
सकल सुखद गुण जासु सो राम कामना हीन।
सकल काम प्रद सर्व हित तुलशी कहहिं प्रवीन ॥४॥
जा कंह रोम सुरोम प्रति अमित अमित ब्रह्मण्ड ॥
सो देषत तुलशी प्रगट अमल सु अचल प्रचण्ड ॥५॥"

मध्य०-(पृ० ३६)-"रामचरण पहिचान विनु मिटी न मन की दौर ॥
जन्म गवाए वाद ही। रटत पराए पौर ॥६१॥
सुने वरण माने वरण। वरण विलग नहिं ज्ञान।
तुलसी सुगुरु प्रशाद ते परे वरण पहिचान ॥६२॥
विटप वेलिगन वाग के। माला कारन जान ॥
तुलसी ता विधि विद विना। करता राम भुलान ॥६३॥
कर्त्तव ही सो कर्म्म है। कहत तुलसी परमान ॥
करण हार करता सोई। भोगो भोग निदान ॥६४॥"

अन्त०—"वरमाला वाला सुमति ॥ उर धारे युत नेह ॥
सुष शोभा सरसात नित ॥ लहे राम पद गेह ॥१२७॥
भूप कहहि लघु गुणनि कहं ॥ गुणी कहहि लघु भूप ॥
महि गिरिजत दोउ लषत यिमि।
तुलसी षर्व स्वरूप ॥१२८॥
दोहा चारु विचारु चलु ॥ परिहरि वाद विवाद।
सुकृत सीम स्वारथ अवधि परमारथ मरजाद ॥१२९॥
श्रीमद्गोस्वामी तुलसी दाश विरचितायां सप्त सतिकायां
राजनीत प्रस्ताव वर्णनो नाम सप्तमस्सर्गः ॥७॥

विषय—विविध सात विषयों पर फुटकर रचना।

टिप्पणी—१—यह ग्रंथ सुपठनीय और अनुसंधेय है। प्रारंभ के २५ पदों में ग्रंथ-रचना का अभिप्राय कहा गया है।

२—१-प्रेमभक्ति, २-उपासनापराभक्ति, ३-संकेतवक्रोक्ति, ४-आत्मबोध निर्देश, ५-कर्मसिद्धान्तयोग, ६-ज्ञानयोग और ७-राजनीति प्रस्ताव नाम के सात सर्गों में ग्रंथ-समाप्त हुआ है।

३—ग्रंथ की भाषा रामचरित्र मानस जैसी है।

४—यद्यपि ग्रंथ में रचना-काल नहीं दिया हुआ है, तथापि पूर्व की भूमिका में ग्रंथकार ने पृ० २ के २१ वें पद में "अहिरसनाथ न धेनुरस। गणपति द्विज गुरुवार॥ माधव सित सिय जन्मतिथि सतसइआ अवतार ॥२१॥" लिखा है, जिससे रचनाकाल के सम्बन्ध में कुछ अस्पष्ट संकेत मिलता है।

५—ग्रंथ के लेखक ने ग्रंथ के अन्त में अपने और लिपिकाल के विषय में लिखा है:—

दोहा—"बान धरा निधि इन्दुयुत ॥ सम्वत विक्रम राव॥
आषाढ़ शुक्ल षष्ठी तिथौ॥ दिन भृगुवार सुहाव ॥१॥
लिख्यो भाव करि चाव सो॥ सतसैआ गुणमान।
हेतु आपने पठन को। सिंग्रिफ लाल सुजान ॥२॥

कवित्त—बान महि अंक शशि शम्वत वितीत भयो
देव अंस राजा मानो विक्रम समान के॥
आषाढसित षष्ठी औ वार भृगुवार वर
ऋतु सुखदाई सो सुहाई है जहान के॥
नाना प्रशंग जामे तुलसी सतसई जानो
पठन ही जाहि शुभ उदय होत ज्ञान के॥
लिषे हैं स्वकर ताहि सुन्दर सो आंक ताके
हर्ष युत पूर्ण भयो सिंग्रिफ सुजान के ॥३॥"

६—ग्रंथ की लिपि स्पष्ट, सुन्दर और सुवाच्य है।

७—यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० सं० क—३२ है।

२३—संक्षिप्त दोहावली रामायण—ग्रन्थकार—×। लिपिकार—श्री शिवप्रसाद। अवस्था—अच्छी है। पृष्ठ-सं०—२। प्र० पृ० पं० लगभग—१२ आकार—×। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—कार्तिक शुक्ल ११ एकादशी, सं० १९४६, रविवार। सन् १८८९।

प्रारंभ०—"श्री गणेशाय नमः॥ श्री महादेवाय नमः॥ श्री रामाय नमः॥
दोहा॥ सीताराम सरोज पद सुखद मन्जु धरि सीश॥

रामचरित किञ्चित कहौं करि दोहा पचीश ॥१॥
मायाधीश जगत जनक देखि दुखित संसार ॥
अवध राज दशरथ भवन भये प्रगट वपु चार ॥२॥
राम भरत शत्रुहन लषन राखे नृप गुरुनाम ॥
सुर नर मुनि हर्षित सकल जय जय धुनि सब ठाम ॥३॥"

मध्य०—"तात वचन मिथुराज तजि देव काज जिय जानि ॥
मुनि सुवेष सिय लषन सह वन गवने दिन दानि ॥७॥
केवट कुल उद्धार करि मग लोगन्ह सुख देत ।
जाइ चित्रकूटहिं टिके कछु दिन कृपा निकेत ॥८॥
फेरि भरत दै पादुका करि जयन्त इक नयन ।
आगे राम चले मिलत मुनि गण करुणा अयन ॥९॥"

अन्त०—"तहिं छन रावण सियहिं हरि गृद्धहिं युद्ध गिराइ ॥
लंका जाइ अशोक वन राखे सियतन राइ ॥१२॥
पति वियोग सीता दुखित कुटी वृथा नहिं पाइ।
जोहत वन मृग गृद्धकर कृपा कीन्ह रघुराइ ॥१३॥"

विषय—रामचन्द्र की जीवनी ।

टिप्पणी—१—ग्रन्थ अपूर्ण है । अन्त के पृष्ठ फटे हुए हैं । ग्रन्थ के प्रारंभ का 'करि दोहा पच्चीश' प्रकट करता है कि २५ दोहों की रचना की गई है, किन्तु १३ वें पृष्ठ के बाद फट जाने से ग्रन्थ का अंत्य भाग नहीं है ।

२—इसी से ग्रन्थ में लिपिकार का नाम नहीं मिलता है । पुस्तकालय के सूचीपत्र और लिपि के आधार पर 'श्रीशिव प्रसाद' ही इसके लिपिकार हैं । ग्रन्थ का अंत्यभाग नहीं होने के कारण, रचना-काल और लिपिकाल पर भी प्रकाश नहीं पड़ता है । लिपि का समय पुस्तकालय की सूचीपत्र के अनुसार उद्धृत किया गया है ।

३—ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट, सुन्दर और सुवाच्य है ।

४—यह ग्रन्थ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है । पुस्तकालय में ग्रंथ-सं० क—३५ है ।

१४—ब्रह्म अक्षरावलि शब्द झूलना—ग्रन्थकार—श्री अजब दास । लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी है । पृ०-सं० ३ । प्र० पृ० पं०

लगभग—६८ । आकार-×।—लिपि—नागरी । रचना-
काल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशायनमः अथ श्री अजव दास कृत ब्रह्म
अक्षरा-वलि शब्द भू लना लिख्यते

दोहा—अक्षर ब्रह्म सरुप जे वरणेउ मुनि सुरवेद
भक्ति ज्ञान वैराग्य मय कह्न-सकल गत खेद ॥१॥

भूलना—का कर्म के फन्द मे मन्द मन वांधिले तजि
मज्जार मृग आनि घेरि
मत्त गजराज के जोरत वकार ह्यौ देत जव डारि
पग लोह वेरी
संत के संग मे वैठले यार तूं वात यह पूवज्यौं यानि मेरी
अजवदास वर राम के नामकों गाइले फेर नहिं
जक्त मे होत फेरी ॥१॥"

अन्त०—"ऐ ऐकही दावकी जिति है यार रसनीरस सब्द
को नाही जाना साँच को छाडि के काँच ध्यै तूँ रहा
ऊठहिं वात को ठान ठाना पोथी हरि हाथ लिया डारि
हीरा दीया हान अरु लाभ नहि तान जाना अजवदास
भूल कि रीति यह देखिआँ सिंह के वाल को भेरि
हाना ॥३२॥

दोहा—ब्रह्म सिंह वर अनल सम अरु रवि उदय समान
अजब दास तेहि हृदय धरु सकल त्यागि मदमान ॥२४
इति श्रीअजबदासकृत ब्रह्म अक्षरी ज्ञान चालिसा समाप्तः ।'

विषय—दार्शनिक विषय पर फुटकर रचना है ।

टिप्पणी—१—क से प्रारंभ करके सभी व्यंजन और स्वर वर्णों
को प्रारंभ में रखकर पदों की रचना की गई है ।
२—यह ग्रन्थ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में
सुरक्षित है । पु० सं० दर्शन—८ है ।

२५—श्री सुदामा चरित्र—ग्रन्थकार—श्री हलधर दास । लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी ।
पृ० सं०—२० । प्र० पृ० पं० लगभग—६८ । आकार—×। लिपि—
नागरी । रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशायनमः श्री विजयर्थो अर्थ श्री हलधरदास कृत श्री-
सुदामा चरित्र लिख्यते ।

छप्पै—अवच कही प्रभु स्वप्न में टेरि सुनायो वेणु
जागुजागु रे हलधरा चन्द्र चूड पद रेणु १
चंद्र चूडपद जपन कर जग स्वपना को अयन
औ कछुक तूँ कान धरु सुधासरिसमोवयन २
कलउ के कविगण वहूत वरन्यो चरित अनन्त
कहां ले सुरस वखानौं सवे सलोने सन्त ३
तूं चरित्र मो मित्र को करु प्रसिद्ध संसार
जासु वाहुरी प्रेम तें हम कीन्ही आहार ४
उठे तत्त क्षण शब्द सुनि लगे करन गुणगान
प्रथमे इन्हे उचार गुरु पूरण ब्रह्म समान ॥५॥"

अन्त०—"महां तेज रविकृष्ण यश यद्पि न काहू से सहै
तद्पि कर्णहू के कहे ज्ञान भवन दीपक वरै ॥६३॥
अस विचारि कै हलधरा कछुक सुयश वरणन किये
मानो महा समुद्रते सुयी अग्र जलभर लीयो ॥६४॥
ब्रह्म सहस्र रसवे विशत कुसुमाकर सुदिपक्षदंश
सम्पूर्ण पोथी भई दीन उद्धरण प्रेमरश ॥६५॥
ग्रन्थ-संज्ञा छपै-॥३६४॥ ईति श्री सुदामा चरित्र दीन उद्धरण श्रीकृष्ण-दरसनो श्री सुदामा राजमणि भवन प्राप्तो नाम चतुर्थो प्रकाशः ॥४॥ ईति श्री सुदामा चरितः श्री हलधर दास विरचितायाँ सम्पूर्ण समाप्तः शुभमस्तु ॥"

विषय—श्री सुदामा के जीवन-सम्बन्धी काव्य।

टिप्पणी—१—यह ग्रंथ चार प्रकाश अर्थात् चार अध्यायों में समाप्त किया गया है।

२—पुस्तक के प्रारंभ या अन्त में लिपिकार रचनाकाल और लिपिकाल का निर्देश तो नहीं है, किन्तु ग्रंथ के अंत में 'ब्रह्म सहस्र' आदि पद से १००९ सं० के फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमा को ग्रंथ समाप्त होने का संकेत मिलता है।

३—पुराण के आधार पर कथा लिखी गई है। संपूर्ण ग्रंथ छप्पै में समाप्त हुआ है। अन्त में 'ग्रंथ संज्ञा छपै ॥३६४॥' से प्रतीत होता है कि लिपिकार ने इसके पूर्व ३६३ ग्रंथ और भी लिखे हैं।

४—ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० सं० इ-५ है।

२६—दृष्टान्त प्रबोधिका—ग्रंथकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी है। पृ० सं०—
४। प्र० पृ० पं० लगभग—६८। आकार—×। रचनाकाल—×।
लिपिकाल— ×।

प्रारंभ०—"श्री गणेशायनमः अथ दृष्टांट प्रबोधिका लिख्यते

दोहा—वाद समैं अरु हास्य में प्राण सकैंते होई
वृत्त अर्थ द्विज गाई के मारत देषिये कोई ॥१॥
ईतने ठौरन अठ जो कहत दोष तेहि नाहि
श्री भागवत पृमाण हैं शुक वखान्यौ ताहि ॥२॥"

अन्त०—"स्वान निन्द्रातह यह अमतीन गुरु ज्ञान
आगम निगम फणिन्द्र कहः तुलसी वचन प्रमान ॥३८॥
अति कृपाल रघुवंश मणि देखहु हृदय विचार
हत्यौ ग्राह हरिचक्र गहि गज गोपाल एकवार ॥३६॥"

विषय—विविध कथाओं के आधार पर दृष्टान्त-रचना।

टिप्पणी—१—यह ग्रंथ अपूर्ण है। ३६ पदों के बाद पूरा एक पृष्ठ १६८ संख्यक
नहीं है।
२—ग्रंथ के अंत का पृष्ठ नहीं होने के कारण लिपिकाल, रचना-काल
और नाम आदि का पता नहीं चलता।
३—यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है।
पु० सं० क—३६ है।

२७—निषेद बोधिका—ग्रंथकार-×। लिपिकार-×। अवस्था-अच्छी है। पृ०-सं०—३।
प्र० पृ० पं० लगभग—६८। आकार—×। लिपि—नागरी।
रचना-काल—×। लिपिकाल—×।

प्रारंभ०—"अथ देशनाम सोरठा जोगदेस एक होय ऊपर एक वैराग है
ज्ञान देश एक जोय एक देश विज्ञान है ॥४०॥
सुख दुख देश कहेत या विध के वहू देश हैं
सब पर भक्ति भनंत वसहि रामप्रिय दास जंह ॥४१॥"

अन्त०—"छपै खर्रत वाण अनेकूवाजि जहाँ तहाँ तरर्फरतः
हर्रतगजरथ टकादरनकों हिय थर्रतः
हर्रतमहिपददवनि सेषफणि दविमहि दर्रत मर्रत
अरिगण सोल्स कीसजंह तंह फर फर्रत ॥६॥

होहा—सब्र अस्थानन दुर्लभी गङ्गातीनि विसेषि
हरिद्वार अरु प्राग पुनि गङ्ग सागर पेषि ॥१०७॥
इति श्री निषेद्वोविका समाप्त नाम प्रथमो सर्गः ॥१॥"

विषय—विविध विषयों के लक्षण और नाम।

टिप्पणी—१—इस ग्रंथ में पंचदेवता, षोडशपूजा, हाव-भाव, चौदह रत्न, यम और यमपुर आदि के नाम और लक्षण लिखे हैं।

२—इस ग्रंथ का विवरण पुस्तकालय की सूची में नहीं है।

३—ग्रंथ के प्रारंभ का प्रथम पृष्ठ नहीं है। ग्रंथ की रचना और लिपि का समय नहीं दिया हुआ है, किन्तु ग्रंथ में कलियुग के कुछ काल-निर्देश का जहाँ प्रसंग आया है, लिखा है:—

दोहा—"प्रथमधिष्ठिर नृपति की साका कलिजुग युमानि
तीनि सहस चौवालिशौ वर्ख भोग लै जानि ॥५१॥
विक्रम एकशत पैतिशै वर्खभोग गनिलेहु
सहस अठारहजो भोगिहैं सालवाहनि येहु ॥५२॥
नागार्जुण शाकाकलि चारि लाख लखि भोग
कलकि शाका आठ शै एकईश वर्ष संजोग ॥५३॥"

इसमें विक्रम संवत् ११३५ प्रतीत होता है। संभवतः यह इस ग्रंथ का रचना-काल है।

४—ऊपर के चारो ग्रंथ पुस्तकालय में एक ही जिल्द में बँधे हैं।

२८—दृष्टान्त प्रवोधिका—ग्रंथकार—श्री रामलला सरण वैद्य। लिपिकार—श्री घनश्याम लाल। अवस्था–अच्छी है। पृष्ठ-सं०–४। प्र० पृ० पं० लगभग—२८। आकार—×। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपि-कार—×। लिपिकाल—ज्येष्ठ, कृष्ण ११ एकादशी, सं० १८९९ (१८४२) शनिवार।

प्रारंभ०—"श्री गणेशाय नमः दोहा रामचरन तिसरासे तक षडगुण
दिव्य वषानि पूरण पट श्री राम मे सब दृष्टांत न आनि १
ईस्वर सबनहि राम सम मै विचारि कहि वात
रामचरन वडमाल को सवे चतुर ललचात २
परब्रह्म अवतार सव निरगुण अवलम्ब डोल
रामचरण मनि एक वहु कोई कोई लेत अमोल ३"

अन्त०—"रामचरन सव तजे विनु भजे राम पद मूल
ज्ञानकर्म्म अरु धर्म्म सव ज्यौं सेवर को फूल ९९

रामचरन वैराग बिन सबै साधना झूठ
भ्सम होय चाउर लिए जिमि कोउ भूसी कूट १००
अस्फुर सम दृष्टांत सतक रामचरन रस हेतु
जिमि वस्तु सुआदी करि विजन भोजन हेतु १०१
इति श्री दृष्टांत बोधिका विवेक लछन वर्ननाम प्रथम सतक समाप्त।"

विषय—दृष्टांतपरक रामभक्ति काव्य।

टिप्पणी—ग्रंथ पाँच शतकों में विभक्त हैं। पुस्तकालय में दो शतक दो जिल्दों में है। पुस्तकालय की क्रम-संख्या दोनों की एक ही है। ग्रंथ की लिपि प्राचीन और अस्पष्ट है।

लिपिकार ने ग्रंथ के अन्त में अपने सम्बन्ध में लिखा है—"हस्ताक्षर घनस्याम लाल साकीन चाकंद प्रगने सोनउत" ग्रंथकार के सम्बन्ध में—"रामलला सरण वैष्णव श्री अयोध्या-वासी, श्री जानकी कुंज।"

यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क—३७ है।

२६—नन्दमदन हर छन्द रामायण—ग्रन्थकार—शिवप्रसाद। लिपिकार—शिवप्रसाद। अवस्था—अच्छी है। पृष्ठ-सं०—४। प्र० पृ० पं० लगभग—१२। रचनाकाल—ज्येष्ठ शुक्ल १३ त्रयोदशी सं० १९४३ (१८८४) सोमवार। लिपिकाल—कार्तिक शुक्ल १० दशमी, सं० १९४६ (१८८७) शनिवार।

प्रारंभ०—"श्री गणेशायनमः॥ श्री शिवायनमः॥ श्री रामचन्द्रायनमः॥

मदन हर छन्द॥—जय जय गुणराशी सब उरवासी
अज अवि नासी जन त्राता सब सुखदाता॥
जय विश्व दुखारी देखि अघारी
जग हितकारी पितु माता बुद्धि बल व्राता॥
धरि चरि सुभगतन राम भरत लषन सुत्रुपुहन
जन्म भले दशरथ घर ले।
करि मप रखवारी मुनि तिय तारी शिव धनु भारी
राम दले त्रिभुवन विचले॥१॥

कहि भृगुपति जय जय फिरे धनुष दै कुटिल नृपन्हगै
गंवहि सदन नभ झरे सुमन ।
मिथिलेश अनन्दे कौशिक वन्दे
रघुकुल चन्दे राखे पन हर्षे पुरजन
अचरज वरात छज सहसरात सज
अवलोकत अज भये चकित सारदा सहित ॥
सब साज अमाया निज उपजाया एक न पाया
सब अलषित बहुविधि अगणित ॥२॥"

अन्त०—"दै लंक विभीषण चलेसिय लषन सहित
सुप्रयजन चढि रामा रथ अभिरामा ।
अपने पुर आये अवध वधाये
घर घर गायें गुण ग्रामा जय सुख धामा ॥
पितु राज विराजे तिहुपुर गाजे अनुपम वाजे
वाज विपुल सब साज अतुल ॥
शिव प्रसाद सुरगणवरषि सुमन वन निरषि मगन
मन छवि मन्जुल जय जय संकुल ॥६॥

दोहा ॥ हर दृग स्तुति ग्रहसोम सित जेठ त्रयोदश चन्द ॥
शिव प्रसाद लस रामयश नन्दमदन हर छन्द ॥
इति श्री नन्दमदन छन्द रामायण शिव प्रसाद कृत
सम्पूर्णम् ॥ शुभमस्तु ॥ सिद्धिरस्तुः ॥

विषय—राम-जीवन-सम्बन्धी फुटकर रचना ।

टिप्पणी—१—ग्रन्थकार ने अपने सम्बन्ध में अन्त में लिखा है—"शिव प्रसाद कायस्थ श्रीवास्तव गयावासी अब अवगुणराशी श्री बापू गंगा विष्णु श्रीवास्तव कायस्थ गया महल्ला बहुआर चौरा निवासी हेतुर्दुलिखित्वा शुभ सम्वत् १९४६ कार्तिक शुक्ल दशम्यां सनिवार । श्री सीता राम ।

२—यह ग्रन्थ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है । पु० सं० क-२८ है ।

३०—पद्मावती—ग्रंथकार श्री मलिक मुहम्मद जायसी । लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी, प्राचीन कागज । पृष्ठ-सं०—३८२ । प्र० पृ० पं० लगभग १८ । आकार—× । रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ०—(कुछ पंक्तियाँ नहीं पढ़ी जा सकी हैं; अतः प्रारंभ की सात पंक्तियाँ छोड़कर—)

"भोर होत् नीसी तम रहित तव हम करव पे आन,
जिमि उदौत रवि किरिन के पंछी तजत असथानं
सुमरो एक आदी कर तारा ॥ जो जीव दीन्ह लीन्ह संसारा
कीन्हे सी प्रथम जोती परगासा ॥ कीन्हे सी तहां........।
आगे अस्पष्ट हैं।

अन्त०—"माआ मोह तजा सभ हाथा देखिन बुद्धि नीदान न साधा
छाडा लोग कुटुंब सब कोइ भए.........................।
.........राजा सोउ अकेला जे हिरे पंथ गहीले होए भला
काकर घर काकर मद माआ ताकर सभ जाकर जीव-काआ

विषय—रानी पद्मावती और रतनसेन की जीवन गाथा।

टिप्पणी—१—ग्रन्थ प्राचीन काल का लिखा हुआ है। लेखन-शैली पुरानी होने के कारण पढ़ने में असुविधा होती है। पोथी के मुखपृष्ठ पर दो चित्र दिए हुए हैं। उन चित्रों में ग्रन्थ का पूरा भाव भर दिया गया है।

१—चित्र—राजा रतनसेन जोगी के वेष में बैठे हैं। सामने धनुष-बाण हैं। दो व्यक्ति उन्हें कुछ समझा रहे हैं। वहाँ लिखा है—"राजा रतनसेन जोगी हो के बैठे।"

२—दूसरा चित्र—बाईं ओर रानी सरस्वती, राजा की माता, उनके साथ तीन सहेलियाँ भी हैं। दूसरी ओर दायें भाग में अपने सहेलियों के साथ रानी नागमती। सामने पीकदान रखा हुआ है। लिखा है—"रानी सरसती राजा की माता।" दूसरी ओर लिखा है—"रानी नागमती"।

२—पोथी के प्रत्येक पृष्ठ में, उस पृष्ठ के भाव दो पंक्तियों में लिखे गए हैं जो अस्पष्ट हैं।

३—यह ग्रन्थ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पुस्तकालय की क्र० सं० ४३ है।

३१—पञ्चकोश सुधा—ग्रन्थकार—विद्यारन्यतीर्थ। लिपिकार—मुकुंदलाल। अवस्था—अच्छी है। पृष्ठ-सं०—४३। प्र० पृ० पं० लगभग—२६। आकार—×। रचनाकाल—×। लिपिकाल—सं० १८६८, ठाकुर रथयात्रा, सोमवार।

प्रारंभ०—"भैरव ॥ श्रीगनेस विघन हरन मंगल सुख कारी ॥
आदि मंत्र के सरूप नाद विदुधारी ॥१॥
नाग वदन एक रदन सें दुर सिंगारी ॥
सिद्धि बुद्धि चँवर करत भँवर गुंज भारी ॥२॥
बुद्धिनाथ भाल चंद्र सोहत भुज चारी ॥
विधि हर हरि रूप प्रगट तेरी छवि न्यारी ॥३॥
देवदेव आनन धर जीव ढर निढारी ॥
दोउनको मिलन ऊपर त्रिभुवन वलिहारी ॥४॥
परम शिव विहार भूमि जैसी मातु काशी ॥
गंगा सिंगार हार चारि मुक्ति दासी ॥१॥
बारानउ सिव मसान गौरि पीठ भासी ॥
क्षेत्र मोद विपिन अंग पाचौ सुख रासी ॥२॥"

अन्त०—"मलार—निर्भय रहँथु साधु व्रह्मन सव बाढउ शिव पद नेह ।
पर स्वारथ के कारन लागउ धन विद्यावल देह ॥३॥
प्रेम कमल मानस मै फूलौ छुटौ विषय कै तेह ॥
देव देव संपूरन करि हँहि मोर मनोरथएह ॥४॥ १२७॥
जा दिन ठाकुर को रथ साजत ॥ तादिन पञ्च क्रोश सुधा ।
यह पूरन छवि से छाँजत ॥१॥
संवत आठ अंक अष्टादश वार सोम को राजत ॥
शिव सरूप एहि पुन्यनपत के वरनत भोरी मति लाजत ॥२॥
श्रीमत काशी राज पियारे.............................।
संतवटी—जब आछे आठौ अंग मिले तब रंग सुधा में आया ।
समाधान बापू साहेब का ध्यान सुकविका भाया ॥
परम धरम तौ वड बापू का आसन साज विछाया ॥१॥"

विषय—काशी नगरी, विश्वनाथ मन्दिर, अन्नपूर्णा मन्दिर तथा शिव-सम्बन्धी रचना ।

टिप्पणी—१—यह ग्रन्थ विशेषतः काशी के माहात्म्य पर लिखा गया है ।
२—लिपिकार का नाम यद्यपि स्पष्ट नहीं है तथापि अन्त में निम्नलिखित पंक्तियों से नाम प्रकट होता है—
"आज्ञा पाय मुकंदलाल को मीठे सुर सो गाया ॥
दुवे अचारज हरी राम का वाकी त्रिगन गनाया ॥

करम अकाम सकाम बनत सो दुविध समाधि बनायो ।
क्षेत्र प्रदक्षिन विमल धार सों दिल का दोष बहाया ॥३॥
सिद्धिन को गिनती कुछ नाही शिव से प्रेम बढ़ाया ॥
महादेव जोगेस्वर पाके करत जनन पर दाया ॥४॥१२६॥
इति विद्यारन्य तीर्थ कृत पंचक्रोश सुधा॥"

३—लिपि सुन्दर है, किन्तु शैली प्राचीन होने के कारण पढ़ने में स्पष्टता नहीं है। इस ग्रन्थ से उस काल की काशी की अधिक विशेषता प्रकट होती है।

४—यह पोथी श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० सं० क—४१ है।

———

(३२) पद्मावती—ग्रंथकार—मुहम्मद जायसी। लिपिकार—झन्दुराम। अवस्था—अच्छी, प्राचीन, हाथ का बना मोटा देशी कागज। पृष्ठसं०—३७६। प्र० पृ० पं० लगभग—३४। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—भाद्र, कृष्ण, ११ एकादशी, सं० १८७३, (१८१६) मंगलवार।

प्रारंभ की पंक्तियाँ—"श्रीगनाधि पतेन्मह श्री भवानी जी सहाऐ श्री ठाकुर जी सहाऐ श्री सीवसंकर्सहाऐ श्री संसती जी सहाऐ श्री पोथी पदुमावती कथाः महमद कवी वीरचीत०

हमीरौ आदी ऐक करतारा। जेही जीव दीन्ह कीन्ह संसारा :

कीन्हेसी प्रथम जोती प्रगासा : कीन्हेसी तब परवत कवीलासा :

कीन्हेसी अंग्नी पवन जल खेहा : कीन्हेसी बहुतै रंग उरेहा० ॥

कीन्हेसी धरती सर्गपतारा कीन्हेसी वरन वरन औतारा

कीन्हेसी सात समुंद्र मंडाव्रह : कीन्हेसी भुअन चौदहो खंडा : ॥"

अन्त०—"महमद महमद सरन गहो डीगै न मन से सोइ............।"

विषय—पद्मावती और राजा रतनसेन की जीवनी। प्रेममार्गी सूफी साधना का काव्य।

टिप्पणी-१—लिपि अत्यन्त प्राचीन है। प्रकाशित प्रतियों से पाठभेद भी प्रतीत होता है।

२—लिपिकार ने अपने सम्बन्ध में, अन्त में निम्नलिखित पंक्तियाँ दी हैं:—"इती स्री पदुमावती पोथी कथा संपुरन समापतं सीधीरस्तु सममस्तु जो देखा सो लिखा ममदोषन दीअते लीखा पोथी झन्दुरामछतफुरकु वरग्राह्नु रौनी-आर शहपुरीआ मोकाम दाउदनगर अहमदगंज प्रगने अनछा छुवेवीहार शवत १८७३ साल माहभादोवदी ११ लीखलतेआर भेलवार मंगलवार सन् १२२४ बारसै चौबीस सनः अमल अंगरेज बहादुर साहेब का हुकुम बादशाह का जो कोई पढ़ै हींदु इआ मुसलमान को दंडवत वंदगी बसबस अपना खुसी से लीखा दसखत खासः झन्दुराम लीखा पोथी देख उतारल ऐतीछभ॥" इससे लिखनेवाले का पता चलता है। यह भी ज्ञात होता है कि किसी अँगरेज की सेवा अथवा आज्ञा से लिखा है।

३—यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं०—क-४४ है।

(३३) पद्मावती—ग्रंथकार—श्री मलिक मुहम्मद जायसी। लिपिकार—चुनी लाल कर्ण। अवस्था—अच्छी, हाथ का बना, मोटा कागज। पृ० सं०—३३४। प्र० पृ० पं० लगभग—३७। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—भाद्र शुक्ल, १२ द्वादशी, सं० १८९१, (१८१६) सन् १२४१ साल, रविवार।

प्रारंभ०—"स्रीगनेसाऐन्मः सारदाससरस्वतीजेन्मः पुस्तक पदुमावती कथा क्रीत महमद कवी वीरचीते—
सुमीरौ आदी ऐक कर तारा० जेही जीव दीन्ह कीन्ह संसारा०
कीन्हेसी प्रथम जोती प्रगासा कीन्हेसी तब परवतकवीलासा०
कीन्हेसी पवन अग्नी जलखेहा कीन्हेसी वहुते रंग उरेहा०॥
कीन्हेसी धरती सर्ग पताला० कीन्हेसी वर्नवरन औतारा०
कीन्हेसी सात समुद्र ब्रह्मण्डा० कीन्हेसी भुअभ चौदहो खंडा
कीन्हेसी दीन वनकर ससीराती कीन्हेसी नखतर तरा ऐनपाती
कीन्हेसी सीत धूप वो छाहा कीन्हेसी मेघ वीजुलेही माहा"

अन्त०—"महमदमहमद सरन गही डीगैनमन ते सोइ
वीधीकीया कौनहु जुगती कोधनीमहिमालेहु"

विषय—पूर्ववत्।

टिप्पणी—१—ग्रंथ के लिपिकार ने अन्त में अपने सम्बन्ध में लिखा है—
"इतीस्रीपोथीपदुमावतीकथासपुरनदेखोसोलीखाममदोखनहीकरते पंडीतजनसोवीनतीमोरीछुटलअछरलेवसवजोरी० पोथीलिखावल मोहनसाहुवासीहैकसोअहमदगंजप्रगनेअनछासरकारसुवेवीहार-कीलेरोहीतासवुलहैपहलेजीलेसहावादअमलैअंगरेजवहादुर दसखत चुनीलालकायस्थकर्नसाकीनमन्दारसंवत१८९१ भादौ सुदीदवा-दसी १२ रवीवारके तआरभयासन १२४१ साल।"

२—लिपिकार श्री चुनीलालजी किसी मोहनसाहु के यहाँ रहते थे, वहीं रहकर उन्होंने यह ग्रंथ लिखा है, ऐसा ऊपर उद्धृत वाक्यांश से प्रकट होता है। लिपि प्राचीन है।

३—ग्रंथ की समाप्ति के बाद एक सादे कागज पर लिखा है—
"यह पोथी थाने दाउदनगर में नीलाम हुई लीलाधरलाल ने

बाबू सिंग्रिफ लाल के वास्ते लिया मि० आषाढ़ शुक्ल २ संवत् १९३२ वि० ।"

यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है। पु-क्र-सं० का-४५ है।

(३४)—पाण्डवचरितार्णव—ग्रंथकार—देवीदास। लिपिकार—देवीदास। अवस्था—अच्छी हैं। पृ० सं०–१४१। प्र० पृ० पं० लगभग—४८। लिपि—नागरी। रचनाकाल—आश्विन, कृष्ण, ११ एकादशी, सं० १८४२ (१७८५)। लिपिकाल—आश्विन, कृ० ११, सं० १८४२।

प्रारंभ०—"श्री श्रीगणेशायनमः। अथपाण्डवचरितार्नवलिख्यते। निबाहा॥ विधिनिविनसिजादैमंगलसकलछावैसंकरचमूदुरावैपुंहृषसाजको॥ संपदासदनल्यावै आपदासदानसादैतापतीनउ भगावैलहै सभसाजको॥ जनदेवीदासगावैकरिरचितमाहचावै वार एक ध्यानध्यावै देवगनराजको॥ संततिछमतिपावैभगति-भुगति पावैरिधिसिधिवृद्धिआवैछजससमाजको॥१॥

दोहा—ध्याइचरनपूजनकरयौवन्दिचहयोवरदान॥

अभिमतवर प्रारंभयमपूरौदयानिधान॥"

अन्त०—"दोहा—विकटवेषधरिभक्षिवेकारन आवतसोइ भेदपाइअर्ज्जुन-कुपिततजेबानविसभोइ ३६ सञ्चितसरकोटिन्हतजेलगेताहिकेअंग तिलभरिनघावनहोततहिहोतत्रानसवभंग ३७

छप्पै—गर्ज्जतआयोनिकटसर्प रथलीलनजवही पांडव के दल···।"

विषय—पाण्डव-चरित-सम्बन्धी काव्य।

टिप्पणी—१ ग्रंथकार और लिपिकार दोनों एक ही व्यक्ति प्रतीत होते हैं। ग्रंथ अपूर्ण है। ग्रंथकार के नाम का पता प्रारंभ के कुछ पदों को पढ़ने से ही चलता है। ग्रंथकार रामगढ़ राजा के आश्रित थे। इनका घर जिला हजारीबाग के इचाक ग्राम में था। इन्होंने ग्रंथ रचना का समय दोहे में दिया है—

दोहा—'पक्ष वेद वसु महि असित, हरितिथि आश्विन मास,

पाण्डवचरितार्णकथा, वरनत देवीदास।"

ये अम्बष्ट कायस्थ थे। ग्रंथ में लिखा है:—

"छप्पय—छत्रियवरभुविख्यातवेनुवंसीगुनसागर वीरधीरश्रीतेजसिंहभूपाल उजागर ॥ तसुसुतपारसनाथसिंहमहिपालमहामति सकलनीति के सदनजासुसुरतिमनमवजति ॥ तससुतप्रसिद्ध उदारनृपश्रीमनिनाथ मृगेसमनि । तिन्ह निकट ललित पाण्डवचरितवरनिकहौ-वहुछन्दगनि ॥६॥

दोहा ॥ काएथ जाति अंवष्ट कुल श्री धरनीधरदास ।
सज्जन पृय अति सान्तमतिवास राम गढ़ खास ॥
जुगल पुत्र गुन भवनतसु अनुज संकर दास ।
सु अनुज राघवदास जहि साधु सुमति प्रकास ॥११॥
राघवदासहि पुत्र द्वै सममति गुनपरकाश ।
अनुज देवीदास त्यौं अनुज भवानी दास ॥१२॥"

ग्रंथ पूरा नहीं है । ४० तरंग के बाद ४१ तरंग में २७ पद ही हैं । बाद का अंश नहीं है । यह ग्रंथ महाभारत की कथा के आधार पर लिखा गया है । भाषा साफ और सुन्दर है, भाव प्रौढ़ हैं यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय गया में संगृहीत है । पु० क्र० सं० का—४७ है ।

(३५)—पार्वतीमंगल—ग्रंथकार—गोसाईं इन्द्रसीदास जी । लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी है । पृ० ८ । प्र० पृ० पं० लगभग—३४ । लिपि—नागरी । रचनाकाल—× लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ०—"श्री गनेसायेमः ॥ श्री पोथी पारवती मंगल लीषते ॥
विनै गुरहि गुनिगनहिगिनिहि गननाथहि ॥ हीदैआनिसिअरामधरे धनु माथहि ॥
गावौ गौरी गिरीश वीवाह सोहवन । पावन पाप नसावन भुविमन भावन ॥
कवित्त रीतिनहिं जानौ कवि न कहावौं ॥ शंकर भरित सुसरित मनहि अन्हवावै ॥
पर अपवाद विवाद विहषित वानिहिं ॥ पावन करौ सो गाए भवेस भवानिहि ॥
जऐ संवत फागुन सुदि पांचैगुरदिन ॥ अश्वनिविरम्यौमंगल सुनिसुष छिनछिन ॥"

अन्त०—"वहुत भांति समुभाऐ फिरे विलषितमन ॥ संकर गौरि समेत गऐ कैलासहि ।
उमामहेस विवाह उछाहभुअन भरे । सवके सकल मनोरथ विधिपूरन करे ।
प्रेम पाटपपटगेरिगौरिहरगुन मनि । मंगल हार रचेउककविमतिमृगलोचनि ॥
छंद—मृगनऐनिविधुवदनी रचेउमनि मंजु मंगलहार सो ।
अधरहु जुवती जन विलोकि तिलोक सोभा साल सो ।
कल्यान काज उछाह व्याह सनेह सहित जो गाइ है ॥
तुलसी उमा संकर प्रसाद प्रमोदमनप्रिअ पाइ है ॥१६॥
इतिश्री गोसाईं इन्द्रसीदास विरचिते शिव पार्वतीमंगलसम्पूर्णम् ॥"

विषय—शिव-विवाह-सम्बन्धी काव्य।

टिप्पणी १—यह ग्रंथ बड़ा ही अच्छा है, गेय है। ग्रंथकार ने पार्वती का जन्म, उनके माता-पिता की विवाह-चिंता, नारदजी का आगमन, नारदजी के स्वागत आदि को काव्यात्मक रूप से वर्णित किया है। भाषा प्रौढ़, परिमार्जित है। ग्रंथ सुपाठ्य है। लेखन-शैली प्राचीन है।

२—प्रतीत होता है, ग्रंथकार ही लिपिकार भी है। लिपिकार ने अपने संबंध में कुछ भी नहीं लिखा है। यद्यपि ग्रंथ के प्रारंभ या अंत में रचना-काल या लेखन-काल की कोई भी चर्चा नहीं है, तथापि ऊपर की "जपं संवत्" आदि से ग्रंथ की रचना का कुछ समय-संकेत मिलता है। ग्रंथ अनुसंधेय है।

३—यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० का—४८ है।

(३६)—बरवा रामायण—ग्रंथकार—गो० तुलसीदासजी। लिपिकार—सिंधुपाल। अवस्था—अच्छी, प्राचीन, हाँथ का बना मोटा कागज। पृ० सं० १६। प्र० पृ० पं० लगभग-२०। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—चैत्र शुक्ल अमावास्या, १६०५ सं० मंगलवार।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशायनमः अथवरवारामायण लिषते कृत तुलसीदास ॥
गननायक वरदायक देव मनाय ॥ विघ्नविनासकवरणप्रकासकहोउसहाय ॥१॥
श्रीगुरुपदअंबुजरजहृदयेसभारि ॥ वरनन करौ रामजस कृपासुधारि ॥१॥
श्री रघुवर अंगसोभित अतुलित काम ॥ भक्तचकोरपूर्ण विधुकरउप्रणाम ॥३॥
भरतभारतिनायक छंदवंद विधान ॥ वालमीकमहघटीरही पुनिकर गुण गान ॥४॥
लषण मधुर मृदु मूरति सुमीरन कीन्ह ॥ जिन्हकीकृपा रामजसवरनैलीन्ह ॥५॥"

अन्त०—"धर्मकल्पतरुरघुवर आरतवंधु ॥ तुलसि द्रवतदिनलषिकरुना सिंधु ॥२४॥
रामधामकरपरचि केवल नाम ॥ तुलसि लिषेउनमालहितेहिविधिवाम ॥२५॥
साधनसकलराम विनु लागहिसून ॥ तुलसिनाम चिजकरुवढ़ दस गुन ॥२६॥
एहिविधि अवधनारिनर प्रभु गुणगान ॥ करहिदिवसनिसीतुलसिजानतजान ॥२७॥

भजन प्रभाव भांति बहु वरनेउ वेद ॥
तुलसि गायउ हरि जस मिट भवषेद ॥२८॥
करण पुनीत हेतु निज वचन विवेक ॥
तुलसि ऐसेहु सेवत राषत टेक ॥२६॥
सिताराम लषन संग मुनि के साज ॥
तुलसि चित चीत्रकुटहिवसरघुराज ॥३०॥

इतिश्री उत्रकांण्ड समाप्त मीति चैत्रमासे शुक्लपक्षे अमावश्यांग भवमवासरे १९०५ ॥

विषय—राम-जीवन-संबंधी प्रसिद्ध काव्य ।

टिप्पणी—१—ग्रंथ की लिपि स्पष्ट तथा सुंदर है । लिखावट प्राचीन है ।

२—लिपिकार ने अपना नाम ग्रंथ के अन्त में नहीं दिया है, किंतु ग्रंथ-समाप्ति के बाद आवरण-पृष्ठ पर उसी लिपि और स्याही से लिखा है—'सिंधुपाल'; इससे प्रतीत होता है, यही लिपिकार हैं ।

३—ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है । पु० क्र० सं० का—५० है ।

(३७) बरवा रामायण—ग्रंथकार-गो० तुलसीदासजी । लिपिकार—वैष्णव प्रेमदास । अवस्था—अच्छी है, मोटा देशी कागज । पृ०सं० —१४ । प्र० पृ० पं० लगभग—२४ । लिपि—नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—सं० १८८७ (१८३०) ।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशायनमः ॥ गण नायक वरदायक देवमनाय ॥
विघ्नि विनासन दासन होहु सहाय ॥१॥
श्री गुरुपद अंबुज रज हृदय संभारि ॥
वरनन करौं रामयस कृपा सुधारी ॥२॥
श्री रघुवर छवि सोभित अतुलित काम ॥
भक्त चकोर पूर्ण विधु करो प्रणाम ॥३॥
भरत भारती नायक छन्द विधान ॥
वाल्मीक मह घटी रही कर गुण गान ॥४॥
लषन मधुर मृदु मूरति सुमिरण कीन्ह ॥
तिन की कृपा राम जस वरणै लीन्ह ॥५॥
लवन अंबु निधि कुंभज संकट हार ॥
भरत चरण अनुगामी सहित विचार ॥६॥"

अन्त०—"एहि विधि अवध नारि नर प्रभु गुण गाण
करहि दिवस निसि सुष सो जानत जान ॥४०२॥
भजन प्रभाव भांति वहु वरणी वेद ॥
तुलसी गाय सुहरि जस मिटि भव षेद ॥४०३॥
करण पुनीत हेतु निज वचन वीवेक ॥
तुलसी अैसेहु सेवत राघत टेक ॥४०४॥
सीता राम लषण संग मुनि के साज ॥
तुलसी चित चित्रकूट हि वस रघु राज ॥४०५॥

इति श्री वरवे रामायणे उत्तर कांड समाप्त॥ लिषितं वैस्नव प्रेमदास ॥संवत॥१८८७॥"

विषय—राम-जीवन-संबंधी काव्य।

टिप्पणी १—ग्रंथ की लिपि स्पष्ट तथा सुंदर है। ग्रंथ प्राचीन होने के कारण बीच में, कुछ स्थलों में फट गया है और कहीं-कहीं अक्षर घिस गये हैं।

२—पूर्वोक्त ग्रंथ से इसमें पाठभेद है। इसमें दन्त्य 'न' के स्थान पर मूर्धन्य 'ण' का प्रयोग किया गया है। प्रारंभ में ही—पूर्व के ग्रंथ में है—"विघ्न विनासक वरण प्रकासक होहु सहाय।" इस ग्रंथ में है—"विघ्नि विनासन दासन होहु सहाय।" इसी प्रकार इसमें जो अंश दोनों ग्रंथों के उद्धृत किए गए हैं, उनमें ही स्पष्ट पाठभेद है।

३—उस ग्रंथ के प्रत्येक कांड की पृथक् पद-संख्या दो हुई है; इसमें संपूर्ण ग्रंथ की पद-संख्या एक साथ ही ४०५ दे दी गई है।

४—यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं०—का—५१ है।

(३८) बरवा रामायण—ग्रंथकार—गो० तुलसीदास। लिपिकार—जुगलकिशोर लाल। अवस्था—अच्छी। पृ० सं०१२। प्र० पृ० पं० लगभग—४६। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—श्रावण, कृष्ण ५ पंचमी सं० १९१९ (१८६२) बुधवार।

प्रारंभ०—"ॐ श्रीगनेसाय नमः॥ अथवरवैरामायनं लिख्यते भाषाकृते गोसाईं तुलसीदास जी का॥

दोहा॥ गननायक वरदायक देव मनाय॥ विघ्नि विनासन दासन होहु सहाय॥१॥
श्रीगुरुपद अंबुज रज हृदय संभारि। वरनन करौं रामजस कृपा सुधारि॥२॥
श्रीरघुवर छवि शोभित अतुलित काम॥ भक्त चकोर पूर्ण विधु करो प्रनाम॥३॥
भरत भारती नायक छंद विधान॥ वालमीक महं घटी रही कर गुनगान॥४॥
लषन मधुर मृदु भूरति सुमिरन कीन्ह॥ तिनकी कृपा रामजस वरनै लीन्ह॥५॥
लवन अंबुनीधि कुंभज संकटहार॥ भरत चरन अनुगामी सहित विचार॥६॥
केसरि सुअन वीश्वर रघुपति दास॥ जासु कृपा निर्मल मति छंद प्रकास॥७॥
अवध पुरी दसरथ नृप सुकृत सनूप॥ कोसिल्यादिक रानी अमित अनूप॥८॥"

अन्त०—"भजन प्रभाव भांतिवहुवरनीवेद॥ तुलसी गायंजुहरिजस मिटिभव षेद॥४०३॥
करन पुनीत हेतु निज वचन विवेक॥ तुलसी असेहु सेवत राघत टेक॥४०४॥
सीतारामलषन संग मुनिके साज॥ तुलसी चीत चीत्र कूटही वस रघुराज॥४०५॥
इतिश्री वरवै रामायनेउत्तरकांडसमाप्तः॥ सिद्धिरस्तुशुभमस्तु॥ शुभमूभूयिया त्॥"

विषय—राम-जीवन-संबंधी काव्य ।

टिप्पणी १—ग्रंथ की लिपि स्पष्ट, सुन्दर और सुवाच्य है। पूर्वोक्त ग्रंथों से इसमें पाठ-भेद है। ग्रंथ के अंत में, समाप्ति के बाद, एक अस्पष्ट कवित्त है, जो किसी गुरुबख्शलाल का लिखा हुआ है। अंत में एक पद का कमलबन्ध भी लिपिकार ने दिया है। इसमें सभी पदों की संख्या ४०५ है। २—यह पोथी श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्रम सं० का—५२ है।

(३६) सूरसागर—ग्रंथकार—श्री सूरदास जी। लिपिकार—श्री विभीषण। अवस्था—अच्छी है। पृ० सं० ३। प्र० पृ० पं० लगभग—७६। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—फाल्गुन, शुक्ल ७ सप्तमी सं० १६१३ (१८५७) मंगलवार।

प्रारंभ०—"भजन—परदेसी की बात कहै कोई परदेसी कि वात ॥१॥
जवसे विछुरे नन्द सांवरो नही आवत नहि जात ॥१॥
मन्दि अर्द्ध अवधि पतिवदीगय हरिअहारटरिजात
अजेयामख अनुसारथ नाहीं तांतेजीय ववरात ॥२॥"

अन्त०—"हरिविन कोई काम न आयौ
जगमंहमया झूठे के कारण नाहक जन्म गंवायौ
कंचन कलस विचित्र चित्र लिखि रचि रचि महल बनायौ
घरतें निकारिवाहीर लै डारोक्षिण एक रहनन पायौ
लोग कुटुम्व मरघट के साथी करि अपनों अपनायौ
दीनदश कीन्ही लोक बड़ाई ना तो धोय छड़ायौ
कहती रहति तरे संगहो त्रिया धुति जरौं धूर खायौ
चलतकिवेर चीतचोरमोरिभूयेकौंपगनतनन पठायौ
जाकर नहमतन मन पुललिलाड़ अनेक लड़ायौ
तोरि लीयौकटिहूँ से धागा तापर वदन जरायौ
वोलिवोलि वरनात मीत्र हित लीन्हिगथ जेहि शभायौ
पांसपरेसो काजकाल के अवसर तिनहिन आनिकढ़ायौ
अधम उधारण गणिका तारण औ सो हरि विसरायौ
सपने हरिको नाम न लीन्हो सूर एहि पछितायौ ॥२६॥

दोहा—मलय दारुसम प्रेम करि देह ब्रह्मजुत धार
सूरगवन हरिपवन करि पूछत पुनितियनाम ॥३०॥
ईति श्री सुरदासकृत सूरसागर पद समाप्तः"

विषय—सूर-साहित्य ।

टिप्पणी—१-लिपि प्राचीन है । शैली और लिखावट ठीक नहीं है । प्रारंभ में "अथ भाषाभूषण लिख्यते" लिखा है, किंतु दो-तीन पंक्तियाँ किसी तीसरे स्थल की लिखने के बाद 'सूर' के पद से प्रारंभ कर दिया है । एक टेक, फिर गेय पद है ।

२—यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है । पु० सं० का—५५ है ।

(५०) भाषाभूषण—ग्रंथकार—श्री पदुमन दास । लिपिकार—श्री विभीषण । अवस्था—अच्छी है । पृ० सं० ५ । प्र० पृ० पं० लगभग—७६ । लिपि—नागरी । रचना काल—×। लिपिकार—फाल्गुन शुक्ल ७ सप्तमी सं० १९१३ (सन् १८५७) मंगलवार ।

प्रारम्भ०—"श्री गणेशायनमः अथ भाखाभूषण लिख्यते दोहा

विघनहरणतु महौसदागणपति होहुसहाय विनति करजोरे करौं दीजैग्रन्थवनाय ॥१॥

जिनकीनो परपंच अवअपनिइच्छापायताकौं हौं बन्दन करौं हाथ जोरि सिरनाय ॥२॥

करुणाकर पोषत सदा सकल सिष्टिकेप्रान अैसे ईस्वर को हियें रहौरैनदिन ध्यान ॥३॥

मेरे मन में तुम बसौ यह केतेकहिजायतातें यह मत आपसौं लीजै क्यों न लगाय ॥४॥"

अन्त०—"अलंकार सब अर्थ के कहै एक सै आठ करे

प्रगट भाषाविषैदेखि संस्कृत पाठ ॥१६६॥

शब्द अलंकृत अर्थ बहु अक्षर को संयोग

अनुप्रासखट विधि कहैं तेसे भाखा जोग ॥१६७॥

ताहिसार के हेत यह कीन्हो ग्रन्थ नवीन

सो पण्डित भाषा निपुन कवितविषै परवीन ॥१६८॥

लक्षणतिय अरुपुरुष के हावभाव रस धाम

अलंकार संजोगते भाषाभूषण नाम ॥१६९

भाषाभूषण ग्रन्थ को सो देखैं चित्तलाय

विविधि अर्थ साहित्त के समुझै सबैवनाम ॥१७०॥

ईति श्री भाखाभूषण सम्पूर्ण शुभमस्तु सिद्धिरस्तु ॥"

विषय—नायक-नायिका-भेद और अलंकारों के लक्षण ।

टिप्पणी—ग्रंथ की लिपि अस्पष्ट और प्राचीन है । ग्रंथ में ग्रंथकार के नाम का पता नहीं चलता है, किंतु पुस्तकालय की सूची में ग्रंथकार श्री पदुमन दास लिखा हुआ है । यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय गया में सुरक्षित है । पु० क्र० सं०—५५ है ।

(४१) पिङ्गलचरण पददोहा—ग्रंथकार—श्री हरदेव। लिपिकार—श्री विभीषण। अवस्था—अच्छी है। पृ० सं० १। प्र० पृ० पं० लगभग—७६। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—फाल्गुन, शुक्ल, ७ सप्तमी, सं० १९१३ (१८५७) मंगलवार।

प्रारंभ०—"दोहा—कुंजमंजुलकंज को नव कोकिलाकलिका करै
ऊमकै दुर्मडारमूल गय देखिकै मन को हरै ॥१॥
जान औसर माननीत जमान वोवच सानिकै
नन्दनन्दन को अलीमिलि केलिकिंगन सानिकै ॥२॥"

अन्त०—"दोहा—आठ सगन को माधवी भगन क्रिरीटी आठ
गंगाजल पुनिजानिये आठ रगन करि पाठ ॥२॥
इति श्री पिंगल सार समाप्तः॥"

विषय—केवल १९ पंक्तियों का यह ग्रंथ है। पिंगल रचना है।

टिप्पणी—ग्रंथ की लिपि प्राचीन शैली की है। यह ग्रंथ मन्नूलाल पुस्तकालय गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० अ० ६ है

(४२) श्री बिहारी सतसई—ग्रंथकार—श्री बिहारीलाल। लिपिकार—श्री विभीषण। अवस्था—अच्छी है। पृ० सं० ३। प्र० पृ० पं० लगभग—७६। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—फाल्गुन, शुक्ल, सप्तमी सं० १९१३ (१८५७) मंगलवार।

प्रारंभ०—"श्री गणेशायनमः अथ श्री वीहारी सतसई लिख्यते।
दोहा—मेरी भव बाधा हरोराधा नागरिसोय
आतनकी झांई परेंस्याम हरित दुतिहोय ॥१॥
शीसमुकुटकटिकाछनी कर मुरलीउरमाल
एहिबानिक मोमनवसो सदा बिहारी लाल ॥२॥
अथमुकुट वर्णन ॥ मोरमुकुट की चन्द्रकनि यों राजत नदनन्द
मनु ससिसेखर की अकस किये सेखर शतचन्द ॥३॥"

अन्त०—"मुदोतालक्षीण ॥ कहिपठईजिय भावति पिय आवन की वात
फूली आंगन मे फिरें आंगन आंग समात ॥९८॥
अनुशयानालक्षीण ॥ फिरिफिरिविलखि ह्वै लखति फिरिफिरिलेत
उसांस साईंसिर कचसेतलौ वीत्यौ चुनत कपास ॥९९॥
सन सूक्यौवीत्यौवनो ऊखो लई उखारि
हरी हरी अरहरी अजें धरधरहरिजियनारि ॥१००॥
इति श्री बिहारी दासकृत सतसई प्रथम स्वर्ग समाप्तः शुभमस्तु सिद्धिरस्तुः॥"

विषय—नायिका-वर्णन।

टिप्पणी—ऊपर के चारों ग्रंथ पुस्तकालय में एक ही जिल्द में हैं। चारों के लिपिकार एक ही व्यक्ति हैं। लिपिकार ने सबके अंत में

अपने विषय में लिखा है—"ता० ५ फेफरवरी माहं फागुन सुदी ७ रोज भोंच र सम्वत १९१३ शाल १८५७ ईसवी में अथ तइआर हुआ शुभ ग्रामें नादापुर श्री गंगातटे छावनी में पोथी को धनी श्री भसीछन पर्वतनायक कंपनी ४ रिजमट ४० का सहसानुज अधिकारी द्वारिका पर्वसिपाहि कंपनी ३ रेजमट सरिस अनूदास्य श्री रामकृत्नाय पद कमलेभ्यौः ॥"

२—लिपिकार ने इन पोथियों के अतिरिक्त इसी के साथ और भी पोथियाँ लिखी हैं। 'सूरसागर' के प्रारंभ में पृष्ठ-संख्या २३५ दी हुई है, और 'बिहारी सतसई' की समाप्ति पर २४४। सिद्ध होता है पूर्व के २३४ पृष्ठ के ग्रंथ नहीं मिले हैं। लिपिकार ने स्वयं भी अन्त में स्वीकार किया है—'पोथी को धनी', इससे प्रतीत होता है कि उक्त छावनी में ही, इसके पास अनेक ग्रंथ थे, जिन्हें वे उतारते थे। पोथी मन्नूलाल पुस्तकालय में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क—५५ है।

(४३) श्री बिहारी सतसई—ग्रंथकार—बिहारी लाल। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी है। पृष्ठ-सं० २९। प्र० पृ० पं० लगभग—२२। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—आषाढ़ शुक्ल, ३ तृतीया, सं० १९१२ (शक १७७७), (१८५५ ई०)

प्रारंभ०—"श्री राधिकावल्लभो विजयंत

दोहा—मेरी भववाधा हरो राधा नागरि सोय
जातन की भाइ परे स्याम हरित ग्रुति होय ॥१॥
शीस मुकुट कटि का छनीकर मुरली उर माल
ए वानिक मो मन सदा वसो बिहारी लाल ॥२॥
मोर मुकुट की चंद्रकलि यों राजत नंद नंद।
मनु ससि सेषर की अकस किय सेषर सतचंद ३
मकरा कृत गोपाल कै कुंडल झलकत कान।
मनौ वस्यौ हिय घर समर सौटीलसत निसान"

अन्त०—"तौ वलिए भलिएवनी नागर नंद किसोर
जो तुम नीकै कैलपो मोकरनी की ओर २
हरिकरियत तुम सोए है विनीवार हजार
ेहि तेहि भांति गिरोपरो रहो परोदनवार ३
रनहि संकुचहि वत सकुचावत एहि
ेच सो अति विमुखते सनमुख रहो गुपाल
तरौजेहि पतितन के साथ
नि गनो न गोपी नाथ ५

मेरो हरो करे स सब कैसो कैसो नाथ ६
सोरठा—मोह दीजै मोष ज्यों अनेक अधमनी दयो
जो बांधे ही तोष तब बांधो अपने गुननि ७ ॥

विषय—नायक-नायिका एवं अन्य अवस्थाओं के वर्णन।

टिप्पणी—१—लिपिकार ने ग्रंथ में अपना नाम नहीं दिया है। ग्रंथ के अन्त में 'मुकाम वंकखंडा' लिखा है। प्रतीत होता है कि नाम देना भूल गया है।

२—ग्रंथकार ने ग्रंथ के अन्त में, ग्रंथ-समाप्ति के बाद 'नृपस्तुति' लिखी है:—

"चलत पाइनी गुनी गुनी धन मनि मोती लाल
भेंट भये जेंहि साह सौ माग चाहियत भाल ८
रहत न रन जै साहि मुष लपिलाषन की फौज
जा जि निराधर ऊंच लै लै लाषन की मौज ९
प्रति बिंबित जै साह द्युति दीपति दरपनधाम
सब जग जीतन को कियौ काम व्यूह मनु काम १०
सामा सैन समाज की सबै साहि के साथ
बांहु बली जै साहजू फते तिहारे हाथ ११
हुकुम पाइ जैं साह की हरि राधिका प्रशाद
करे बिहारी सतसई भरी अनेक सवाद १२
यद्यपि है सोभा धनी मुकता हल में देषि
गुहैं ठौर की ठौरते लर मै होति विशेष १३
सकल वितिक्रम मे कही होइ अर्थ अति गौर
राम दत्त के हुकुमते कियो सरल सब ठौर १४
धरो अनुक्रम ग्रंथ कौ नायकादि अनुसार
सहर जवन पुर मे वसत हरजू कवि विचार १५
इति श्री बिहारी लाल विरचितायां
सप्त सति कायां नवरस वरणनं नाम चतुर्थ प्रकरण १७"

३—लेख स्पष्ट सुन्दर, एवं सुवाच्य है। लिखने की शैली प्राचीन है। यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क—५८ है।

(४४) दोहावली—ग्रंथकार—गो० तुलसी दास जी। लिपिकार—X। अवस्था—पुराना, हाथ का बना देशी कागज पर लिखा है। पृ० सं० ३५। प्र० पृ० पं०

लगभग—२० । लिपि—नागरी । रचनाकाल—×। लिपिकाल—कार्तिक, शुक्ल ११ एकादसी, सं० १८४६ ।

प्रारंभ०—"श्री गणेशायनमः सनि मै दोहा राम नाम मणि दीप चरु जीह देहरि द्वार
तुलशी वाहर भीतरौजौ वाहसि उजियार १
राम नाम को अंक निधि शाधनता सब सुन्न
अंक रहित सब सुन्न है अंक सहित दश गुन्न २
दुगुणो तिगुणो चौगुणो पाय पष्ट अरु शात
आगे ते पुनि नौ गुणे नौ केनौ रहिजात ३
नौके नौरहिजात है तुलघी कियो विचार
रम्यो रमइआजगत मै नहीं द्वैत विस्तार ४
जथा भूमि सव वीज मय नषत निवास अकाश
राम नाम सर्व चर्म मय जानत तुलघीदाश ५
तुलघी रघुवर परमनि ताहि भजो निह संक
आदि अंत निरवाहि है जैसे नव को अंक ६"

अंत०—"प्रकिति वचन के मिटत नहि मन सात वर्ग विलाइ ॥
तुलसी चित जल थिर भए नय आतम दर साइ ४६५
इति श्री गोसाईं तुलसीदास जू कि दोहावलि संपूरन ॥"

विषय—तुलसी-साहित्य । विविध दार्शनिक विषय ।

टिप्पणी—इस ग्रंथ की लिपि अस्पष्ट और अत्यंत प्राचीन होने तथा पतले और सटे अक्षर होने के कारण ठीक नहीं है। लिपिकार ने अपना नाम, पता कुछ भी नहीं दिया है, किंतु पुस्तक के अंत में 'कैथी' अक्षर में यह अस्पष्ट दोहा लिखा है—"चारि अक्षर के नाम है···।
आदि अक्षर को मेटि कै दो मोहि दी जे शंग ।"

यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं० क-५७ है।

(४५) रुक्मिणी स्वयंबर—ग्रंथकार—× । लिपिकार—× । अवस्था—प्राचीन, देशी कागज। पृ० सं० १२४ । प्र० पृ० पं० लगभग—१८ । लिपि—नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—× ।

प्रारंभ—"श्री गणाधिपतये ॥ श्री सरस्वत्यै नमः ॥ श्री गुरुभ्यो नमः । श्री कुलदेवताभ्यो नमः ॥ ॐ नमो जी श्री कृष्णनाथ ॥ गणेश सरस्वतीनाथं रीता । तु चितु कुल देवता ॥ कवना आनामी प्रार्थु ॥१॥ तुचि अखिल आवधेजन ॥ सहज गुरुतुजनार्दन ॥"

अंत०—"ईति श्री भागवते महापुराणे रुक्मिणी संयवरो नाम प्रसंग चवदरवा ॥१४॥ संपूर्ण ॥"

विषय—भागवत महापुराण की टीका।

टिप्पणी १—यद्यपि इस ग्रंथ की लिपि नागरी है, किंतु ग्रंथ किसी अन्य भाषा में है। इसकी भाषा, आसामी या उड़िया से मिलती-जुलती है। लिपि भी यत्र-तत्र दूसरी जैसी है।

२—भागवत महापुराण के कुछ स्कंधों की टीका है। मूल ग्रंथ इसमें प्रायः नहीं है। १२ वें अध्याय के अन्त में लिखा है—"ईति श्री भागवते महापुराणे हरिवंश समरी ऐकाकार टीकायां रुक्मि संवरो नाम द्वादश प्रसंगः ॥१२॥" इससे प्रतीत होता है कि यह कोई टीका-ग्रंथ है। किन्तु ऐसा सभी अध्याय के अन्त में नहीं है। इसमें १४ सर्ग हैं। कहीं-कहीं टीका के बाद पद्य-रचना भी की हुई है, जो अस्पष्ट है।

३—पोथी की लिपि अस्पष्ट और प्राचीन है। ऊपर के दोनों ग्रंथ एक ही साथ बँधे हुए हैं। इनके ऊपर पुस्तकालय की सूची में 'विहारी सतसई' लिख दिया है, जो गलत है। इनके ऊपर भी ऐसा ही लिखा हुआ है। दोनों ग्रंथों की लिपि भिन्न है। दोनों के लिपिकार भी दो प्रतीत होते हैं।

४—यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क—५७ है।

(४६) वैताल पचीसी—ग्रंथकार—फकीर सिंह। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी, हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं०—८६। प्र० पृ० पं० लगभग—२४। लिपि—नागरी। रचनाकाल—माघ, शुक्ल, वसंत-पंचमी सं० १७८२, सोमवार। लिपिकाल—×।

प्रारंभ०—"फकीर श्रीघपालैपरजाः शभशत्रुन्ह कों जीतः
उचेकुंज है एकवर शुनोतम कहु शोभ·········।
प्रीथीपालताकेभऐ : ` प्रीथुजशलाजजहाजः
मौज देश देनको मोजशो : वडगरीबनेवाज :

कवीत्य—कंजहीत मुदीत कुमुद अनहीत मुष सकुचीतरुदीतअधोमुष अमान हैः हंश

चौपाई—ऐकशमऐ गीरी कानन चारु खेलत रहे शींकार शीकारु
तापश ऐक नींवतरु तरे लगी शमाधीतपेश्या करै
श्रीपमन माहताही लषि डरै मनमह कहेउ राजऐहीं हरौ ॥

फीरा नगर आवा घर अपने भऐ वीकल कलपरत न शपने
होत प्रात शींघाशन वैशे हुकुम कीन्ह शेवकशो ऐशे
गनीका नगर मांह की ल्यावो अव रोथलकी हेरीभगावौ
जेतनी मीलै हेरीहेहुमोही हीरा रतन देउ भए तोही
शोकीन लेह पान करवीरा देहौं ताहि हेम अरहीरा ॥"

अन्त०—दोहा—"रानी लै नीज कन्यका गइ भागीवन भवन ॥
चला चंदेली को श्रीपती आऐगवोतेही ठवन०
शींघ पै रख भुपके शुत चंडवीक्रम नाम
दोड मीली शीकार जोभा गऐ कानन गनैशीत न घाम
चंद्रवती कन्या शहीत को रुप देखो जाऐ
कामशर लोग दोड के गीरो तब मुरछाऐ
चंद्रवती को चंडवीक्रम गहोतव नीज पानी
रुपवती को लहेतवतहाशीख पैरुख जानी ॥"

विषय—कविता। एक कथा के आधार पर रचना की गई है।

टिप्पणी—यह ग्रंथ प्राचीन है। लिपि स्पष्ट है किन्तु शैली पुरानी है। कहीं-कहीं शैली पुरानी होने के कारण अस्पष्ट हो गई है। ग्रंथ अपूर्ण है। प्रारंभ के तीन पृष्ठ फटे हुए हैं। बीच-बीच में भी पृष्ठ फट गए हैं। इस ग्रंथ की कथा प्रारंभ होती है—राजा शिकार के लिए जाता है। साधु को तपस्या करते देख उसे राज्य के अपहरण की चिन्ता होती है। नगर की सभी वारांगनाओं को बुलाने का आदेश देकर उन्हें सर्वथा प्रसन्न रखने के लिए श्रृङ्गार प्रसाधन मँगाए जाते हैं। वे तरुणियाँ जाती हैं। उद्यान का वर्णन बड़ा ही अच्छा है। वनस्पतियों, वृक्षों, पौधों, फूलों का चित्रण हृद्य है। लिपिकार के नाम का कहीं भी उल्लेख प्रतीत नहीं होता है। ग्रंथ अनुसंधेय है। यह पोथी श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क—५६ है।

(४७) रामजन्म कथा—ग्रंथकार—श्री सूरजदास। लिपिकार—बीसी लाल। अवस्था—अच्छी; हाथ का बना, मोटा देशी कागज। पृष्ठ-सं०—५८। प्र० पृ० पं० लगभग—३४। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—पौष, शुक्ल, १२ द्वादसी, सं० १६६८, (सन् १२६५ साल) सोमवार।

प्रारम्भ०—"दोहा—आरख अरथ नहीं जानो नहीं गुर ग्यान उपाऐ

रामकथा कछुभाखो श्री गुरु होहु सहाऐ
छमीरना—कीरोपा करो सीवनंदन पंगुवंदो करजोरी
तोहरे चरन मनोरथ सीच्य करो प्रभु मोरी
कंठ वसहु सरोसती हीरदै वसहु महेस
भुला अछरप्रगासहु गौरी के पुत्र गनेस
चौपाई—वरनो गनपती विघीनी वीनासा रामरूप तुम पुरवहुआसा
वरनो छरसती अम्रीतवानी रामरुप तुम भली गतीजानी
वरनो चांद सुज के जोती रामरुप जस नीरमल मोती
वरनो वसुधा चेरे जो भारा रामरुप तुम जगत पीआरा
वरनो मातुपिता के पाउ जीन्ह मोही नीरमल ग्यान सीखाउ
वरनो देव वीप्र गुन पाउ जीन्ह मोही बीदवा पढ़े सीखाउ
दोहा—सुजदास कवी वरनो प्राननाथ जीव मोर
रामकथा कछु भाखो कहत न लागे भोर"

अन्त०—"दोहा—सभ रानी अस बोलहीं वेटा कहो तो पाप
सीता सभ की माता राम सभ के वाप
चौपाई—श्री रामजन्म सुनो मनलाइ महापाप ताकर छै जाइ
जानहु गंगा कीन्ह असनाना मानहु जगमंह दीन्हा दाना
जौ फल लेगआपीन्डा दीन्हा तासम रामजन्म सुनी कीन्हा
दोहा ॥ रामजन्म कथा ऐह पढ़े सुने मन लाऐ
महापाप ताकर छुटहीं वीस्नलोक सोजाऐ
इती श्री रामजनम समापत भइल जो पत्र मो देखा सो लीखा मम
दोखनदीअते पंडीत जनसो वीनती मोरी टुटल अछर लेव सभजोरी"

विषय—राम-संबंधी कविता।

टिप्पणी—लिपि प्राचीन है। ग्रंथकार का नाम ग्रंथ में, आदि या अंत में नहीं दिया हुआ है, किंतु यत्र-तत्र चौपाइयों में श्री 'सूरजदास' का नाम आया है। प्रतीत होता है, कोई इसी नाम के कवि थे, जिन्होंने इस काव्य की रचना की है।

यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क—६२ है।

(४८) भरत-विलाप—ग्रंथकार—तुलसीदास। लिपिकार—जीसीराम। अवस्था—अच्छी, मोटा, देशी कागज। पृष्ठ सं०—२३। प्र० पृ० पं० लगभग—२२।

लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—कार्तिक, शुक्ल, ११ एकादशी, सं० १८८८ (सन् १२६५ साल), बृहस्पतिवार॥

प्रारंभ०—"प्राजासकलके राखहु प्राना हमहीं आऐ मनावन तोही
पलहु अवधपुर कोसलराजा ... ...
तुम वीनू सकल मरत है भाइ सरनलाज राखहु रघुराइ॥"

अन्त०—"दोहा—रामनाम जीन्ह पुरुखन सुनत जो ऐकोवार
ताके जन्म सुफल भऐ ताहु जन्म है सार
रामनाम जीन्ह के घट तेही पुरुखा तरी जाऐ
तुलसी दास भजुराम पद रामनाम मन लाऐ
इतीश्री पोथी भरथबीलाप समापत जोपत्री मोदेखासोलीखा मम दोखन दीअते पंडोतजन सोमीनतीमोरी टुटल अछर लेबसब जोरी॥"

विषय—राम-जीवन-संबंधी साहित्य।

टिप्पणी—ऊपर के दोनों ग्रंथ एक ही व्यक्ति के लिखे हुए हैं। पुस्तकालय में दोनों ग्रंथ एक ही जिल्द में हैं और दोनों का नाम 'भरत-बिलाप' ही, सूची में है। लिपिकार ने अंत में, अपने संबंध में लिखा है:—
"दसखत बीसीलाल कौम कुरमी का मोकाम महले टीलहा कसबे गआजी लोहासाव के बंगलामो पढ़ाते हैं लड़के लोगको महादेव के सीवाला के बगलमो इसी ठेकाने पर जो कोइ को दरकार हाथ लीखावट पोथी का सो सब तरह का पोथी मीलेगा औ लीखवाआ हेमराज राउत कुरमी रहनेवाला गआ महेला टीलहा परका पेसा··· गढ़ने का है॥"

इस ग्रंथ के प्रारंभ के १७ पृष्ठ नहीं हैं। उपर्युक्त पंक्तियों से प्रतीत होता है कि इन दोनों ग्रंथों को किन्हीं 'हेमराज राउत' नाम के व्यक्ति ने लिखवाया है। ग्रंथ अनुसंधेय है। इस ग्रंथ के कर्त्ता का नाम नहीं है, किन्तु स्थान-स्थान पर श्री तुलसीदास का नाम आया है। इससे प्रतीत होता है, तुलसीदास या इस नाम के किसी अन्य व्यक्ति का लिखा है। कहीं-कहीं की शैली गो० तुलसीदास से भिन्न है। भाषा 'रामचरित-मानस' से मिलती-सी है।

यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं० क—६२ है।

[क्रमशः]

(४६)—सप्तसतिका—ग्रन्थकार—गो० तुलसीदासजी। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी, हाथ का बना, मोटा, देशी कागज। पृ०-सं०—८। प्र० पृ० पं० लगभग २०। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×।

प्रारंभ०—"तिनहि पठे तिनहि सुनै० तिनहि सुमति प्रगास॥
जिन्ह आसा पाछै करै० गहे अलंब निरास॥१॥
तब लगि योगी जगत गुरु० जब लगि रहत निरास॥
जब आसा मन मे जगी० जग गुरु योगी दास॥२॥
हित पुनीत स्वारत सबहि० अहित असुचि बिन चाड॥
निज मुख माणिक सम दशन भूमि परत भौ हाड॥३॥
निज गुण घटत न नाग नग० हरषि परित हर कोल।
गुंजा प्रभु भूपण करे० ताते बढ़े न मोल॥४॥"

अन्त०—"बर माला बाला सुमति उर धारौ युत नेह०
सुख शोभा सर साय नित० लहै राम पति गेह॥१२७॥
भूप कहहि लघु गुणिन कह० गुणी कहहि लघु भूप॥
महि गिरि गत दोऊ लपत० जिमि तुलसी पर्व रूप॥१२८॥
तुलसी चारु विचारि वलु० परिहरु वाद विवाद॥
सुकित सीम स्वारथ अवधि० परमारथ मर जाद॥१२९॥

इति श्रीमद्गोस्वामी तुलसी दास विरचितायां सप्त सतिकायां राजनीति प्रस्ताव वर्णनो नाम सप्तमः सर्गः॥७॥"

विषय—उपदेशात्मक साहित्य।

टिप्पणी—इस नाम की पोथी पहले भी आई है, किन्तु यह पूर्ण नहीं है। इसमें केवल 'राजनीति प्रस्ताव वर्णन' नाम का सातवाँ सर्गमात्र है। पोथी की लिपि स्पष्ट और सुंदर है। ग्रन्थ सुपठ्य है। लिपिकार का नाम नहीं दिया हुआ है। अंत में लिपिकार ने लिखा है:—

"रगण (॥रामजी॥) चरण कोमल बिसद० (॥उज्ज्वल॥) यगण (॥कपाली शिव॥) धरे नित ध्यान॥ नगण (॥भजन॥) करो तुम

नगण (॥करण॥) षल० कटे भगण (॥पातक॥) सब जान ॥१॥"
यह पोथी श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क—६२ है।

(५०) युगल-सुधा—ग्रंथकार—विद्यारण्यतीर्थ। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी है। पृष्ठ-सं०—१००। प्र० पृ० पं० लगभग—२७। लिपि—नागरी। रचनाकाल—चैत्र, शुक्ल, ९ नवमी, सं० १८९८, बुधवार॥ लिपिकाल—×।

प्रारंभ—"अथ श्याम सुधा काफी॥ स्याम चरित है रंगरंगीलो॥
जामे करन झलकि रहा है पुरुष पुरातन छैल छबीलो॥१॥
रामचरित पाही पूरन होत दिनहुँ दिन बनत रसीलो॥
जैसे भारत से श्रुति को रस पुलत प्रकासतगरु अग भीलो॥२॥"

अन्त०—"बसंत॥ —मंगल नाम रूप जग मंगल मंगल गुनगन मंगल धाम॥
मंगल चरित साधुजन मंगल जग हितकारक पूरन काम
मंगल श्री वसुदेव देवकी नंद जसोदा गोकुल ग्राम॥
मंगल जमुना मंगल कुके मंगल सुन्दर स्यामा स्याम॥३०१॥
होरी॥ जा दिन वजत वधाई॥ श्री रामजनम की॥ तादिन कृष्ण
सुधा पूरन भइ संतन की प्रभुताई॥१॥
संवत आठ अंक अष्टादश॥१८९८॥ बार परो बुधआई॥
राम स्याम मे भेद नही कछु असिमति गुरुन्ह सिषाई॥२॥
श्रीमत्काशिराज के अति प्यारे मान बुद्धि अति पाई॥
बाबू राम प्रसन्नसिंह के यह रुचि हेतु बनाई॥३॥ जो रस कहत
शेष श्रुति सारद बड़ देवहु सकुचाई॥ सो रस ढीठहोइ कै
कहनो यह केवल बतराई॥४॥३०१॥"

विषय—श्री कृष्ण और श्री रामचन्द्र के, जीवन पर आधारित कविता।
टिप्पणी—इस ग्रंथ में विविध रागों—कहरवा, मालश्री, घनाक्षरी, होरी, सोरठहोरी आदि, के गीत हैं। ग्रंथ अनुसंधेय है।
वर्णनशैली और भाषा भी अच्छी है। ग्रंथ सुपठ्य है। ग्रंथ में लिपिकार का नाम नहीं है किंतु प्रतीत होता है, ग्रंथकार स्वयं लिपिकार है।
यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं० क-६४ है।

(५१) रसकल्लोल—ग्रंथकार—कर्णकवि। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी, हाथ का बना मोटा देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१८। प्र० पृ० पं० लगभग—२१। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—माघ, शुक्ल, ८ अष्टमी, सं० १९०६, (१८४९)।

प्रारंभ—"श्री गणेशायनमः श्री महादेवाय नमः अथरस कल्लोल लिख्यते
दोहा सुमनवंत शोभासदनवारन वदन विचारि
वितरत फलनित रत चतुर सुरतरवर कर चारि १
जगरानि बानी चरण दीपति सुरसरिपूर
सुर पुरनरपुरनागपुर पूरतिगरिमगरूर २
अरुणोदय शोभित चरण शंभु तिहारे
मंजु पाइ तिन्हें निशि दोसहूं फूलोहीतल कंजु ३"

मध्य—"विलास हाव लक्षण—पतिविलोकि मनहरनको तरुणी विरवति हाव
सो विलास पहिचानिए कविकुल सरल सुभाव १६०
यथा—उझकि उझकि सकुचति द्रवति झझिकति लकि मुसकाइ
भूरि भाय अति के लपे सके न पति कहु जाइ १६१॥"

अन्त०—"प्रसाद यथा—सरदचन्द सारद कमल भारद होत विशेषि
छवि छलकत झलकत बहुत ललकत मुनि मन देषि ॥२८३॥
या में पुरुषा कोमला उपनागरिका होइ
उदाहरण कीन्हे नमै क्रमते भानो सोई ॥२९३॥
रीत चारइ देसकी सो समासते होइ
भाषा मे या तैन मैं बरणी सुमति बलोइ ॥२९४॥
इति श्रीमद्वंशीधरात्मजे कविकरणे विरचिते रशकल्लोल रस ध्वनिव्यंगादि निरूपन नाम सपूर्णम् ॥"

विषय—रसादि निरूपण—लक्षण।

टिप्पणी—ग्रंथ सुपठ्य, विवेच्य और अनुसंधेय है। इसमें रस और भावयुक्त उत्कृष्ट लक्षण और उदाहरण तथा बीच-बीच में उदाहरण के अर्थ भी लिख दिये गए हैं। ग्रंथ में लिपिकार का नाम नहीं है। यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-६६ है।

(५२) रसचन्द्रिका—ग्रंथकार—इस्वी खाँ। लिपिकार—हरिवंश त्रिपाठी। अवस्था—अच्छी है, हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं०—२१७। प्र० पृ० पं०

लगभग—२२। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—संवत्—१८८ (१८२४)

प्रारंभ०—"श्री गणेशाय नमः॥ अथ पोथी रस चंद्रिका लिष्यते॥

मूल॥ अपने अपने मत लगे॥ बादिम जावत सोर॥
ज्यौं त्यौं सबई सेईये॥ पकै नन्द किसोर॥

टीका॥ इस जगह बाद को अर्थ वृथा को हैः हेतार्थ दोहे का यह है॥ की अपने मत का झगरा करना वृथा है॥ क्यौंकि जिनने सेआ तिननै मानौ नन्द किसोर ही को सेया है॥ क्यौंकि ब्रह्मा शिवसनकादि सब बिस्नु ही है॥ तौ जिनने जिसको पूजी तिन मानो विश्नु ही को पूजा॥ प्रमानालंकार॥ तिसकालन्क्षण॥"

अन्त०—"मूल॥ हा हा बदन उघारि द्रिग॥ सफल करै सब कोइ॥
रोज सरोजनिके परे॥ हंसी ससी की होइ॥७११॥

टीका॥ सवेर का समै है सारी रात मनावते सवेरा हो गया॥ सो सषी नाइ का सोकह है॥ की हा हा वदन उघारि हम सबसषीयां द्रिग सफल करो॥ और सकारे हुए सों जो ए कमलपले है। सो तेरामुपचन्द देषेसोंमूंदि जाहि॥ और सकारे हुए सों जो चान्द मन्द हुआ है॥ ति से हंसी होइ॥ क्योंकी तेरा मुषचन्द ऐसा है॥ की सवेरा हुएं भी उसकी जोति मन्द नही होती॥ और जो सषीसें चन्दमुषी लीजे॥ औ सरोज सों कमल नैनी लीजै॥ तौ अर्थ तो होत है॥ पै व्यंग सो छिपै होत है॥

अ(लं)कार प्रतीपः॥ चौथो॥ उपमेय की समता लाइक उपमान न होइ॥ इहाँ मुष आगैं ससि की हंसी कही॥ और नेत्रनिके कमलनि की कमी कही॥७११॥

मूल॥ किय प्रसंग नर वर नृपति॥ छत्रसिह भुअमान॥ पढत बिहारी सतसई॥ सभ जग करत प्रमान॥ कवि न कीए टीका प्रगट॥ अर्थ न काहु कीन्ह॥ अपने कविता के लिए अधिक कठिन करि दीन्ह॥ कछुक रहै सन्देह नहीं॥ ऐसी टीका होइ॥ बांचि वचन को पद अरथ॥ समुझि लेइ सब कोइ॥ तब सब को हित को सुगम॥ भाषा वचन बिलास॥ उदिते इस बिषां कियो॥ रस चन्द्रिका प्रकास॥"

विषय—बिहारी सतसई की टीका।

टिप्पणी—यह ग्रंथ श्री इस्वी खाँ का है। इन्होंने श्री बिहारीलाल कृत 'सतसई' की श्री राजा छत्रसिंह की आज्ञा से बड़ी अच्छी टीका की है। इसके पद अच्छे बन पड़े है। भाषा प्राचीन, कुछ-कुछ 'रामचरित मानस' जैसी भाषा है। उदाहरण अच्छे और अर्थगर्भ हैं। ग्रंथ सुपठ्य है। लिखने की शैली

और अक्षर पुराने हैं। टीका में मूल विषय का समीचीन प्रतिपादन है। अलंकारों का विवेचन भी अच्छा है। यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-६७ है।

(५३) तुलसी सतसई—ग्रंथकार—गो० तुलसीदास। लिपिकार—×। अवस्था अच्छी, मोटा, हाथ का बना, देशी कागज। पृ०-सं०४४। प्र० पृ० पं० लगभग—१६। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—श्रावण, कृष्ण, तृतीया, सं० १९७४, गुरुवार॥

प्रारंभ०—"श्री रामो विजयतेतराम्

नमो नमो श्री राम प्रभु परमातम पर ध्याम
जेहि सुमिरत सिधि होत हैं तुलसी जनमन काम १
राम वाम दिशि जानकी लखण दाहिनी ओर
ध्यान सकल कल्याण कर सुलसी सुरतरु तोर २
परम पुरुष पर धाम वर जापर ऊपरन आन
तुलसी सो समुझत शुनत राम सोई निर्वान ३
सकल सुखद गुणजासु सो राम कामना हीन
सकल काम प्रद सर्वहित तुलसी कहहि प्रवीन ४"

अन्त०—"भूप कहहिलहु गुणिन कह गुणी कहहि लहु भूप
महिगिरिगत दोउ लषत जिमि तुलसी पर्वस्वरूप १२८
दोहा—चारु विचारिचलु परिहरिवाद विवाद
सुकृत सीम स्वारथ अवधि परमारथ मरजाद १२९
इति श्री मद्गोस्वामी तुलसीदास विरचितायां सप्त सतिकायां राज नीति प्रस्ताव वर्णनो नाम सप्तम स्वर्गः ॥७॥"

विषय—दर्शन।

टिप्पणी—(यह ग्रंथ पहले भी आ चुका है।) इसमें ७ सर्ग हैं जिनमें—१ प्रेम-भक्ति निर्देश, २—..............। ३—संकेत बक्रोक्ति, ४—आत्मबोध निर्देश, ५—कर्मसिद्धान्त योगो नाम, ६—ज्ञानसिद्धान्तयोगो नाम, ७—राजनीति प्रस्ताव वर्णनोनाम, विषय हैं। इनमें, १—११०, २—१०३, ३—१०१, ४—१०४, ५—९९, ६—१०१ और ७ में १२९ पद हैं। ग्रंथ में लिपिकार ने अपना नाम नहीं दिया है। यह ग्रंथ अस्तव्यस्त रूप में हैं। इनके सभी पृष्ठ पृथक्-पृथक् बिखरे हैं। ग्रंथ अनुसंधेय है। लिपि पुरानी है। यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया, में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-७३ है।

(५४) रसराज—ग्रंथकार—श्री मतिराम। लिपिकार—सुसिंग्रिफ लाल। अवस्था—अच्छी है। पृ०-सं०—३८। प्र० पृ० पं० लगभग—४१। रचनाकाल—×। लिपिकाल- भाद्र, शुक्ल, एकादशी, सं० १६२१, सोमवार।

प्रारम्भ—"श्रीगणेशायनमः॥ अथ रसराज मतिराम कृत लिख्यते॥ यथा

कवित्व॥ ध्यावै सुरासुर सिद्ध समाज महेशहि आदि महामुनि ज्ञानी॥
जोग मे यंत्र मे मंत्र मे तंत्र मे गावैं सदा श्रुति शेष भवानी॥
संकट भाजन आनन की द्युति सुन्दर इंडउ दण्ड सो जानी॥
ध्याय सदा पद पंकज को मतिराम तबै रसराज बखानी॥१॥

दोहा॥ श्रीगुरुचरण मनाइके गणपति को उर ल्याई॥
रसिक हेत रसराज किय सुकविन को सुखदाइ॥२॥

प्रार्थना दोहा॥ कवित्तार्थ जानौं नहीं कछुक भयो संवोध॥
भूल्यौ भ्रमते जो कछु सुकवि पढ़ेंगे सोध॥३॥
वरनि नायिका नायकनि रच्यो ग्रंथ मतिराम
लीला राधारमन की सुन्दर जश अभिराम॥४॥

दोहा॥ होत नायिका नायकहि आलंबित श्रृंगार॥
ताते बरनो नायिका नायकमति अनुसार॥५॥
उपजत जाहि विलोकि कै चित्तवीच रसभाव॥
ताहि वखानत नायिका जे प्रवीन कविराव॥६॥

उदाहरणम् सवैया॥ कुन्दन को रंग फीको लगे झलकै अति अंगनि चारु गुराई॥
आंखिनि मे अलसानि चितौनि मे मंजु विलासन की सरसाई॥
को विन मोल विकात नहीं मतिराम लहै मुसुक्यानि मिठाई॥
ज्यों ज्यों निहारिये नेरे ह्वै नैननि त्यों त्यों खरी निकरै सीनिकाई॥७॥"

अन्त—"दोहा॥ ऊनमिख लोचन बाल के॥ याते नन्दकुमार
मीच गईजरिवीच ही॥ बिरहानल की झार॥४२७॥
समुझि समुझि सव रीषि हैं॥ सज्जन सुकवि समाज॥
रसिकन को रस को कियो नयो ग्रंथराज॥४२८॥
इतिश्री सुकविमतिरामविरचितायांरसराज समाप्तः॥"

विषय—नायक नायिका, रसादिलक्षणग्रंथ।

टिप्पणी—ग्रंथ की लिपि अच्छी है। भाषा परिमार्जित और उदाहरण भावपूर्ण हैं। ग्रंथ के लिपिकार ने अंत में लिखा है—
"महिनर कर निधि इन्दुयुत॥ सम्वत विक्रम राय॥
भादो शुक्ल यकादसी॥ चन्द्रवार सुखदाय॥१॥

कवि मतिराम सुजान कृत ॥ यह रसराज रसाल ॥
पढ़त सुनत आनंद लहत ॥ लिख्योड्सिग्रिफ लाल ॥ इति शुभमस्तु ॥"

यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है पु० क्र० सं० क-६८ है।

५५) रस रहस्य—ग्रंथकार—दिनेश कवि लिपिकार—जुगल किशोर लाल। अवस्था—अच्छी। पृ०-सं० ६७। प्र० पृ० पं० लगभग—३६। लिपि—नागरी। रचनाकाल-माघ, शुक्ल, वसंत पंचमी, १८८३ सं०। लिपिकाल—चैत्र, शुक्ल पंचमी, सं० १६३७ (सन् १२८७ साल)।

प्रारंभ—"श्री गणेशाय नमः दोहा—जै जै जै गज बदन जै॥ जै गिरिनंदिनिनंद॥
जै सिंदुर सोभाधरन जै जग आनंद कंद।
बरवै—जेकर दनद्वैमातुर त्रिभुवन साँई॥ जै भुजचारि पचैकर षटमुष भाइ
कबित्त—सहै भालबाल इंदु सुंदर सिंदुर सोभा एक रद करवर चारिपाइयत है॥
नंद जगदंब को उदरलंब चारुतन मूषक प्रसिद्ध जाको जान गाइयत है॥
जाहिर अनाथनि सनाथ के करणहारे अैसे गणनाथ तिन्हें माथ नाइअत है॥
चारि छौ अठारह दिनैस सद ग्रंथ आदि जाको नाम पीठ पठिया पाइयत है॥३॥"

अन्त—"दोहा॥ ताकों मन मोहन कियो करी विकल चलि जहि
वह महन महन हरे मोहन मोहन महि
जासु सवारी सोभलषी भई बावरी बाल
आवे चलिहैं रैन तूं सपी न है नंदलाल
ऐक छंद में छंद बहुभासत आय अनेक
ताहि सर्वतो भद्र कहि जिनके बड़ी विवेक॥ इति सम्पूर्णम्॥"

विषय—नायक-नायिका-रसादिलक्षण

टिप्पणी—यह ग्रंथ टिकारी राज के श्री दिनेश कवि का है। इसमें नायक नायिका आदि के लक्षण-उदाहरण के अतिरिक्त टिकारी राज्य, राजवंश, फल्गुनदी, मगधगौरव आदि पर बड़ी ही सुन्दर रचना है। कवि ने स्वयं लिखा है—"रस रहस्य वरनत रसिक सुपद गौरिपद ध्याइ। संवत अठारह सैत्रिजुत अस ◼ाघसित चारु। ऋतुपति पंचमि को भयो रस रहस्य अवतार॥" इसमें टिकारी के राजा कवि 'खान बहादुर' की भी चर्चा है। ग्रंथ अनुसंधेय है।

यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-६० है।

५६. रसिकप्रिया—ग्रन्थकार—केशवदास (ओरछा)। लिपिकार—इन्द्रजीत । अवस्था—अच्छी है, प्राचीन, देशी कागज । पृष्ठ–५५ । प्र० पृ० पं० लगभग—४८ । आकार – ६" × ६" । भाषा—हिन्दी । रूप—प्राचीन । लिपि--नागरी । रचनाकाल— + । लिपिकाल—ज्येष्ठ, शुक्ल ६ नवमी, सं० १८६७ वि० (१८१० ई०) ।

प्रारंभ—श्री गणेशायनमः ॥ रसिकप्रिया लिष्यते ॥

छप्पय ।। एकरदनगजबदनसदनबुद्धि मदनकदनसुत ॥
गौरिनन्द आनन्दकन्द जगबन्दबन्दजुत् ॥
सुखदायक दाएक सुक्लगणनाएकणएक ।
खलधारकधायक हरि प्रसनलाएकलाएक ॥
गुरुगुणअनन्त भगवन्तभव, भगतिवन्त भवभयहरन ॥
जय केशवदाशनिवाशनिधि लम्बोदरअसरनशरन ॥ १ ॥

मध्य की पंक्तियाँ (पृ० सं०–२८) ॥ विप्रलम्भभेद दोहा ॥

विप्रलम्भश्रींगार के चारिप्रकार प्रकास ॥
प्रथमपुर्व अनुरागपुनि करुणामानप्रवास ॥ ३ ॥

॥ पूर्वानुरागलच्छन दोहा ॥

देषत ही दुतिदंपतिहि उपजिपरत अनुराग ॥
विनुदेषै दुख देषिए सो पुर्वानुराग ॥ ४ ॥

अन्त— केशव सोरह भाव, सवरणमयसुकुमार ॥
रसिकप्रिया के जानियहु शोरहइ श्रिंगार ॥ १५ ॥
एहिविधिकेशवदास सरस अनरस कहे विचरि
बरणतभै भूल्यौ कहूँ कविकुललेहु सुधारि ॥ १६ ॥
जैसे रसिक प्रिया बिना होत दिनहुँ दिन-दीन ॥
त्योहीं भाषा कविसबै रसिकप्रिया के हीन ॥ १७ ॥
बाढ़ै रतिमति अतिपठै जानै सब रस रीति ॥
स्वारथ परमारथ लहै रसिक प्रिया के प्रीति ॥ १८ ॥
सुनहु सवैया दुई सै च्यासठि और समान ॥
सोरह च्यासी जुगल पद छप्पय तीनि प्रमान ॥ १६ ॥ संख्या ॥ ५४५ ॥
इतिश्रीमन्महाराजकुमार श्री इन्द्रजीत बिरचितायां रसिकप्रियायां अनरसवर्णनं नाम षोडसमः प्रभावः ॥ १६ ॥

विषय— नायक-नायिका, हावभाव, रस-अनरस, शृंगार, आनन्द का वर्णन। संपूर्ण ग्रन्थ में १६ प्रकाश (अध्याय) हैं। संपूर्ण पद्य-संख्या ५४५ हैं। ग्रंथ में विषय शीर्षक लालपेंसिल से रेखांकित हैं।

टिप्पणी- १. यह ग्रंथ श्री केशवदासकृत है। प्रत्येक अध्याय के अन्त में "श्री मन्महाराज कुमार इन्द्रजीत" लिखा है। लिपिकार ने ग्रंथ के अन्त में लिखा है—"रत्नाकर ऋतुसिद्धिभू बरष जेष्ठ तिथि अंक। शुक्लपक्षलिषि पूरनौबासर शुभगमयंक ।।१।।"

२. ग्रंथ की लिपि प्राचीन होने के कारण अस्पष्ट है। शैली भी पुरानी है। ग्रंथ में 'ख' के लिए सर्वत्र प्रायः 'ष' का प्रयोग हुआ है। ग्रंथ संपूर्ण है। ग्रंथ की समाप्ति के बाद जिस व्यक्ति ने पुस्तकालय को दिया है, वह लिखता है—"यह पुस्तक मैंने श्री मन्नूलाल पुस्तकालय को हार्दिक प्रेमोपहार स्वरूप प्रदान किया—उमानाथ पाठक, बहेलियाबिगहा, टिकारी, मिति फाल्गुण सुदी ६,सं० १६७८वि०।।

३. यह पोथी श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु०क्र० सं० का०७१ है।

५७. **रसिकप्रिया**--ग्रन्थकार--श्री केशवदास। लिपिकार--सिंग्रिफलाल। अवस्था--अच्छी, प्राचीन, हाथ का बना, मोटा, देशी कागज। पृष्ठ--५०। प्र० पृ० पं० लगभग--२२। आकार—६"×५$\frac{1}{2}$"। पूर्ण रूप प्राचीन। लिपि--नागरी। रचनाकाल--कार्तिक शुक्ल सप्तमी, १६४८ सं०, सोमवार ।। लिपिकाल—मार्गशीर्ष, शुक्ल सप्तमी, १६१६ सं० (१८५६ ई०), गुरुवार।

प्रारंभ--श्री गणेशायनमः ।। छ० ।।

एकरदनगजवदनसदनवुधि मदनकदनसुत।
गौरिनन्द आनन्दकन्द जगबन्दचन्दजुत ।।
सुखदायक दायक सुकृतिगणनायक नायक।
षलघायक घायक दारिद्रसबलायक लायक ।।
गुरगुणअनन्त भगवन्तभयभक्तिवन भवभयहरन।
जै केशोदास निवासनिधिलम्बोदर असरनसरन ।। १ ।।
श्रीवृषभानकुमारिहेतु सिंगाररूपमय।
बासहांस रसहरनमातु बन्धनकरुणामय ।।
केसीप्रतिअतिरुद्र वीर मार्योवत्सासुर।
भै दावानलपानुपी ये बिभत्स कवीवर ।।
अतिअद्भुतबंचीविरंचि मतिशांतसन्तत सोचिचित।
कहै केशव सेवहुरसिकजननवरसमै ब्रजराजनित ।। २ ।।

॥ यथा दोहा ॥

नदी बयत बैतीरतह तीरथ तुङ्गारन्य।
नगर बौड छोवहु बसय धरनी तल में धन्य ॥
आश्रमचारि बसै तहा चारिवर्ण सुभकर्म।
जपतप बिद्याबेदबिधि सबै बठै धनधर्म ॥ ४ ॥
अपने अपने धर्म तँह सबै सदा सुखकारि।
जासो देस विदेस के रहे सबै नृपहारि ॥ ५ ॥
रच्यो बिरंचि विचारितँह नृपमनि मधुकरसाहि
गहरवार कासीसुर रविकुल मरडनअसुजाहि ॥ ६ ॥
ताकोपुत्र प्रसिद्धमहि मरडन दुल्लहराम।
इन्द्रजीत ताको अनुज सकलधर्मको धाम ॥ ७ ॥
दीन्हीं ताहि नृसिंहजुत तनसनरग्र जयसिद्धि।
हित की लच्मण रामज्यों भरेराज सो बृद्धि ॥ ८ ॥
तिनकबिकेसबदास सो कियोधर्म्मसी नेहु ॥
सबसुखदैकरि यह कह्योरसिकप्रियाकरिदेहु ॥ ६ ॥
सम्बत्सोरहसै बरष बीती अठतालीस ॥
कातिकसुदितिथिसप्तमी बारबरनिरजनीस ॥ १० ॥
अतिरतिमतिगति एक करि बिबिधबिबेकविलास ॥
रसिकनि को रसिकप्रिया कीन्हीकेसवदास ॥ ११ ॥
ज्योंबिनुडीठिन सोभियेलोचन लोलविशाल ॥
त्योंही केसवसकल कबि बिनुबानीनरशाल ॥ १२ ॥
ताते रुचि सो सोचि पचिकरि यै सरस कवित्त ॥
जाते स्याम सुजान के सुनत-होत बस चित्त ॥ १३ ॥

मध्य की पंक्तियाँ (पृष्ठ सं० २५)—प्रछन्नविप्रलब्धा ॥ सवैया ॥

सूल से फूल सुवास कुवास सी नाकसी से भए भौन स भागे ॥
केसव वाग महावन सो जरुसी चंद्रि जोन्ह सबै अंग दागे ॥
नेह लग्यो उरनाहर सो निसिनाह घटीक कहूँ अनुरागे ॥
गारी सी गीत विरीविसुसी सिगरेई सिंगार अंगार से लागे ॥ २६३ ॥

अन्त— यहिबिधि केसवदाश रस अनरस कहे बिचारि
वर्णभूल परिहो जहाँ कविकुल लेहु सुधारि ॥ ५११ ॥

जैसे रसिकप्रिया विना देषिय दिन दिनदीन ॥
त्योंही भाषाकवि सवै रसिकप्रिया करिहीन ॥ ५१२ ॥
बाढ़ै रतिमति अतिपढ़ै जानै सबरसरीति ।
स्वारथ परमारथ लहौ रसिकप्रिया की प्रीति ॥ ५१३ ॥
इती श्री मन्महाराज कुमार श्री इन्द्रजीत विरचितायांरसिकप्रियायांरस अनरस वर्णन नाम षोडसः प्रभावः ॥ १६ ॥

विषय— काव्यलक्षण ग्रंथ। नायक-नायिका,हाव-भाव,रस, अनरस, शृंगार आदि का वर्णन। पूर्ण पद्य-संख्या ५१३ । विषय शीर्षक का लाल स्याही से उल्लेख हुआ है।

टिप्पणी–१. यह ग्रंथ कवि ने राज कुमार इन्द्रजीत के आदेश से बनाया, जैसा कि ऊपर के पद्य में आ चुका है। अतएव सभी सर्गों की समाप्ति पर उक्त राजकुमार का ही नाम कवि ने ग्रंथकार के रूप में दे दिया है।

२. कवि ने इसकी रचना— "सम्वतसोरह सै वरष बीती अठतालीस।
कातिक सुदि तिथि सप्तमी बारबरनि रजनीस ॥"

सं० १६४८ में कार्तिक, शुक्ल सप्तमी, सोमवार को किया है। 'रसिकप्रिया' के अन्य हस्त-लेखों की चर्चा नागरी-प्रचारिणी-सभा की खोज-रिपोर्टों में भी है। देखिए— खोज विवरणिका सन् १६२३–२५, संख्या २०७ और खोज विवरणिका-- सन् १६२६–२८, संख्या २३३ एफ० और २३३ जी०। नागरी-प्रचारिणी की खोज विवरणिका सन् १६२६–२८ में, इसका रचना-काल १५६१ ई० देते हुए अबतक के हस्त-लेखों में, इसे प्राचीन बताया है। उसके अनुसार १५५१ ई०इसका भी रचना-काल है —अतः यह भी अबतक के प्राप्त हस्त-लेखों में प्राचीन है। केशवदास का समय लगभग १६०० ई० है। खो० वि० १६०२ संख्या २५२ में– रचनाकाल १८२५ ई०, और खो० वि० १६०३, संख्या २१ में १६३१ ई० है।

३. लिपि अच्छी और स्पष्ट है। लिपिकार ने ग्रंथ की समाप्ति के बाद एक दोहा लिखा है–

रसमहिनिधि गजमुख रदन। सम्वत विक्रमराय।
मार्गशीर्ष सित सप्तमी। गुरुवासरसुख दाय ॥
केशवदास विचार करि। भाषारच्यौ रशाल ॥
धरयो नाम रसिकप्रिया। लिख्यो सो सिंग्रिफलाल ॥

ग्रन्थ में दिये गये लिपिकाल से उपर्युक्त दोहों में दिये गये काल का अन्तर है।

४. यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु०क्र०सं०का० ७२ है।

५८. रामचन्द्रिका—ग्रन्थकार—श्री केशवदास (ओरछा । लिपिकार– खुशहालचन्द्र। अवस्था—अच्छी है, पुराना, हाथ का बना देशी कागज। बीच-बीच में पन्ने फटे हैं। पृष्ठ—१६५। प्र० पृ० पं० लगभग—३६। आकार

६$\frac{१}{३}$" × १०"। पूर्ण। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचना-काल—कार्तिक, शुक्ल, १६५८ सं०, बुधवार। लिपिकाल—श्रावण शुक्ल पूर्णिमा, संवत् १८३५, (सन् १७७८ ई०), शनिवार।

प्रारंभ—श्री रामायनमः ॥ अथ रामचन्द्रिका लिख्यते ॥ कवित्त ॥

बालक मृनाल निज्यों तोरिडारिसबकाल कठिन कराल ज्यों अकाल दीह दुषकौं ॥
दूरिकै कलंकरंक भइनुसीस ससिसभ राषत है केसोदास के वपुषकौं ॥
सांकरे की सांकरनि सनमुष होत ही तौ दसमुष जुतो बैग मुख मुषकौं ॥१॥

मध्य की पंक्तियाँ (पृ० सं० ८२) ॥ चंचीला छंद ॥

देबकुंभकर्न के समान जानिये न आन।
चंद्रईन्द्र ब्रह्म विस्नु रूद्रकौ हरौ गुमान ॥
राज काज को कहै। सुजानिये सुप्रेम पाल।
कैचलीन कौचलैन। कालकी कुचाल चाल।
विस्नु भाजिजात छाड़िदेवता असेष।
जामदग्निदेषिकै कियोजुनारिवेष ॥
ईस रामते वधीबचे जुवान रैसवालि।
कैचलीन कौचलैन काहनकी कुचहनुचालि ॥ १॥

अन्त— ॥ दोहा ॥ जान्यौं विस्वामित्र के कोपनु क्यौंनुर आइ।
राजा दसरथ सों कह्यो बचन वसिष्ट बनाइ ॥
..........................भक्त राम को कहाई।

(यह अंश फटा होने के कारण, कागज साट दिया गया है, जिससे पढ़ा नहीं जा सकता है।)

लहैजु मुक्तलोक लोक अंतमुक्त होई ताहि ॥
कहै सुनैपढै गुनै जु रामचन्द्र चन्द्रिकाहि ॥ २२६ ॥
इति श्री इन्द्रजीतविरचितायां श्रीमत्सकल लोकलोचन चकोर चिंतामनि श्रीः रामचंद्र चन्द्रिकायां सीतासमागमो नाम प्रकाश ३६ समो। इति श्री रामचंद्रिका कवि केसोदासकृत संपूर्णम् ॥

विषय— राम-जीवन सम्बन्धी काव्य। रामयण का वर्णन पृ० १ से १६५ तक।

टिप्पणी— ग्रंथ के कुछ पृष्ठ बीच-बीच में फट गये हैं। पुस्तकालय की ओर से उस पर कागज साट दिये गये हैं। वे स्थान पढ़े नहीं जा सकते हैं। ग्रंथकार ने प्रारंभ में ग्रंथरचना के इतिहास पर कुछ कविताएँ लिखी हैं—रचना-काल के संबंध में—

॥ दोहा ॥

"उपज्यौ तिहि कुल मंदमति सुनत कविकेसोदासु ।
रामचन्द्र की चंद्रिका भाषाकरी प्रकासु ॥ ५ ॥
सोरह सै अठावनि । कातिक सुदिबुधवारु ।
राम चंद्रकी चंदूका । कीनौ तव अवतारु ॥ ६ ॥

यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल, पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है ।
पु० क्र० संख्या ७५ है ।

५६. रामचन्द्रिका—ग्रंथकार—श्री केशवदास । लिपिकार—बेनीमाधव । अवस्था–अच्छी, प्राचीन, हाथ का बना, देशी कागज । पृष्ठ—२२३ । प्र० पृ० पं० लगभग—३० । आकार—६"×१३" । पूर्ण । भाषा-हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—कार्तिक, शुक्ल, सं० १६५८, बुधवार । लिपिकाल—भाद्र, कृष्ण १० दशमी, सं० १९३७, (सन् १८८० ई०), भौमवार । टीकाकाल—सं० १८६२ ।

प्रारंभ—(मोटे अक्षरों में) श्री गणेशायनमः

बालक मृनालनिज्यौं तोरिडारै सबकालकठिन करालत्यौं अकालदीहदुषकों
बिपत्तिहरत हठिपद्मिनी के पात सम पंकज्यों पतालपेलिपठवै कलुषकों
दूरिकै कंलक अंक भवसीस सम राषत है केशोदास दास के वपुषकों
सांकरे की सांकरन सनमुख होतहीं तौ दसमुष मुषजो वैगजमुष मुखको १
बानी जगरानी की उदारता बषानी जाय ऐसी मतिके सब उदार कौनकी भई
देवता प्रसिद्ध सिद्ध रिषिराज तप वृद्ध कहि कहि हारे सब कहिनकाहूंलई
भावी भूत वर्तमान जगत बषानत है तदपि सुक केहू नवषा निकाहू पैगई
वरनैं पतिचारिमुख पूतवनैं पाचमुख नाती वनैं षटमुख तदपि नई नई २

(पतले अक्षरों में, टीका) श्री गणेशायनमः ॥ कवित्व ॥

कुंदसित सुडगंडगुंजत मलिंदझुंडवंदन विराजै मुंडअदभुतगति को
बालससि मालतीनिलोचनविसाल राजै फनिगनमालसुभसदनसुमति को
ध्यावतविनाही श्रमलावत वारनर पावतअपार मोद मार धनपति को
पापगनमंदन को विघननिकंदन को आठौजामवंदन करतगनपति को १

(इस प्रकार कई पदों में, बन्दना और टीका-सम्बन्धी निर्देश के बाद मूल ग्रन्थ की टीका प्रारंभ की गई है) :—

बालकपांचवर्ष कों जैसे मृनाल यौं नारी को सबकाल मै तोरिडारत है तैसे गनेस कठिन औ कलसभयानक औ अकाल कहैं पुत्र मरनादि दासन को दुषहै ताकोतोरत हैं ।

अन्त—(मोटे अक्षरों में) रूपकांताछंद

अशेष पुन्यपापके कलाप आपने बहाइ
विदेह राजज्यौं सदेह भक्तराम को कहाइ
लहै सो मुक्ति लोक-लोक अंत मुक्ति होइताहि
कहै सुनै पठै गुनै जो रामचंद्रचंद्रिकाहि ४० इति श्री राम :
इति श्री मत्सकललोकलोचनचकोर चिंतामणि श्री रामचंद्रचंद्रिकायां इंद्रजी
विरचितायां कुशलवसमागमो नामैकोनचत्वारिंशः प्रकाश: ३६समाप्तोयं ग्रंथः।

(पतले अक्षरों में)—कलाप समूह पुन्यपापके नासशों मुक्ति होती है अवश्यमेव
भोक्तव्यंकृतंकर्मसुभासुभंइति प्रमाणात् अथवा जाके धारनसों प्राप्त जो
यज्ञादिको अशेषसंपूर्ण पुन्य है तासों पापके कलाप बहाइ कै ४०

॥ कवित्व ॥

कैधौं सप्तसागर विराजे मान जापै पैठि पाइ पत परमपदारथ की राशिका
कंठमे करत सोमधरत सभा के मध्य कैधौं सोहै माल उर विमल उजाशिका
सेवतहीं जाको लहै सुमनप्रवीनताई जानकी प्रसाद कैधौं भारती हुलाशिका
ज्ञान की प्रकासिका मुकुति प्रदायिका है लेहुएसुजन रामभगति प्रकासिका१

॥ दोहा ॥

रामभक्ति उरआनिकै राम भक्त जनहेतु
रामचंद्रिका सिंधु में रच्यौ तिलक को सेतु
जो सुपंथतजि सेतु को चलिहैं और मगजोर
रामचंद्रिका सिंधुको लहहि कौन विधिओर

विषय—रामचन्द्र जीवन सम्बन्धी साहित्यक रचना। रामायण का वर्णन–पृष्ठ १ से २२३ तक। नागरी-प्रचारिणी-सभा की खोज-विवरणिका (सन् १६२६-२८) में भी इस ग्रंथ की चर्चा है और उसमें रचना-काल सन् १६०१ ई० है। उक्त रिपोर्ट में (पृष्ठ-सं० ५४) में लिखा है कि यह अवतक उपलब्ध हस्त-लेखों में प्राचीन है। इस ग्रंथ का भी रचना-काल यही है। तदनुसार यह भी सर्वप्राचीन प्रति है। अन्य खोज-विवरणों में भी—सन् १८२५, (खो० वि० १६०२ ई० सं० २५२)। १६३१ ई० (खो० वि० १६०३ ई० सं० २१), खो० वि० १६२३-२५ ई० संख्या २०७, खो० वि० १६२६-२७ ई० संख्या २३३ है।

टिप्पणी–पूर्व ग्रंथों के समान ही इसमें भी पदों में तो श्री केशवदासजी का नाम है, किन्तु प्रति 'प्रकाश' के अन्त में 'कुमार इन्द्रजीत' का भी नाम है। ग्रंथ के प्रारंभ करने के पूर्व ग्रंथकार ने, मंगलाचरण के वाद ग्रंथ के, निर्माण का पूर्ण विवरण दे दिया है। रचनाकाल के सम्वन्ध में :—

॥ सुगीतछंद ॥

"सनाढ्यजाति गुनाढ्य हैं जगसिद्ध शुद्धसुभाव
कृस्नदत्त प्रसिद्ध हैं महिमिश्र पंडितराव
गनेस सो सुतपाइयो बुधि कासिनाथ अगाधु
असेषसास्त्र विचारिकै जिनजानियो मत साधु ४"

॥ दोहा ॥

"उपज्यौ तेहिकुल मंदमति सठ कबि केशवदास
रामचंद्र की चंद्रिका भाषा करी प्रकास ५
सोरा सै अठावना कातिक सुदि बुधिबार
रामचंद्र की चंद्रिका तव लीन्हो अवतार ६
वाल्मीकिमुनि स्वप्न मैं दीन्हो दरसनचारु
केसव तिन सौं यों कह्यौ केयों पाउसुषसारु ७"

पूर्व ग्रंथों में राजा और कुमार श्री इन्द्रजित के सम्बन्ध में चर्चा है। किन्तु इसमें नहीं है।

२—ग्रंथ के टीकाकार श्री जानकीप्रसाद जी हैं। इनका नाम टीकाकार के रूप में ग्रंथ के प्रारंभ या अन्त में नहीं है ; किन्तु निम्नांकित पद से संकेत मिलता है—

"जुगुनू से भूषन जवाहिरजगत द्युति
सवदमयूर साधुमोद मरियन है
जानकीप्रसाद जगहरित करन मीठे
वैनरस वैरी ज्यौं जवां से जरियत है ॥"—(ग्रन्थ के प्रारंभ में)
"सेवतही जाको लहै सुवन प्रवीन्ताई
जानकीप्रसाद कैधों भारती हुलाशिका" —(ग्रन्थ के अन्त में)

इन दोनों पदों से टीकाकार का नाम 'श्री जानकी प्रसाद' स्पष्ट हो जाता है। टीकाकार ने बड़ी विस्तृत टीका की है। प्रारंभ के, मंगलाचरण के, एक-एक पद के कई अर्थ किये हैं,और उनके आधार पर ही प्रथम मंगलाचरण में ही सातों काण्डों की कथा की ओर संकेत किया है। इस टीका का नाम 'रामचन्द्रिका तिलक'है। टीका के सम्बन्ध में स्वयं टीकाकार ने लिखा है—

"तापरिपाक अछाइमन चंचलता निविहाइ
रामचंद्रिका को तिलक लाग्यौ करन वताइ
कठिनाइतम ग्रंथ की सथल विविध विहारु
तिलक दीप विन अवुध क्यों लषै पदार्थ चारु
तासौ सुमति विचारिचित कीन्हे तिलक अपार
देषि रीति तिनकी करयौ हो निजमति अनुसार"

॥ घनाक्षरी ॥

"मेदिनी अमर अभिधानचिंतामनि गनिहारावलि आदि को समत उर धारिकै
वालमीकि आदि कविता को मतमीनो दीनो ज्योतिष प्रमान कहूं जुगुत निहारिकै
ग्रंथ गुरुताके मम सकलन लीन्हो कीन्हो अरथ उकुति पद कठिन ठिहारिकै
रामचंद्रजू के चरन निचितराषि रामचंद्रचंद्रिका को कीन्हो तिलक विचारिकै"

॥ चंचलाछंद ॥

"नैन सूरज वाजिसिद्धि निशीस संबतचारु शुक्र संजुत शुक्ल पक्ष सुरेस पूजितवारु
चारु दिक्कथिहस्ततारवरिष्ठयोग नवीन राम भक्ति प्रकासिका अवतारता दिनलीन।"

इन पदों से टीकाकार ने टीकाकाल की ओर भी निर्देश किया है। अन्तिम चरण से टीका का नाम 'रामभक्ति प्रकाशिका' भी व्यक्त होता है। इस टीका ने ग्रंथ को वृहद्-काय कर दिया है।

३--ग्रंथ की लिपि-शैली प्राचीन है। अस्पष्ट लिखावट है। मूल ग्रंथ पृष्ठ के बीच में मोटे अक्षरों में है। टीका मूल, के ऊपर और नीचे पतले अक्षरों में है। किसी कोश, या अन्य ग्रंथ का उद्धरण भी दिया गया है। लिपिकार ने ग्रंथ के अन्त में--

"समाप्तोयं ग्रंथः संबत् १६३७ भाद्र पद कृस्न दशम्यां
भौमवासरे लिषितं सत्य शुल्क बेनीमाधवेन श्री रामचंद्रिकायां शुभं

इस ग्रंथ में 'ब' और 'व' के लिए अन्य ग्रंथो के समान क्रमशः 'व' और 'व़' क प्रयोग नहीं करके, दोनों के लिए केवल 'व' का ही प्रयोग किया है।

यह पोथी 'श्री मन्नूलाल, पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र०सं० का० ७६ है।

६०. राम-रत्नावली—ग्रंथकार—शिवदीनकवि। लिपिकार—+। अवस्था—अच्छी है, देशी कागज। पृष्ठ—५। प्र० पृ० पं० लगभग—१६। आकार—५"×१०"। पूर्ण। भाषा-हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल-+। लिपिकाल—+।

प्रारंभ—ॐ श्री गणेशायनमः ॥ अथ रामरत्नावली लिख्यते ॥ दोहा ॥

अजै अगमकहिं गावश्रुति अंबुधि अहिआसीन।
तेहिके सगुन चरित्र मिस सुमिरि सुकवि सिवदीन ॥ १ ॥
राम पंचदस वरस के छ वरस के मिथिलेसि ॥
व्याहि अयोध्या आइपुनि बारह वरस निवेसि ॥ २ ॥

भए सताइस बरस के जब रघुपति सुषशाज ॥
गुरुजन पितु मिलि मंत्रकरि करन लगे जुवराज ॥ ३ ॥
तब दसरथ सन केकई मागै द्वै बरदान ॥
सानुज राम सुसीयबन चौदह बरस प्रमान ॥ ४ ॥

अन्त— नौ सैष्यासठबरस लौ एहिविधि रहिमुनि गेह ॥
वरष जनकतनया रहीं तेतिस की तेहिकाल ॥ ५० ॥
वैदेही प्रवासे घर निलगिदसबरस हजार ।
औधराज भोग्यौ प्रभु कौतुकहित संसार ॥ ५२ ॥
अग्नि देशकृत वूझि किय रामचरित रमनीय ।
कैहे गैहे तानु फल दैहैं रघुबरसीय ॥ ५३ ॥
इति श्री शिवदीनकविकृते रामरत्नावलि समाप्तम् ॥

विषय—- राम सम्बन्धी काव्य । पृष्ठ १ से ५ तक पूर्ण । कुल पद्य-सं० ५२ ।
पृष्ठ १ में रामचन्द्र का विवाह, राज्याभिषेक का आयोजन कैकयी द्वारा वर की याचना, राम का वनवास, चित्रकूट निवास, सीताहरण, हनुमान आदि से भेंट, हनुमान का लंकागमन, ओर अशोक-वाटिका-विध्वंस । पृष्ठ २ में रावण की सभा में अंगद का प्रवेश, रामकी सैन्यसज्जा, समुद्र-बन्धन । पृष्ठ ३ में—कुम्भकर्ण-वध और लक्ष्मण के साथ मेघनाद का संग्राम । पृष्ठ ४ में लक्ष्मण की मूर्च्छा हनुमान द्वारा संजीवनी वूटी का लाना और मेघनाद तथा रावण-वध । पृष्ठ ५ में पुष्पक विमान पर अयोध्या के लिए प्रस्थान ।

टिप्पणी—इस ग्रंथ में राम के, विवाह से प्रारंभ कर के राज्याभिषेक और सीता-प्रवास तक की तिथि, मास, पक्ष दिन आदि दिये गये हैं जैसे—

"अगहनघेरी सप्तमी मिलै सहितसुग्रीव ॥
रघुवीरहि सौंपी हनुचिंतामनि चितजीव ॥ २५ ॥
अष्टमि उत्तरफाल्गुनी विजै मुहूरत माँह
घरस्थापु जुगजामगत कीन्हें रघुकुलनाह ॥ २६ ॥
सतऐं दिन सैना सहित उतरे शागरतीर ॥
पुनिप्रद ते तीजलगि टिके रहे रघुवीर ॥ २७ ॥"

इसीप्रकार—

"बहुरि चतुर्थी को चले चढ़िपुष्पक रघुदीप ॥
नभमारग आए तुरत नगरी अवध समीप ॥ ४५ ॥
पूरे चौदह बरस के मधुसित पंचमि काँह ॥
भरद्वाज थलगत सिय सानुज सहित उछाह ॥ ४६ ॥"

पूरे ग्रंथ में राम-जीवन से संबंधित तिथि-क्रम दिये गये हैं। ग्रंथ की लिपि स्पष्ट तथा सुन्दर है। लिपिकार के नाम का निर्देश नहीं है। यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया, में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० का० ७८ है।

६१. रामविनोद—ग्रंथकार—बलदेवकवि। लिपिकार—भवानीदास। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ–१६७। प्र० पृ० पं० लगभग –२०। आकार—६"×६"। खण्डित। भाषा–हिन्दी। लिपि–नागरी। रचनाकाल– + । लिपिकाल–सं० १७६६ वि० ॥

॥ सवैया ॥

प्रारंभ—मधुमास सुहावन पावनकाल सवाल नरेसहि हर्षजनाए ॥
शशि तोषक पक्ष सुखच्छ महानवमी तिथि भानु द्यु वाछबिछाए ॥
ग्रहवार नक्षत्र सबै अनुकूल हिए जगजंगम मोद बढ़ाए ॥
नृपमंदिर सुन्दर मंगलषानिक स्नायुत श्री अजभूतल आए ॥१४॥
सबलोक निवास-निवास लिए नृपके गृहमै नर रूप सवारी ॥
युत अंसन पुत्र कहावत मोद सरथ्य को पंकजनभि षरारी ॥
जेहि संकर नारद ध्यान न पावत ध्यावत जाहि सबै तपधारी ॥
निज दासन हेतु लियो अवतार अपार अषंड सरूप सुचारी ॥

॥ सोरठा ॥

कौसल्यासुत राम भई केकई सुत भरत ॥
लषन सत्रुहन नाम भए सुमित्रा तनय सुभ ॥

॥ घनाक्षरी छंद ॥

अन्त—संत बड़े तपी अतिठाकुर सहजसौम्य समता कि सीव माया सदां अनुगति है ॥
हरन बिपति छदम सुरकुल लालियत का मद सुसील रिच्च तुस सहित मति है ॥
वाको समरथ्य सुधोक्रतु को हरासपथ बितनोई दया प्रभा गति टेक वति है ॥
राजमणि राम जपि केवल मलिन तत्व जड़ सठजतन वे पारलगे कति है ॥

॥ दोहा ॥

या कवित्त वारह वरन लै पदांतयक त्यागि ॥
सम्बत् मासादिक लपब रामचरन अनुरागि ॥

इति श्री रामविनोदे वलदेवकविकृते ग्रांथान्त को मंगलाचरन समाप्तम् ॥ सुभं भूयात् ॥

विषय—राम-जीवन-सम्बन्धी कविता। ग्रंथ में सोरठा, तोटक, भुजंगप्रयात, मत्तगयंद, उर्मिला, नराच, सवैया, तोमर, उर्मिला, तारक, दोधक, चामर, चंचला, संजुता, चित्रपद, मधुराचला, सगुनी, सिंहगति, मल्लिका, जगत प्रकास आदि छंदों का प्रयोग हुआ है। संपूर्ण ग्रंथ सात काण्डों में विभक्त हैं। प्रत्येक काण्ड में कई सर्ग हैं। पूरे ग्रंथ में ३१ सर्ग हैं। प्रारंभ के दो पृष्ठ खंडित हैं।

ग्रन्थकार ने विविध छन्दों, अलंकारों और रचनाविन्यासों से सुभूषित इस ग्रन्थ को मनोहर और सुरुचिपूर्ण वनाने का प्रयास किया है। ग्रंथ की रचना शैली प्राचीन है।

प्रथम सर्ग में—रामजन्मोत्साह वर्णन।
द्वितीय " "—विश्वामित्र का आगमन।
तृतीय " "—राम का जनकपुर प्रवेश।
चतुर्थ " "—अहल्या उद्धार।
पंचम " "—धनुर्भंग।
षष्ठ " "—सीता-परिणय-वर्णन।
सप्तम " "—राम-मन्दिर-प्रवेशः।
अष्टम " "—रामविवाहोत्सव।
नवम " "—दशरथनगर प्रवेशः।
दशम " "—अवधविलासवर्ननोनाम।

इसी प्रकार ३१ सर्गों में रामजीवन-सम्बन्धी विषयों का कवित्त्व-पूर्ण प्रतिपादन किया गया है। यत्र-तत्र रामचरितमानस की शैली का भी अनुवर्तन हुआ है। यथा—पृष्ठ-संख्या ५१ में—

"यक दिन नरपालक अरिगन घालक सानंद सभा विराजे ॥
दर्पन कर लीने प्रेमनमीने सीस मुकुट वरसाजे।
उज्जल कच देपे मंत्री लेपे मानहु सीप सिखावै ॥ आदि

टिप्पणी—यह ग्रंथ, अनुसंधेय है। अप्रकाशित है। इसके पद, गेय, विविध छंदों में बड़े ही अच्छे भाव भरे हैं। वर्णनशैली अति उत्तम और प्रशंसनीय है। ऊपर के रेखांकित पद में रचयिता ने रचनाकाल की ओर संकेत किया है। इसमें प्रायः उन छंदों का अधिक प्रयोग है, जिनका प्रयोग प्रायः कम होता रहा है। जैसे—समानिका, दमिला, दोधक-राजाअनुष्टुप, सुमंत दुमिला, सोमराजी, कंदछंद, आदि इसी प्रकार के और भी नवीन छंदों का प्रयोग हुआ है। रचना में,उपमा, अनुप्रास और विरोधाभास का प्रचुर समावेश है। ग्रन्थ सुवाच्य है। ग्रन्थकार का नाम नवीन है तथा रचना भी अप्रकाशित है। ग्रंथ अठारहवीं सदी का प्रतीत होता है। इस नाम के कवि की सूचना नागरी-प्रचारिणी (काशी) की खोज विवरणिका (सन् १९२६-२८) में भी है। देखिए–खोजविवरणिका पृष्ठ सं० १७। कवि संख्या—३२। 'मिश्रबंधु विनोद' में भी सं० २३४० में इस नाम के एक कवि की चर्चा की गई है। नागरी-प्रचारिणी की खोज विवरणिका में 'बलदेव' नाम के कवि की 'जानकी विजय' नामक रचना का उल्लेख है। इसका रचनाकाल है १८७६ ई०। ग्रन्थ और कवि अनुसन्धेय हैं।

२. *लिपिकार ने ग्रंथ के अन्त में*—

"सम्बत रविदिन छानवे त्रयोदसी मलिमास
रामविनोद समाप्तयो लिख्यो भवानीदास ॥"

लिपिकाल और अपने नाम की ओर संकेत किया है।

पदों के पूर्व छंदों को लाल स्याही में लिखा गया है। यह ग्रन्थ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु०क्र० सं० का० ८० है।

६२. **विनय पत्रिका**—ग्रंथकार —श्री तुलसीदास। लिपिकार–×। अवस्था-अच्छी, हाथ का बना,देशी कागज। पृ० १००। प्र०पृ० पं० लगभग—२०। आकार–६"×१२"। भाषा–हिन्दी। लिपि–नागरी। रचनाकाल–+। लिपिकाल–+।

प्रारंभ—श्री गणेशायनमः ॥ विनयपत्रिका लिखते ॥

॥ रागवेलावर ॥

गाइयै गणपति जगबन्दन , शंकर सुवन भवानी के नंदन ॥
सिद्धि सदन गजबदन बिनायक । कृपासिंधु सुंदर सब लायक ॥
मोदपृय मुद मंगलदाता , बिद्या बारिधि बुद्धि विधाता ॥
मागत तुलसि दास करजोरे , बसहि राम सिय मानस मोरे ॥१॥
दिनदयाल दिवाकर जो देवा , कर मुनि मनुज चराचरसेवा ॥

हिम तम करि केहरि कर माली , दहन दो पदु पद रितरु जाली ।।
कोक कोकनद लोक प्रकासी , तेज ताप रूप रस राशी ।।
सारथि पंग दिव्य रथ गामी ।। हरिशंकरविधि मुरति स्वामी ।।
वेद पुराण प्रगट यश जागि , तुलसिदास भक्ति वरमागि ।।२।।

।। श्लोक ।।

अन्त--"यदि रघुपति भक्तिमुक्तिदा वजते सा सकल कलुष हर्त्रि शेवनीया सहास्तान् ।।
शृणुत सुमति प्रेयो निर्मिता राम भक्तैर्जगति तुलशी दासै रामगीतावलीयम् ।।१।।
जया" २६१ ।।

इति श्री गोसाईं तुलशीदास कृत विनैपत्रिका संम्पूरण ।। शुभमस्तु सिद्धिरस्तु ।।"

विषय— राम सम्बन्धी स्तुतिगीत । सीता, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, हनुमान, महादेव, गंगा आदि की स्तुति और विनय । १ से १०० पृष्ठ तक सम्पूर्ण ।

टिप्पणी—लिपि अत्यन्त प्राचीन होने के कारण अस्पष्ट है । ग्रंथ के प्रारंभ या अन्त में लिपिकार के नाम का कोई भी संकेत नहीं मिलता है । लिपिकाल अथवा रचनाकाल की भी चर्चा ग्रन्थ में नहीं है । यह ग्रन्थ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है । पु० क्र० सं० क० ८३ है ।

६३. **विनयपत्रिका**—ग्रंथकार—श्री सूरदास जी । लिपिकार— × । अवस्था--प्राचीन, प्रायः सभी पृष्ठों को कीड़े चाट गये हैं, अतः जर्जर हो गये हैं । पृष्ठ--२५ । प्र० पृ० पं० लगभग--५० । रचनाकाल-- × । लिपिकाल-- × । आकार—६½" × १२" । भाषा--हिन्दी । लिपि—नागरी ।

प्रारंभ—"ॐ श्री गणेशायनमः ।। अथ विनयपत्रीका सूरदास जी का लिख्यते ।।

।। रागविलावल ।।

करनी करुणासिंधु की कहत न आवै ।
कपट तरै परसेव की जननी गति पावै ।।
दुषित गजेंद्रहि जानिके आपुन उठि धावै ।
कलि में नाम प्रगट नीचता की छानि छवावै ।।
उग्रसेन की दीनता प्रभु के जिय भावै ।
कंस मारि राजा कीयो आपुन सिर नावै ।।
बरुण पास ते व्रजपतिहि छिन में छिटकावै ।
वहुत दोषमो सूर कहें ताते गहरु लगावै ।।१।।

माधो वे भुज कहा दुराये ।
जिन्ही भुजनि गोवर्द्धन धार्यो सुरपति गर्व नसाये ॥
जिन्ही भुजनिकाल को नाथ्यौ कमल नाल लै आये ।
जिन्ही भुजनि प्रह्लाद उवार्यौ हिरण्याक्षको धाये ॥
जिन्ही भुजनि गजदंत उपारे मथुरा कंस ढहाये ।
जिन्ही भुजनि दांबरी वंधाये जमला मुकति पठाये ॥
जिन्ह ही भुजनि अघासुर मार्यौ गोसुत गाय मिलाये ।
तिहि भुजकी बलि जाय सूरजन तिनका तोरि दिखाये ॥ २ ॥"

अन्त— "॥ रागनट ॥

मेरी वेर है क्यौं शोचिवो टिके अघकाल पठवहु ज्यौं दियो गजमोचि ।
कौन करनी करी वडिये सो करो फिरि कांधि ।
न्याव की पुनुसोन कीजै चूक पल भर बांधि ॥
मैं कछु करबे न छाड्यौ या संसार हि पाई ।
दीन दयाल कृपासिंधु प्रभु भक्तन के सुषदाई ॥
तउ मेरो मुप मानत नाही करत न लागी बार ।
सूर प्रभु यह जानि पदवी चले बेलहि आर ॥२००॥

इति श्री कृस्नानंद व्यासदेव रागसागरोद्भव सूरसागर राग कल्पद्रुम अपनी दीनता प्रभुजी को महात्म्य विनयपत्रिका सम्पूर्णम् ।"

विषय— विनय के पद । गेय कविता । कृष्ण के जीवन की अनेक घटनाओं पर उनकी स्तुति तथा विनय ।

टिप्पणी— इस ग्रंथ के साथ ही 'सारावली' के २ पृष्ठों का दृष्टकूट के पद और 'नित्यकीर्तन' के पद हैं। संभवतः यह ग्रंथ दुष्प्राप्य है। ग्रंथ की लिपि स्पष्ट तथा सुन्दर है, किन्तु सभी पृष्ठ कीड़ों से खाये जाने के कारण जर्जर हो गये हैं।

यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय,गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क० ८४ है।

६४ **विनयपत्रिका**–ग्रंथकार—गोस्वामी तुलसीदास । लिपिकार—जसवंतठाकुरवाड़ी, मनेर के साधु । अवस्था—अच्छी, हाथ का बना, मोटा, देशी कागज । पृष्ठ—१२४ । प्र० पृ० पं० लगभग—२२ । आकार –७" × ६½" । भाषा–हिन्दी । लिपि–नागरी । रचनाकाल– × । लिपिकाल–आषाढ़,कृष्णा, अमावास्या, सं० १८६८, शनिवार ।

प्रारंभ—"श्री मतेरामानुजायनमः । रागविलावल ।

गाइये गणपती जगवंदन । संकर सुवन भवानी नन्दन ।।
सिद्धि सदन गजवदन विनायक । कृपासिंधु सुदर सव लायक ।।
मोद कष्व्य मुद मंगल दाता । विद्यावारिधि वुद्धिविधाता ।।
मागत तुलशीदास कर जोरे । वसहु राम सिय मानस मोरे ।।१।।"

अन्त— "मारुति मनरुचि भरत कि लपी लपन कहिहैं ।
कलिकालहु नाथ नामसों प्रतीति प्रीतियेक किंकरकि निवहि है ।।
सकल सभा सुनिलै उठि जानि रिती सो रहि है ॥
भरत कृपा गरिव नेवाज कि देपन को सहसा वांह गहि है ।।
विहसि राम कहेवो सत्य है सुधियेहूं लहि है ।
मुदित माथ नावत वनि तुलसी की परी रघुनाथ सही है ।।२८०।।
ईति श्री गोस्वामी तुलसीदास कृत विनयपत्रिका संपूरणः ।।"

विषय— रामसम्बन्धी गेय पद । लक्ष्मण, भरत, हनुमान्, सुग्रीव और सीता की स्तुति और विनय । १ से—१२४ पृष्ठ तक संपूर्ण ।
बीच-बीच में लिपिकार ने यत्र-तत्र अपनी ओर से टिप्पणी भी दी है । टिप्पणी की गद्यभाषा पर 'सधुक्कड़ी' का प्रभाव है ।

टिप्पणी—लिपिकार ने स्थान-स्थान पर मूल ग्रंथ के हाशिये पर, कठिन और दार्शनिक पदों का सामान्य अर्थ भी लिख दिया है । लिपि की शैली प्राचीन है । लिखावट शुद्ध और समीचीन है ।

लिपिकार ने ग्रंथ की समाप्ति के वाद लिखा है—"सुभ सम्वत ।।१८६८।। आषाढ़ मासे कृष्णपक्षे अमावस्यां शनिवासरे श्री जानकि वरहमजू के कृपाते लिपा गया पाठार्थ दसषत पास जसवंत ठाकुरवारी मे मनेर ।"

(यह "मनेर" पटना जिले में दानापुर से पूरब गंगा के तट पर है ।) इस में सभी २८० पद हैं । ग्रंथ जीर्ण-शीर्ण । कागज अति प्राचीन है । यह ग्रंथ अन्य स्थानों में भी उपलब्ध हुआ है । देखिए-नागरी प्रचारिणी की खोज—रिपोर्ट—लिपिकाल—१८२७ ई० (खो० वि० १९०६-८ सं० २४५ जी०), १८२२ (खो० वि० १९०९—११ सं० ३२३ एल्०), (खो० वि० १९१७ सं०१९६एफ०) (खो० वि० १९२०-२२-सं० १९८ के०) (खो० वि० १९२३-२५ सं० ३३२) (खो० वि० १९२६-२८ सं० ४८२ ए २बी० २ सी२) । यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है । पु० क्र० सं० ८६—क है ।

६५ विनयपत्रिका—ग्रंथकार—श्री गोस्वामी तुलसीदास जी। लिपिकार—ब्होरणदास। अवस्था—अच्छी, हाथ का बना, पुराना देशी कागज। पृष्ठ-१३४। प्र० पृ० पं० लगभग—३६। आकार—६ × १०"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—आषाढ़, शुक्ल १३, त्रयोदसी, सं० १८६६ (सन् १८२२)।

प्रारंभ— "रागबिलावल। हरत सकल पाप त्रिविधिताप सुमिरत सुरसरित।
विलसत महि कलपबेलि मुद मनोरथ फरित॥
सोहत शशि धवलधार सुधा सलिल भरित।
बिमल तर तरंग लसत रघुवर कैसे चरित।
तो बिन जगदंब गंग केत्ति जंगका करित।
घोर भव अपार सिंधु तुलसी कैसे तरित।१६।"

मध्य की पंक्तियाँ (पृ० सं० ४८)

"मन माधौकों नेकु निहारहिं।
सुनु सव सदा रंकके घन ज्यौ छिण-छिण प्रभुहि संभारहिं॥
शोभाशील ग्यान गुण मंदिर सुन्दर परम उदारहिं।
रंजन संत अखिल अघ गंजन भंजन विषय विकारहिं॥
जो विन जोग जज्ञ व्रत संगम गयो वहे नव पारहिं।
तो जनि तुलसीदास निसिवासर हरिपद कमल विसारहिं॥८६॥"

अन्त— "मारुति मन रुचि भरत की लषि लषण कही है।
कलि कालहु नाग नामसों प्रीति प्रतीति एक किंकर की निवही है॥
सकल सभा सुनिलै उठी जानि रीती सो रही है।
कृपा गरीब नेवाज की देषत गरीब को सहसा बाह गही है॥
बिहंसि राम कह्यौ सत्य है सुधि मैं हूलही है।
मुदित माथ नावत वनी तुलसी अनाथ की परी रघुनाथ सही है॥२७६॥
इति श्री विनयपत्रिका तुलसीदास कृत समाप्त।

विषय— राम सम्बन्धी गेय पद। लक्ष्मण, भरत, सुग्रीव, हनुमान् और सीता के लिए किये गये विनय के पद।

टिप्पणी—इस पोथी की लिपि पुरानी है। ग्रंथ कई स्थानों पर फट गया है। बीच में, फटे हुए स्थान पर कागज चिपका दिए गए हैं। लिपि स्पष्ट है। लिपिकार ने ग्रंथ की समाप्ति के वाद लिखा है :—

"नवरस वसुछिति सहित लै सम्बत······रि मान ॥
मास अषाठसु सुक्लपच्छ त्रयोदसी बुध जान ॥

श्री श्री श्री बाबुसाहेब श्री बाबू जगदेव सिंह जी पाठनार्थे बहोरणदास लिखा ॥ ग्रंथ १० पृष्ठ से प्रारंभ हुआ है। नागरी प्रचारीणी की खोज-विवरणिका में ५ 'विनयपत्रिका' की खोज-रिपोर्ट है। देखिए पृष्ठ सं० ७४३ (सन् १९२६-२८)। यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल, पुस्तकालय, गया में, सुरक्षित है। पु० क्र० सं० का ८७ है।

३६. **वैराग्यसंदीपन**—ग्रन्थकार—गो० तुलसीदास। लिपिकार—जुगलकिशोर लाल। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ— ३। प्र० पृ० पं० लगभग—४४। आकार—६" × १२"। भाषा-हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—+। लिपिकाल- आषाढ़, कृष्ण, सप्तमी, सं० १९१९, (सन् १८६२) गुरुवार।

प्रारंभ—"ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ वैरागसंदीपनी लीख्यते ॥

॥ दोहा ॥

राम वामदिसी जानकी लषन दाहिने वोर ॥
ध्यान सकल कल्यानमय सुरतरु तुलसी तोर ॥ १ ॥
तुलसी मिटै न मोहतम कोटिकरै गुन ग्राम ॥
हृदय कमल फूले नहीं बिन रविकुलरविराम ॥ २ ॥
सुनतलषतश्रुति नैनविन रसना बिन रसलेत ॥
वासनासिका विनलहे परसत बिना निकेत ॥ ३ ॥"

अन्त— ॥ चौपाई ॥

"राग दोष की अग्नि बुझानी ॥ काम क्रोध वासना विलानी ॥
तुलसी जबहीं शान्त ग्रह आई ॥ तब उरहि उरफीरी दुहाइ ॥ १८ ॥

॥ दोहा ॥

फीरी दुहाइ राम की गये कामादिक भाज ॥
तुलसी ज्यौं रवि उदै तैं तुरत जात तमशान ॥ १९ ॥
यह वीराग संदीपनी सुजन सुचित सुनिलेव ॥
अनुचित वचन विचारि कै सो सुधारि करिदेव ॥ २० ॥

इति श्री वैरागसंदीपनि महामोहो विध्वंसनी सांतरसवर्णननाम तृतीयो प्रकासः सम्पूर्णनम् ॥ सिद्धिरस्तु ॥ शुभमस्तु ॥ शुभम् भूयियात् ॥"

विषय—सन्तस्वभाव, सन्त महिमा आदि विषयों पर कविता। प्रथम प्रकाश—रामनाम महिमा, संत सुभाववर्णन। द्वितीय प्रकाश—संतों की महिमा का वर्णन। तृतीय प्रकाश—शान्ति, प्रशंसा, काम, क्रोधादि विकारों का दूर भगाना।

टिप्पणी-ग्रंथ-लिपि अच्छी है। नागरी-प्रचारिणी की खोज विवरणिका (सन् १६२६-२८) में भी इस ग्रंथ की चर्चा है। उसका रचनाकाल है—सं० १८८६ = १८२६ ई०। इसके अतिरिक्त अन्य खोज-रिपोर्टों में भी इस ग्रंथ की प्रतियों के उपलब्ध होने की चर्चा है--देखिए—

खोज-विवरण १६०० सं० ७, खो० वि० १६०३ सं० ८१, लिपिकाल--१८२६ ई०—खो० वि० १६०६-८ सं० २४५, लि० का० १८००—खो० वि० १६०६-११ सं० ३२३, खो० वि० १६१७-१६—सं० १६६डी०;खो०वि०—१६२०-२२ सं० १६८ जे०; खो० वि० १६२६-२८ सं० ४८२ डी०—इस ग्रंथ के लिपिकार हैं श्री जुगलकेश्वर लाल अमाँवा (गया) निवासी। इन्होंने ग्रंथ-रचना भी की है। यह पोथी श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० का ८८ है।

६७. शंकावली--ग्रन्थकार—+। लिपिकार--+। अवस्था—अच्छी, हाथ का बना, मोटा, देशी कागज। पृष्ठ--३०। प्र० पृ० पं० लगभग-२२। आकार--६" × ७½"। भाषा-हिन्दी। लिपि-नागरी। रचनाकाल-+। लिपिकाल—+।

प्रारंभ—"श्री जानकीबल्लभो विजयते अथ शंकावली लिख्यते ए गोसांई जी को रामायण विचारतें सर्वसंकारहित है जातें पूर्वा पर प्रकरण लगाये तें इसी ग्रंथमों समाधान बाहुल्यतें मिलत है परंतु इस ग्रंथ का प्रचार बहुत है यातें बहुतलोग संका करत है तातें कछु लिषत हैं संका भाषाबद्धकरविसैसोई प्रतिज्ञा ते विरुद्ध कांडन के आदि संस्कृत काहे कवि लिखे उत्तर देवबानी कों अति मंगलरूप जानिके वा भागाके षट्लछनयों संस्कृत हू चहीये १"

मध्य की पंक्तियाँ (पृ० सं० १५)—

"प्र० तौ कृसानु सबकै गति जाना ५१
सं० राघव एक रूप दोउ भाइन्ह को कहे
निज में भ्रम औ माला में द्वितीए सब में क्या हेतु
उ० नर नागर मों सबवनत है ५२
सं० रामजू प्रथम वाली वध कै एक नार्से प्रतिज्ञा
किन्ह फेरि दूसर वान चढ़ाये सोक्या हेतु
उ० वानर राज वाली तेहि के सहायक निवारणार्थ
वाण की अमोघता राम संकल्प के आधीन॥ ५३"

अन्त—"वहुत जन्म इत्यादि लिखि आए जीव कै जन्म नाहीं होत औ चारि अवस्था में जन्म रूप भेद पाया जात हैं जैसेवाल वृद्ध इत्यादि कोई सिर्फ लड़िका देखो होइफेरि दूसरी अवस्था में जो देखै सो न पहिचानेगा और जन्म संस्कार का नाम है औ चारो युग का जो भेद करते हैं सो प्रमानतौ समान जानब याही तै धर्मन में विरुद्ध भासै है जैसे सामान औ विशेष सो सव मतन मे सामान्य विसिष्ट पायो जात हैं औ विसिष्ट ये अनेक विरुद्ध देषो परै है जैसे मांस भज्जन मे विंध के दच्छिन वासीनकौ आज्ञा उत्तरवासी पतित होत हैं इनन धातु तौ जीव मे चरितार्थ नाहीं होत जैसे घटमठ आकाश की नास पावत है याही तैं जीव व्यापक जानो जात है और जन्म सूक्ष्म स्थूल सरीर कर के वहुत भासत हैं जैसे चौरासी लच्छ योनि जन्म परमित कियो सो संस्कार और काल को धर्मनिकौं मुख्य जानिवो साम औ दो०

मानजुत मानस सुषद संस्कार हित उदार
वोध रहित निज मोहवस संका करत अपारि १
मान समान अनेकजुत मानी मन गम नाँहि
मम साहस संकावली छमवसाधु महिंमांहि २
इति सप्तकांड संकावली संछेप : शुभम् ॥ ० ॥ अश्लोक २६०"

विषय— रामायण-सम्बन्धी शंकाओं के उत्तर। रामायण के वहुत से पदों में जो शंकाएँ उत्पन्न हो जाती हैं, उसका समाधान किया गया है।

टिप्पणी—इस ग्रंथ की गद्यशैली प्राचीन है। इस की भाषा खड़ी वोली के पूर्वकाल की है। लिपि पुरानी है। यह ग्रंथ-नागरी-प्रचारिणी की खोज-रिपोर्ट में भी है। देखिए —१९२६-२८ ई० की खोज विवरणिका पृ० सं० ५३६ और ५४५ में सं० ३७० वी० और ३७२ सी०। यद्यपि इस ग्रंथ में ग्रंथकार का नामोल्लेख नहीं है, किन्तु नागरी-प्रचारिणी की खोज-रिपोर्ट के अनुसार इसके रचयिता हैं श्री रघुनाथ दास, अयोध्यावासी। तीनों ही ग्रंथ का आदि और अन्त भाग समान है। इसग्रंथ के पढ़ने से प्रतीत होता है कि इसके ग्रंथकार 'रामचरितमानस' के मर्मज्ञ थे। इनके द्वारा रचित और भी अनेक ग्रंथ उपलव्ध हुए हैं, जिसकी चर्चा नागरी-प्रचारिणी की खोज रिपोर्ट (सन् १९२६-२८) में है। इनका रचनाकाल सन् १८५७ के लगभग है। इनके अन्य ग्रंथ खोज-विवरण सन् १९२३-२५ सं० ३२८ और ३२७ हैं। इन्होंने 'भक्त मालको माहात्म्य' नामक ग्रंथ की भी रचना की थी। इनके सभी ग्रंथों के विषय प्रायः एक हैं। रामायण-सम्वन्धी पठन-पाठन-शंकाओं का समाधान। इनकी रचना गद्य-पद्य दोनों में है। इनकी भाषा पर कथा-शैली का तो प्रभाव है, यत्र-तत्र सधुक्कड़ी भाषा का भी प्रयोग हुआ है। विशेष विवरण के लिए देखिए—नागरी-प्रचारिणी की खोज-रिपोर्ट। यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में, सुरक्षित है। पु० क्र० सं० का ८६ है।

६८. **शृङ्गार-संग्रह**—ग्रंथकार–सर्दारकवि। लिपिकार–जुगलकिशोरलाल। अवस्था–अच्छी है। पृष्ठ—१५१। प्र० पृ० पं० लगभग—४०। आकार—८½"×११"। भाषा–हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—आश्विन, कृष्ण अमावस्या, सं० १९२३, (सन् १८६६) सोमवार।

प्रारंभ—"ॐ श्री गणेशायनमः ॥ दोहा ॥

भूजा की जाकी कृपा पूजा करत हमेस
दूँजा हूजा जानवै सेस गनेश महेस ॥ १ ॥
श्रीकाशीपति कामतरु कामधेनु गुन रास ॥
जाके सेवक सुरुचिहैं औघड़सिंह षवास ॥ २ ॥
तिन अतिसय करि के कृपा कही सुकवि सरदार ॥
ग्रन्थ ऐक किजै रुचिर सब कविता के चार ॥ ३ ॥
कवित्त रहे सब कविन के लछन सब अविरोध
जाके देषत सुनतहीं होहीं काव्य को बोध ॥ ४ ॥

॥ स्वकीया लछन दोहा ॥

पति सुश्रूषा लाजजुत सील छमाछल हीन ॥
तासो स्वकीया कहतहैं कविजन परम प्रवीन ॥ ५ ॥

॥ कवित्त ॥

जानि कुरंगन को मदभेल लगाइए अंगन रंग सुचैनी ॥
चारदिनान भए अवहीं मति कौन चढ़ी चितपै पिकवैनी ॥
माइके कीन मने करिदेहुँ करैं ससुरार की सार सुषैनी ॥
राज कुमारि बिथा मरिए करिए किहि कारन भौंह तनैनी ॥ ६ ॥"

अन्त—"लोल द्रिग लोलक अलक झलकत छबि छलकति द्युति भानी करन कपोल मैं॥
दीपति ललातैं छटत विघटन पटनटत भृकुटी तट कलोल मैं ॥
आजु व्रजराज संग नवल किशोरी होरी षेलति लसति विलसति बर बोलमै।
रंग झरिझेलत पछेलत ऊलीन चढ़ि मेलति गुलाल मिलि जाति फिरि गोल मै
॥ ५२७ ॥

सज-साज-समाज सुहायो किये रहिराजि मनोहरता मे भली ॥
निकसी निजु मंदिर-मंदिरतै विकसी जनु कंचन कंज कली ॥
कल गावै किशोर बजावै सुरंग रमावति गोकुलहूँ की गली ॥
मज वामै घनी रचनामै सनी घनस्यामै वसंत घामे चली ॥५२८॥

संवत बानप हो ग्रह पुनि गौरी के नंदन को द्विज धारन ॥
भादव कुस्न अनूपम अष्टमि रोहिनि रिछमही सुतवारन ॥
उत्तम जो कवि है तिनके अति उत्तम जानि कवित्त विचारन ॥
संग्रह सो सरदार कियो यह औघड़सींह षवास के कारन ॥५२६।
इति सम्पूर्णम् ॥"

विषय— लक्षण-ग्रंथ। नायिका, नायक, रस, अलंकार आदि का विशद विवेचन। पृष्ठ १ से १५१ तक। मौलिक रचना। रचना में विभिन्न छन्दों का। उपयोग हुआ है। विषय शीर्षक लाल स्याही से लिखे गये हैं।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ अनुसंधेय है। रस, नायिका, अंगों के लक्षण और उदाहरण के साथ-साथ सभी ऋतुओं के आधार पर बड़ी सुन्दर रचना है। यह ग्रंथ अप्रकाशित है। शब्दयोजना भावपूर्ण है। जैसे :—

"सुरुचि सुवासनते वासन बनाइयाक सासन की सासन को कानन छरैलगी ॥
पानन में पावन प्रमोद पूरि-पूरि भूरि भावते भरम भारे भूपन धरै लगी ॥
कवि सरदार रास पास में प्रकासपाल परम प्रवीनपुंज भनक भरै लगी ॥
रूप मंजरी को जान आगम अनूप मालती मनोज मंत्र-तंत्र से पढै लगी ॥"

इस ग्रंथ में लक्षण, उदाहरण आदि अन्य ग्रंथों से, अन्य कवियों की भी रचना है। बाद में तत्सम्बन्धी अन्य कविताएँ भी संगृहीत की गई हैं, जिनके पूर्व संग्रह लिखा हुआ है। ग्रंथ के अन्त का बहुत बड़ा भाग, वसंत, शरद्, वर्षा, हेमंत, शिशिर आदि ऋतुओं के सम्बन्ध में बड़ी ही हृद्य रचना से समाप्त है। ग्रंथ में 'व' और 'ब' के लिए अन्य ग्रंथों के जैसा क्रमशः 'व' और 'व़' का प्रयोग न कर के साधारणतः 'व' का ही प्रयोग है। ऊपर के रेखांकित पद से, रचनाकाल का अस्पष्ट संकेत है। नागरी-प्रचारिणी की खोज-विवरणिका १९०९-११ में ग्रंथ सं० २८३ ए० में भी एक ग्रंथ मिला है, जिसका रचना-काल १८७५ है। यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल, पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० संख्या का० ६० है।

६९—श्री नाथजी के मन्दिर की भावना—ग्रंथकार—श्री हरिरामजी। लिपिकार—मुकुटवाला मोरारजू। अवस्था—अच्छी है। पृष्ठ—२६। प्र०पृ०पं० लगभग ३८। आकार—६"×१०"। भाषा-हिन्दी। लिपि– नागरी। रचनाकाल। लिपिकाल—श्रावण, कृष्ण, ९ नवमी, सं० १९७८, (१९२१) गुरुवार।

प्रारंभ—"श्री कृस्नायनमः ।। श्री गोपीजनवल्लभायनमः ।। अथ श्री नाथजी द्वारा की भावना तथा श्री नाथजी के मंदिर की भावनालिख्यते ।।
दोहा ।। श्री नाथजी मेरे नाथजी है मे हूं श्री नाथजी कौ दास ।।
मैं नाथी हूँ नाथ की ।। श्रीनाथ के हाथ ।।१।।

याकौ अर्थ ।।

श्री नाथजी सो श्री नाथजी मेरे नाथ है ।।
सो मेरे धनी हैं । सो ये श्री नाथजी की दासी हूं ।
सो मोकूं ईन ने नाथी है ।।

।। संका ।।

बेलब गेरज नावरतौ नथांय कहो आदमी नथांय ।।
सो असी कछु सुनी नहीं है ।।
तब कहेत है जो जैसें जना वर कें नाथ है ।।
सोतेसें आदमी नकूं ब्रह्म संबंध करावत है ।। सो नाथ जों ।।

मध्य की पंक्तियाँ—पृष्ठ ८

"नवधा भक्ति के नाम ।। श्रवण भक्ति ।।१।। कीर्तन भक्ति ।।२।। स्मरन भक्ति ।।३।। पाद सेवन भक्ति ।।४।।अर्चन भक्ति।।५।। वंदन भक्ति ।।६।। दास्य भक्ति ।।७।। सांख भक्ति ।।८।। आत्म निवेदन भक्ति ।।९।। सो ये नव भक्ति हों । सोतासूं वेनो सिटी हैं ।।"

अन्त—"सो सब रेसम में ओर सूत में पोवेल हैं ।
रेसमी डोरा में फुंदा सुंधा विराजत हैं ।।
सो कितन को वरनन करें ।।
श्रीश्रीश्री १०८ श्रीश्री अव श्रीहरिरायजी आपु आज्ञा करत हैं ।। जो कोई बैस्नव श्री नाथजी के मंदिर की भावना सुंने ।।
और सुनावे ओर बांचे ।।
ताके सकल मनोर्थ पूरण होंयगे ।।
इति श्री नाथजी द्वारा की भावना तथा श्री नाथजी के मंदिर की भावना श्री हरिरायजी कृत संपूर्णम् ।।"

विषय—श्री नाथजी के मंदिर की सभी वस्तुओं की सूची । गद्य-ग्रंथ ।
टिप्पणी—इस ग्रंथ में श्री नाथजी के मंदिर के वस्तुओं का गद्यशैली में रोचक वर्णन है यह गद्यशैली, बनारस, गाजीपुर के आसपास की है । ग्रंथ के अन्त में दो पृष्ठों में, पूरे ग्रंथ में जिन स्थानों में जिन वस्तुओं के विषय में, जिस पृष्ठ में

लिखा है, उसकी सूची दे दी गई है। इस ग्रंथ से उक्त मन्दिर और मन्दिर के आसपास के स्थान तथा ऐतिहासिक सभी सामान का ज्ञान हो जाता है। ग्रंथ की लिपि प्राचीन है। इसके लिपिकार कोई मेवाड़ के सज्जन प्रतीत होते हैं, जैसा कि ग्रंथ के अन्त में दिये गए एक मुहर से ज्ञात होता है। इस में पूर्णविराम, अर्धविराम आदि नहीं हैं। ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० का० ६१ है।

०—**शंतपंच चौपाई**—ग्रंथकार ×।—लिपिकार— ×। अवस्था—अच्छी है। पृष्ठ—८। प्र०-पृ० पं० लगभग—२४। आकार—४½"×६½"। भाषा-हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल— × रचनाकार—। लिपिकाल— ×।

प्रारंभ—"भृकुटि मनोज भालछविहानी तिलक ललाट पटल द्युतिकारी।
कुंडल मकर मुकुट सिरमाला कुटिल केसजनु मयूष समाजा॥
उर श्रीवत्स रुचिर वरमाला फटिक हार भुषन मनि जाला।
केहरि कंच रचारु जनेउ बाहु विभूषन सुंदर तेउ॥"

मध्य की पंक्तियाँ—पृष्ठ ४
"शारद विमल विधु वदन शोहावन।
नयनन वल राजीव लजावन॥
श्याम शरीर शुभाव शुहावन।
शोभा कोटि मनोज लजावन॥

अन्त—"नील कंज लोचन भव मोचन, भ्राजत भाल तिलक गौलोचन।
विकट भ्रिकुटि स्नम स्रवन शुहाए, कुंचित-कचमेचक छविछाऐ।
पीत.................शोहै किल कनिचित वनि भावति मोहैं
रूप राशि त्रिप अजिर विहारी······श्याम गात विशाल भुजचारी
अस्तुति करती नयन भरिवारी।"

विषय—रामचन्द्रजी के जन्म तथा बाललीला-वर्णन। चौपाइयों में ही समस्त रचना है। राम-सौन्दर्य और भाइयों के बाल-चापल्य का, उन की वेश-भूषा आदि का वर्णन है। रचना तुलसीदास के रामचरित मानस जैसी है।

उदाहरणार्थ—"राम वाम दिश शीता शोइ
के कि कंठ दिति श्यामल अंगा
तड़ित विनिन्ध्य कवशन शुरंगा
······विभुषन विविध वनाए
मंगल शुभ शव भाँति सुहाए

और भी—

शर शिज लोचन वाहु विशाला
जटा मुकुट शीर उर वनमाला
श्याम गौर शुन्दर दोउ भाई
....
श्याम गात शीर जटा वनाए
अरुन नयन शर चाप चढाए"

टिप्पणी—लिपि प्राचीन है। शैली पुरानी होने के कारण अस्पष्ट है। भाष अवधी से मिलती-जुलती है। ग्रंथ कई स्थानों पर बीच-बीच में फट गया है। लिपिकार का नाम, तिथि आदि नहीं है। लिपिकार ने अन्य ग्रंथों के समान ही 'ब' के लिए 'व' और 'व' के लिए 'व' के नीचे विन्दु का प्रयोग किया है। 'श' और 'स' में कोई अन्तर नहीं है। यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया, में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० का ६२ है।

७१. **सप्तसाहिनी छन्द रामायण**—ग्रंथकार—शिव प्रसाद। लिपिकार—शिव प्रसाद। अवस्था अच्छी है। पृष्ठ-२। प्र० पृ० पं० लगभग—१२। आकार—$४\frac{१}{२}'' \times ६\frac{१}{२}''$। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—अग्रहण, कृष्ण, एकादशी, सं० १६४६, (सन् १८८६) भौमवार। लिपिकाल—अग्रहण, कृष्ण, ११. एकादशी, सं० १६४६, (सन् १८८६) भौमवार।

प्रारंभ—"श्री गणेशायनमः श्रीरामचन्द्रायनमः ॥ साहिनी छन्द ॥

राम अवधनरेश दशरथ घरजनमि सवहिं निर्भर सुख दीन्ह ॥
मारि ताड़िका सुभुज सदल प्रभु कौशिक मुनिमख रक्षा कीन्ह ॥
तारि अहिल्या तोरिहर धनुष भृगुपति मदमथि सिया विवाहि ॥
व्याहि भाई सब दुलहिनि लै घर आये सो सुख कहिन सिराहि ॥२॥
तात वचन मुनिवेष सिया लषन सहित जाई वन राम सुजान ॥
देत मुनिन्ह सुख दंड जयंतहि वधेविराध असुर वलवान ॥३॥"

अन्त— "देव ऋषिहिं उपदेश वालि वधि कीन्ह सखासुकंठ कपिराइ ॥
फिरे पवन सुत पाई प्रिया सुधि चले भालु कपि कटक बनाइ ॥५॥
बाँधि समुद्र पार उतरे प्रभु सकुल घोर रण रावण मारि ॥
करि लंका पति जन विभीषणहिं चले पुष्प कारूढ खरारि ॥६॥

आइ भवन मिलि सकल शोकहरि गुरु आयसु बैठे पितुराज ॥
शिवप्रसाद तिहुंलोक मोदभर सत्र जपजयकर सहित समाज ॥७॥
इति श्री सप्तसाहिनी छंद रामायण शिव प्रसाद कृत सम्पूर्णम् ॥
शुभमस्तु सिद्धिरस्तु ॥"

विषय—राम-जीवनी संक्षेप में, सात पदों में ।

टिप्पणी-इस ग्रंथ की लिपि स्पष्ट तथा सुन्दर है। केवल सात पदों में संपूर्ण रामकथा को संक्षिप्त करके रख दिया है। यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय में संगृहीत है । पु० क्र० सं० क—६४ है ।

७२ संक्षिप्त दोहावली—ग्रंथकार—श्री शिव प्रसाद । लिपिकार—श्री शिव प्रसाद । अवस्था अच्छी। पृष्ठ-सं०२ । प्र०पृ०पं० लगभग–१२ । आकार–४½" × ८½" लिपि—नागरी । रचनाकाल—श्रावण, कृष्ण, २ द्वितीया सन् १६२८, वि० रविवार । लिपिकाल—कार्तिक शुक्ल एकादशी सन् १६४६, (सन् १८८६) रविवार ।

प्रारंभ— "अमित ऋच्छकपि कटकलौ पहुंचि नीर निधितीर ॥
सेतु बांधि अस्थापि र पार भये रघुवीर ॥१६॥
उतरे सदल सुवेल पर अंगद गये खारि ॥
फिरे हरषि प्रभुपद गहे रावण गर्व निवारि ॥१७॥
घेरे तब कपि भालुभट अरिपुर चारिहुंद्वार ॥
ऋपुदल आइ भिरे युगल कीन्ह भयंकरमार ॥१८॥
राम कृपाकपि ऋच्छदल जय जय जय उच्चार ॥
लरि सुखेन कीन्हे सकल रावण दल संहार ॥१६॥"

अन्त-- "राम चरित पयनिधि अगम लहेन कवि कोउ पार ॥
शिव प्रसाद किमि कहिसके मन्दमलीन गंवार ॥२४॥
रस गोयन ग्रह चन्द्रमा श्रावण मास पवित्र ॥
कृष्णा दूज रवि दिवस यह पूरयौ राम चरित्र ॥२५॥
इति श्री संक्षिप्त दोहावली रामायण शिवप्रसाद कृत संपूर्णम् ॥
शुभमस्तु सिद्धिरस्तु ॥"

विषय--रामकाव्य ।

टिप्पणी—इस ग्रंथ में संक्षेप में, रामचरित्र को, दोहों में कहा गया है। उपर्युक्त ग्रंथ के साथ ही यह भी एक ही जिल्द में है। दोनों ग्रंथों में लिपिकार ने लिखा है—"गंगा विष्णु कायस्थ श्रीवास्तव गयानिवासी हेतु लिखित्वा

शुभ सम्वत् १६४६ कार्तिक शुक्लैकादशी रविः।" ग्रंथ के प्रारंभ में १ पृष्ठ, १४ पद नहीं हैं।। लिपि स्पष्ट और सुन्दर है।

यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में, संगृहीत है। पु० क्र० सं० क—६४ है।

७३. सप्तहरि गीत छंद रामायण—ग्रंथकार—श्री शिव प्रसाद। लिपिकार—श्री शिव प्रसाद। अवस्था——अच्छी। पृष्ठ-सं०—३। प्र० पृ० पं० लगभग—१२। आकार—४½"×८½"। लिपि-नागरी। रचनाकाल—श्रावण, कृष्ण, द्वितीया, सं० १६२८ वि०, रविवार। लिपिकाल—कार्तिक, शुक्ल, एकादशी, सं० १६४६, (सन् १८८६) रविवार ।।

प्रारंभ—"श्री गणेशाय नमः ॥ श्री शिवाय नमः ॥
श्री रामचन्द्राय नमः ॥

॥ दोहा ॥

श्री गुरुपद शुभसद सुमिरि राम सुयश यश धाम ॥
बरणौं कछु कस प्रेम रटि राम राम जयराम ॥

॥ हरिगीत छंद ॥

जय राम ब्रह्म अनूप पूरण रूप प्रभु अग जग धनी ॥
बपु चार वर अवधेश घर लै जन्म इच्छा आपनी ॥
हति सेन सहताड़िका सुभुजहिं गाधि सुत भवराखेउ ॥
उरहरषि सुरमुनि सुमन पुनिपुनि वरषि जयजय भाषेउ॥१॥"

अन्त—"दै लंक बीभीषणहिं सहसिय लषन पृयगण वहुजने ॥
चढि चले राम सुजान पुष्पक यान सब जयजय भने ॥
घर आइ लीन्हे राजपुर नभ सुमन झरलायऊ ॥
भरभुवन शीवप्रसाद जय जय जयति कहि यशगायउ ॥७॥

॥ दोहा ॥

ऋतु ब्रह्मानन खन्डबिधु स्रावण शुक्ल पुनीत ॥
परिवा रवि वस रामयश सप्तछन्द हरिगीत ॥
इति श्री सप्त हरिगीत छन्द रामायण शिवप्रसाद
कृत संपूर्णम् ॥

विषय— राम-काव्य।

टिप्पणी—ग्रंथ की लिपि स्पष्ट, किन्तु शैली प्राचीन है। ग्रंथकार ही लिपिकार भी हैं। ग्रंथ के अन्त में—"श्री वावू गंगा विष्णु कायस्थ श्रीवास्तव गयावासी हेतु लिखिता ॥" लिखा है।

यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया, में संगृहीत है। पु०क्र०सं० ६४ है।

७४. सप्तसोरठा रामायण—ग्रन्थकार—श्री शिवप्रसाद। लिपिकार—श्री शिव प्रसाद। अवस्था-अच्छी, पृष्ठ-सं०—२। प्र० पृ० पं० लगभग—१२। आकार—४$\frac{1}{3}$"×८$\frac{1}{3}$"। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—अगहन, कृष्ण, एकादशी, सं०, १६४६, (सं० १८८६ ई०) भौमवार।

प्रारंभ-"श्री गणेशाय नमः ॥ श्रीमते रामानुजाय नमः ॥ सोरठा ॥
राखि सुमुनि भष रामतारि शिला शिवचाप दलि ॥
सिय विवाहि सुखधाम संगहिं व्याहे वंधु सब ॥ १ ॥
लै दुलहिन सब संग पंथ भार्गव मानं मथि ॥
घर आए श्रीरंग जय-जय धुनि त्रिभुवन भरयौ ॥ २ ॥"

अन्त— "सिंधु बाँधि गै पार मारे रण रावण सकुल ॥
सुर मुनि सुखदातार करि लंकेश विभीषणहिं ॥ ६ ॥
आइऊवध लै राजलोक सकल हर्षित किये ॥
सुरनर सन्त समाज शिव प्रसाद जय यश भजे ॥ ७ ॥
इति श्री सप्त सोरठा रामायण शिव प्रसाद कृत संपूर्णम् ॥"

विषय— रामविषयक रचना।

टिप्पणी—सोरठा के ७ पदों में संपूर्ण रामायण-कथा को बड़े ही रोचक और सुन्दर ढंग से व्यक्त किया है। ग्रंथ के अन्त में—"श्री वावू गंगाविस्नु हेतुः गयाक्षेत्र मध्य लिखित्वा" लिखा है। ग्रंथ-लिपि स्पष्ट है। यह ग्रन्थ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क—६५ है।

७५. सवैया—ग्रंथकार—श्री सुन्दरदास। लिपिकार—तिलकदास। अवस्था—अच्छी, प्राचीन, हाथ का बना मोटा देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१०८। प्र० पृ० पं० लगभग—२२। आकार—६"×६$\frac{1}{2}$"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचना काल—×। लिपिकाल—श्रावण, शुक्ल प्रतिपदा, सं० १६०६। (सन् १८४६, शाकाब्द—१७७०) मृगुवार। संपूर्ण।

प्रारंभ—"ॐ श्री गणेशाय नमः ॥ अथ गुरुदेव को अंग लिख्यते। सुन्दरदास कृता।

॥ सवैया ॥

मौजकरी गुरुदेव दयाकरि शब्द सुनाई कहे हरिनेरो ॥
ज्यौं रवि के प्रगटे नीसिजात सो दूरि कियो मर्ममानी अंधेरो ॥
कायकबाच कमान सहूं करिहैं गुरुदेवहिं बंदन मेरो ॥
सुन्दरदास कहे करजोरि जु दादु दयालके हौं नितचेरो ॥ १ ॥
पूरण ब्रह्म विचार निरंतर काम न क्रोध न लोभ न मोहैं ॥
श्रोतु तुचा रसना अरु घ्रान सुदेषि कछु नैनन सन मोहैं ॥
ज्ञान सरूप अनूप निरूपन जासु गिरा सुन मोहन मोहैं ॥
सुन्दरदास कहैं कर जोरि जो दादु दयालहिं मो मन मोहैं ॥ २ ॥"

मध्य की पंक्तियाँ—पृष्ठ ४५

"कामहीन क्रोध जाकै लोभहीन मोह ताकै
मदहीन मतसर कोऊ न विकारो है ॥
दुष ही न सुष मानै पापी ही न पुन्य जानै
हरष न सोक आनै देह हिते न्यारो है ॥
निंदा न प्रसंसा करै राग ही न दोष धरै
लेन नहीं देन जाकै कछु न पसारो है ॥
सुंदर कहत ताके अगम अगाध गति
ऐसो कोऊ साधु सो तो रामजी को प्यारो है ॥ १६ ॥"

अन्त— "येकहि ब्रह्म रह्यो भरपुर तो दूसर कौन बतावनिहारौ ॥
जो कोई जीव करै परवा न तो जीव कहांकछु ब्रह्म से न्यारौ ॥
जो कोइ जीव भये जगदीशते तौ रविमांह कहा को अंधारौ ॥
सुन्दर मौन गही यह जानि कै कौनहूं भांति न व्हौ निउआरौ ॥ ११ ॥
जो हम षोज करै अभि अंतर तौ वह षोज उरै हिवो लावै ॥
जो हम बाहर को उठि दौरत तौ कछु बाहर हाथ न आवै ॥
जौ हम काहु को पूंछत हौ पुनि सोउ अगाध अगाधवतावै ॥
ताहि ते कोउ न जानि सकै तेहि सुन्दर कौनसि ठौरवतावै ॥ १२ ॥
नैनन बैनन सैनन आसन वासन स्वासन खासन पातै ॥
सीत न घाम न ठौन उठा मन पुर्स न वास न बाप न मातै ॥
रूप न रेष न शेष अशेष न सेत न पीत न स्याम न रातै ॥
सुन्दर मौन गहि सिद्ध साधक कौन कहै उसकी सुष बातै ॥ १३ ॥
वेद थके कहि तंत्र थके पुनि ग्रंथ थके निसुवासर गातै ॥
शेश थके शिव इन्द्र थके पुनि पोज कियो बहुभांति विधातै ॥

पीर थके अरु मीर थके पुनि धीर थके वहुबोलि गिराते ॥
सुन्दर मौन गही सिद्ध साधक कौन कहे उसकी मुष बातें ॥ १४ ॥
जोगि थके कहे जैनि थके कहि तापस थाकि रहे फल पाते ॥
सन्यासी थके वनवासी थके जो उदासी थके बहुफेरि फिराते ॥
शेषस सायेक औरउ लायेक थाकि रहे मनमे मुसकाते ॥
सुंदर मौन गही सिद्ध साधक कौन कही उसकी मुख बाते ॥ १५ ॥
इति श्री सुंदरदासेन विरचितेयां ग्रन्थ सवैया सम्पूर्णम् ॥
सिद्धिरस्तु शुभमस्तु ॥ समाप्तः ॥ शुभं भूयान् ॥"

विषय—दर्शन और साहित्य। श्री गुरुदेवजी को अंग, उपदेश चेतावन अंग, काल चेतावन अंग; आत्म विछोह अंग, तृष्णा को अंग अधीर को उपदेश अंग, विश्वास अंग; देहमलिनता गर्भ प्रकार अंग; नारी निन्दा अंग; दुष्ट को अंग; मन को अंग; चानक को अंग; ज्ञान को अंग; वचन विवेक को अंग; निरगुन उपासना को अंग; पतिव्रता को अंग; विरहिणी को अंग; सार शब्द को अंग; सूरतन को अंग; साधु को अंग; भक्तज्ञानी को अंग; विपर्यय शब्द को अंग; अपने भाव को अंग; सरूप विस्मरण को अंग; सांख्य ज्ञान को अंग; विचार को अंग; ब्रह्म निष्कलंक अंग; आत्म अनुभव को अंग; विज्ञान को अंग; प्रेमज्ञानी को अंग, अद्वैत ज्ञान को अंग; जगत मिथ्या को अंग और आचार्य्य को अंग। इन अंगों के वर्णन में १०८ पृष्ठों में ५४४ पद हैं।

टिप्पणी–इस ग्रंथ में, संत सुन्दर दासजी ने ईश्वर, आत्मा, प्रकृति आदि के अतिरिक्त मोक्ष आदि जीवन के अनेक उपयोगी समस्यायों पर दार्शनिक दृष्टिकोण से विचार किया है। इस ग्रंथ में अध्याय को अंग कहा गया है। पूरे ग्रंथ को ३३ अंगों अर्थात् अध्यायों में बाँटा है। कुल ५४४ पद हैं। इसमें प्रथम अध्याय (अंग) में अपने गुरु के विषय में लिखा गया है। ये श्री गुरु दादूदयाल जी के शिष्य थे। स्थान-स्थान पर, पूरे ग्रंथ में तो उनकी महिमा गायी गयी ही है, किन्तु एक अंग ही पूरा, उनके लिए लिखा गया है, और सभी गुरुओं से उन्हें महान् बताया गया है, जो निम्नलिखित पदों से व्यक्त होता है:—

"चिंतामनि पारस कल्पतरु कामधेनु औरउ अनेक निधि वारि-वारि नाषिये ॥
जोई कछु देषिये सो सकल विनासवंत बुध में विचार करिवहु अभिलाषिये ॥
ताते ऊब मनवच क्रम करिकर जोरी सुंदर कहत सीस पग मेलिभाषिये ॥
बहुत प्रकार तीनो लोक सब सोधे हम ऐसी कौन भेंट गुरुदेव आगे राषिये ॥२३॥

महादेव बामदेव ऋषभ कपिलदेव ब्यासदेब शुकहु जै देव न'म देवजु ।।
रामानंद सुषानंद कहिअ अनंतानंद सुर सुरानंदहु के आनंद अछेवजु ।।
रैदास कबिरदास सोहादास पीपादास घनादासहु के दास भांवहिंके टेकजु ।।
सुंदर सकल संत प्रगट जगतमांही तैसे गुरु दादुदास लागे हरिसेवजू ।।२४।।
गुरुदेव सबौ पर अधिक विराजमान गुरुदेव सबहीं ते अधिक गरीष्ट हैं ।।
गुरुदेव दत्तात्रय नारद शुकादि मुनि गुरुदेव ज्ञान धन प्रगट वशीष्ट हैं ।।
गुरुदेव परम आनंदमय देषिअत गुरुदेव वर वरे आनहु वरीष्ट हैं ।।
सुन्दर कहत कछु महिमा न कही जाई ऐसे गुरुदेव दादु मेरे शिर इष्ट हैं ।।२५।।

इसी प्रकार पूरे २७ पद गुरुदेव 'दादूदयाल' के लिए इन्होंने रचे हैं। इन्होंने निराकार निर्गुण ब्रह्म की उपासना का समर्थन किया है। ग्रंथ बड़ा ही उपदेय और अनुसंधेय है। ग्रंथ की लिपि की शैली प्राचीन होते हुए भी स्पष्ट है। रचनाकाल के संबंध में, प्रारंभ या अंत में निर्देश नहीं किया है। लिपिकार ने ग्रंथ के अन्त में--"शुभ संवत् १६०६ ।। शाकाब्दे १७७० श्रावणे मासे सीत पक्ष परिवायां भृगुवासरे ।। यालेखि दास तिलकेन सवैयायां शुभ ग्रंथकम् ।।१।।

यस्या द्रिस्यं तस्य पुस्तकं ता दृष्ट्वा लिखिते मया ।।
यदि शुद्धं वामशुद्धं वा मम दोषो न दियते ।।
मात्रा विंदु विसर्गश्च पदवाक्षर मेव च ।।
यतीतं यदि लेखेन क्षमावंतो पण्डितातभिः ।।
भग्नं ष्टष्टे कटीगृवं तत्वदृष्टोऽधोमुखम् ।।
एतत्कष्टे लेखिते पुस्तकं पुत्रवत्परिपालनम् ।।

।। दोहा ।।

रस शून्यं नव इंदुमिलिवामे अंक दहाय ।।
संवत कर यह नाम है बुद्धिजन लेव मिलाय ।।"

लिखा है, जिससे लिपिकार का नाम, काल आदि स्पष्ट होता है। अन्य ग्रंथों के साथ लिपि में 'व' और 'व' के लिए क्रमशः 'व' और 'व़' का प्रयोग नहीं करके दोनों के लिए केवल 'व' का ही प्रयोग किया गया है। साथ ही 'य' और 'ज' के लिए क्रमशः 'य' और 'य़' का प्रयोग नहीं है, अपितु केगल 'य' का प्रयोग है। सुविधानुसार इसे ठीक कर लिया जाना चाहिए। इस ग्रंथ की रचना में साहित्य के अंगों की उपेक्षा नहीं की गई है। नागरी-प्रचारिणी की खोज-विवरणिका में भी इनका उल्लेख हुआ है। देखिए--खो० वि० (सन् १६२६-२८ ई०) पृ० ६८०, सं० ४७० बी० और ४७० सी०। नागरी-प्रचारिणी सभा की खोज

में जो प्रति उपलब्ध हुई है उसमें लिपिकाल क्रमशः–सं० १८८५ और सं० १६२३ हैं। इस पुस्तकालय की प्रति का लिपिकाल है सं० १६०६। अन्य खोज-विवरणों में भी यह ग्रंथ मिला है। जिसमें लिपिकाल सं० १७७३ है। देखिए—खो० वि० १६०२ सं० २५, २६)

दूसरा है—सं० १८७०, (खो० वि० १६०६-८ सं० २४२ ए०)
तीसरा है—सं० १८३४, (खो० वि० १६१२-१६ सं० १८४ बी०)
(खो० वि० १६२३-२५ सं० ४१५)

इन खोज-विवरणों के लिपिकाल पर ध्यान देने से इस पुस्तकालय में संगृहीत ग्रंथ भी प्राचीन प्रतीत होता है। साथ ही यह भी स्पष्ट होता है कि ये कवि १६वीं शताब्दी के पूर्वार्ध के थे। इसके अतिरिक्त श्री सुन्दरदास जी के और भी अनेक ग्रंथ का नागरी-प्रचारिणी की खोज-रिपोर्ट में उल्लेख हुआ है। अवश्य इस ग्रंथकार की मौलिक रचना ध्येय है। इनके निम्नलिखित अन्य ग्रंथ उपलब्ध हुए हैं।

१. ज्ञान समुद्र लिपिकाल—१७७३ वि० (खो० वि० १६०२ सं० १६५)
,, १८०० वि० (खो० वि० १६०३ सं० ३४)
,, १८६३ (खो० वि० १६०६-८ सं० २४२बी०)
,, १८७८ (खो० वि० १६०६-११सं० ३११ ए०)
(खो० वि० १६२३-२५सं० ४१५)
२. पंचेन्द्रिय निर्णय, लिपिकाल–१८४३ (खो० वि० १६१२-१६ सं० १८४ए०)
३. विचारमाला ,, १८७८ (खो० वि० १६०६-११ सं० ३११सी०)
४. विनयसार ,, १८७० (खो० वि० १६०२ सं० ८८)
५. विवेक चिन्तामणि (खो० वि० १६०६-११ सं० ३११)
६. सुन्दरदास की वानी ,, १७३५ (खो० वि० १६०६-११ सं० ३११बी०)
७. सुन्दर विलास ,, १८७० (खो० वि० १६०६-८ सं० २४२सी०)
(खो० वि० १६२३-२५ सं० ४१५)

इनकी इन सभी रचनाओं के अध्ययन की आवश्यकता है, साथ ही प्रकाशन की भी। यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क—६७ है।

सवैया—ग्रंथकार—सुन्दर दास। लिपिकार—जुगल किशोर लाल। अवस्था—अच्छी है। पृष्ठ-सं०—७५। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार—"६ × १३½" लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—पौष शुक्ल १४ चतुर्दशी, सं० १६२०, (सन् १३६३)।

प्रारंभ—"ॐ श्री गणेशायनमः ।। अथगुरुदेव को अंगलिख्यते ।। सुरदास कृत ।

सवैया

मौजकरी गुरुदेव दयाकरि सब्द सुनाइ कहे हरिनेरो ।।
ज्यौं रवि के प्रगटे नीसिजात सो दूरिकियो मर्ममानिअंधेरो ।।
कायक वांचक मानस हूं करि है गुरुदेव हिवंदन मेरो ।।
सुंदर दास कहे करजोरिजु दादुदयाल के हौं नितचेरो ।।१।।
पूरणब्रह्म विचार निरंतर काम न क्रोध न लोभ न मोहो ।।
श्रोततुचा रसनाअरुघ्रान सुदेषिकछुनैनन मन मोहे ।।
ज्ञानसरूप अनूपनिरूपन जासुगिरासुनि मोहन न मोहे ।
सुरदास कहे करजोरिजु दादुदयाल हि मो मन मोहे ।।२।।"

मध्य की पंक्तियाँ पृष्ठ ३६—

"महामंद हांथी मन राख्यौ हेय करि जिन
अतिही प्रपंचजामैं वहुत गुनमान है ।।
काम क्रोध लोभ मोहवांध्यौ चारो पांव जिनि
छूटने न पावैं नेक प्रान पीलवान है ।।
कवहूं न करै जोर सांवाधान सांझ भोर
महां एक हांथ में अंकुस गुरज्ञान है ।।
सुंदर कहत और काहू के न वस होय
ऐसो कौन सूरवीर साधु के समान है ।। १२ ।।"

अन्त— "इंद्रवज्राछंद ।। कै यहदेहधरो बन पर्वत कै यहदेह नदी में वहौजु ।।
कै यह देह धरो धरती मंह कै यह देह कृशानु दहोजु ।।
कै यह देह निरादर निंदहु कै यह देह सराहि कहौजु ।।
सुंदर संसय दूरिभयो सब कै यह देह चलो किर हौजु ।। ३ ।।
कै यह देह सदासुषसंपति कै यह देह विपति परोजु ।।
कै यह देह निरोग रहो नित कै यह देहहि रोग वरोजु ।।
कै यह देह हुतासन पैठहु कै यह देह हिंवारे गरौजु ।।
सुंदर संसय दूरिभयो सवकै यह देह जिवो की मरोजु ।। ४ ।।
इति निरसंसै अंग सम्पूर्णम् ।। इति श्री सुंदरदास वीरचितेयां ग्रंथ सवैया सम्पूर्णम् ।। सिद्धिरस्तु ।। सुभ मस्तु ।।

विषय— दर्शन, साहित्य और अध्यात्म । अन्य प्रायः पूर्ववत् । पृष्ठ १ से ४ तक गुरुदेव को अंग, पृ० ४ से ८ तक—उपदेश चेतावन को अंग; पृष्ठ ८ से १२

तक—देह आत्मा को अंग; पृष्ठ १२ से १४ तक—देहात्मा विरह को अंग; पृष्ठ १४ से १५ तक—तृष्णा को अंग; पृष्ठ १५ से १७ तक—विश्वास को अंग; पृष्ठ १७ से १८ तक, देह मलिन को अंग; पृष्ठ १६ से २० तक, रानी निंदक; पृष्ठ २० से २१ तक, दुष्ट को अंग; पृष्ठ २१ से २४ तक, मन को अंग; पृष्ठ २४ से २७ तक, चानक को अंग; पृष्ठ २७ से २८ तक, विपरीतज्ञान को अंग; पृष्ठ २८ से ३० तक, वचन-विवेको अंग; पृष्ठ ३० से ३१ तक, निर्गुण को उपासना अंग; पृष्ठ ३१ से ३२ तक पातिव्रत को अंग; पृष्ठ ३२ से ३३ तक विरह ओराहनो अंग; पृष्ठ ३३ में निरसंसै अंग; पृष्ठ ३३ से ३४ तक सारशब्द को अंग; पृष्ठ ३४ से ३६ तक सुरातान अंग; पृष्ठ ३६ ४० तक साधुको अंग; पृष्ठ ४० से ४१ तक भक्तिज्ञानमिश्रित अंग; पृष्ठ ४१ से ४४ तक विपर्य्यय अंग; पृष्ठ ४५ से ४६ तक आत्मभाव अंग; पृष्ठ ४६ से ५० तक स्वरूप विस्मरन को अंग; पृष्ठ ५० से ५५ तक सांख्यज्ञान अंग; पृष्ठ ५५ से ५८ तक आत्मानुभव अंग; पृष्ठ ५८ से ५६ तक निष्कलंक अंग; पृष्ठ ५६ से ६३ तक अनुभव आत्मा अंग; पृष्ठ ६३ से ६७ तक ज्ञानी को अंग; पृष्ठ ६७ से ६८ तक प्रेमज्ञानी को अंग; पृष्ठ ६८ से ७१ तक अद्वैतज्ञान को अंग; पृष्ठ ७१ से ७२ तक जगत मिथ्या को अंग और पृष्ठ ७२ से ७४ तक आचार्य्य को अंग, एवं पृष्ठ ७४ से ७५ तक निरसंसै को अंग लिखकर ग्रंथ सम्पूर्ण किया गया है।

टिप्पणी—यह ग्रंथ भी पूर्व के ही ग्रंथकार का है। ग्रंथ ध्येय और अनुसंधेय है। ग्रंथ में अध्याय को 'अंग' कहा गया है। निराकार ब्रह्म का प्रतिपादन और निर्गुण की उपासना का उपदेश है। सांख्य ज्ञान-सम्बन्धी अध्याय में बड़ा ही भावपूर्ण प्रश्नोत्तर है—

"घनाक्षरी ॥ प्रस्न ॥

कैसे के जगत यह रचो है जगत गुर मो सो कहों प्रथम हि कौन तत्व कीन्हो है ॥
प्रकृति पुरुष कींधो महांतत्व अहंकार कींधों उपजाय सत रजतम तीनो है ॥
किंधोव्योम वायतेज आपकी अवनि कीन्हों किंधों पंच विषय पसारिकरि लीन्हो है ॥
किंधो दस इंद्रिकीधों अतह करण कीन्हें सुंदर कहत कियो सकल विहीनो है ॥६॥

॥ प्रति उत्तर ॥

ब्रह्म तें पुरुष अरुप्रकृति प्रगट भइ प्रकृति तें महातत्व पुनि अहंकार है ॥
अहंकार हूं ते तीनि गुण सत रजतम तमहूं ते महांभूत विषय पसार है ॥

रजहूं ते इंद्रिय दस पृथक-पृथक भइ सतहूं ते मन आदि देवता विचार है ।।
ऐसे अनुक्रमकरि सिष्य सो कहत गुर सुंदर सकल यह मिथ्या भ्रमजार है ।।२७।।"

इस प्रकार और भी कई प्रश्नोत्तर हैं। आत्मासंवन्धी रहस्यवादी विचार"

॥ सवैया ॥

"है दिल मे दिलदार सही अंषिया उलटी करिता हिचितैऐ ।।
आवमे षाकमे बादमे आत सजानमे सुंदर जान जनैऐ ।।
नूरमे नूर है तेजमे तेज है जोतिमे जोति है एके मिलि जैऐ ।।
क्या कहिये कहते न वनै कछु जो कहिये कहते हि लजैऐ ।।१।।"

इस सवैया में स्पष्ट है।

इस ग्रंथ की लिपि स्पष्ट एवं सुन्दर है। कहीं-कहीं सामान्य पाठ-भेद भी है। इसमें प्रायः मूर्धन्य 'ण' के स्थान पर दन्त्य 'न' का ही प्रयोग किया है। कई स्थानों पर छन्द आदि के सम्बन्ध में भी उस ग्रंथसे इसमें पाठ-भेद है। इस ग्रंथ में अन्त का 'निरसंसै अंग' बीच में छूट गया था, जिसे अन्त में लिखा गया है। ग्रंथ विवेच्य है। नागरी-प्रचारिणी की खोज-रिपोर्टों में इस ग्रंथ के सम्बन्ध में भी उल्लेख है। उसकी चर्चा ग्रं० सं० ७५ में देखिये। यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है। पु० क्र० क—६८ है।

७७. **साहिनी छंद रामायण**—ग्रंथकार—श्री शिव प्रसाद। लिपिकार—श्री शिव प्रसाद। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ-सं०—१३। प्र०पृ० पं० लगभग २१। आकार—४½" × ६½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—पौष, कृष्ण, १० दशमी, सं० १९४५, (सन् १८८८) शुक्रवार। लिपिकाल—कार्तिक, शुक्ल, ५ पंचमी, सं० १९४६, (सन् १८८९) भौमवार।

प्रारंभ—"श्री गणेशायनमः ॥ श्री शिवायनमः ॥ श्री रामायनमः
साहिनी छन्द ॥
श्री गुरुवरगणेश गिरिजाहर गिराविशदपदसद शिरनाई ॥
रामकथा कछु कहौं यथामति मन्दसाहिनी छंद बनाइ ॥१॥
पूरण ब्रह्म अखिलजगकारण युगती जे टारण भूंभार ।।
अवधनगर दशरथ नरेशघर धरिवपुचार लीन्ह अवतार ।।२।।
हर्षवन्त सुरनरमुनि तिहुंपुर पुनि पुनि जय जय धुनि अभिराम।।
राम लक्ष्मण भरत शत्रुहन मुनिवशिष्ठगुणि राखे नाम ।।३।।"

मध्य की पंक्तियाँ—पृष्ठ ७

"देखत सरिसर गिरिकाननघन पञ्चवटी दण्डक वन जाइ ॥
गोदावरी समीप कृपाला रहे पर्णशाला बनवाइ ॥ ४६ ॥

सोवन पावन भयउ सुहावन फुलाफला हरा सब काल ॥
मुनिगण सुजन सकल सुख पाये जबतें आये राम कृपाल ॥ ४७ ॥

सुर्पनषा रावण की भगिनी आई ठगिनी रूप बनाई ॥
लछमन नाक कान तेहि काटे डांटे रोवति भागि भयाइ ॥ ४८ ॥"

अन्त—"संकुल सुरमुनि अस्तुति पुनि पुनि जय जय धुनि मंगल गान ॥
भुवन हर्ष भर गगन कुसुमभर मगन देवगण हने निसान ॥ ६१ ॥
रामचरित्र विशद पवित्र तरवर विचित्र पय निधि अवगाह ॥
महामन्द गति शिवप्रसाद मतिलघु पिपील अति वूंद अथाह ॥ ६२ ॥
शिवप्रसाद कायस्थ जाति कुल श्रीवास्तव संकुल अज्ञान ॥
गया निवासी अवगुणराशी दोष न गुण वछवम सवज्ञान ॥ ६३ ॥
बाणवेद ग्रह सोम साल तिथि व्योम मयंक काल हिम जान ॥
पूश मास पष कृष्ण तासुलष शुक्र दिवस हरियश परिमान ॥ ६४ ॥
बाइश बीश बहुरि बारह औ पांच पुनः नौ सत्रह सात
क्रमस कान्ड प्रति जोरि बानवे तीन सु पञ्चानवे सुहात ॥ ६५ ॥
इतिश्री रामचरित्रे संक्षित साहिनी छन्द प्रबन्धे शिवप्रसाद कृत सम्पूर्णम् ॥"

विषय— राम-जीवन से संबंधित कविताएँ। संक्षेप में राम-कथा।

टिप्पणी–यह ग्रन्थ 'साहिनी' छन्द में लिखा गया है। भाषा सरल और शैली भी प्रसादगुणविशिष्ट है। लिपिकार और ग्रन्थकार दोनों एक ही व्यक्ति हैं। ग्रंथ की समाप्ति के वाद लिखा है—"वावू गंगाविस्नु कायस्थ श्रीवास्तव गया क्षेत्र निवासी हेतुः लिखित्वा शुभ सम्वत् १६४६ का त्तिक शुक्ल पञ्चम्यां भौमवारः शुभमस्तुः सिद्धिरस्तुः"। ग्रंथ की लिपि स्पष्ट है। शैली पुरानी, पर ग्रन्थ नवीन है। यह पोथी मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं० क—६६ है।

७८. सीताराम रसतरंगिणी—ग्रंथकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी, पुराना, हाथ का बना, मोटा देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१७। प्र०पृ०पं० लगभग—२४। आकार—५½" × १२"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारंभ—"श्री सीतारामाभ्यां नमः ॥ नत्वा गुरुं गुणनिधिं गुणतः परंच श्री जानकी रघुवरंहि युतः कृपालुं श्री वायुनन्दन मनंतवलप्रतापं सर्वाननन्यरसिकानति-रामभाजः ॥ १ ॥

अथ प्रातः समयमारम्य सार्द्धैकयाम निसापर्य्यंतं श्री रसिकमौलि जानकी रघुनंदनयोर्नानाविलास शृंगाररसानुभावितं कृत्यं वार्तिकेन कथयामि ॥ प्रथमहि पिछिलीरात्रि घड़िका चार रहत तब श्री महाराज कोशलेशजू के द्वार नौवत वजनलगत तिनकों सुनिकै श्रीकनक भवनके मध्य श्री महाराज किशोरीजू की संपूर्ण दासी अरु सषी जगत हैं फिरि अपनी कुंजन मैं कोई सो समय की रंग सहित रागरागिनी मधुरस्वर सो गावत भई सारंगी मृदंग तमूरा यंत्र इत्यादि बाजे बजाइकै फिरि अपर अपने दंतधावन अंग उबटन फुलेलमर्दन करि फिरि स्नानकरि अंगराग सुगंध अंगअंग लगाइ सोरहो शृंगार अभूषन तिनकों सजिकै अपने-अपने महलनसों अपने परिकर सहित श्री चारु-शीलाजू के महल आवत भई श्री चारुशीलाजूकों प्रणामकरिकै दिव्यमणिमय बिशालसभा मंडपमध्य अति नर्म अतिविशाल रेशमी गलीचा बिछे तहाँ बैठाभई मध्यमे श्रीसर्वेस्वरीजू सोभितहैं अरु दिव्यवसनभूषन अति प्रकासवत तिनकों सजिकै नृत्यकारीनृत्य करि रही है"

मध्य की पंक्तियाँ (*पृ० सं० ८*)

"यह प्रकार एक दिन प्रहर दिन आउतभयो फिरि श्री लड़ैतो लालजू श्री सृंगारकुंज को पधारे तहां प्रथम चौक मे अवाईके नगारे वजतभए तिनकों सुनिकों भीतर सो जुगलजुथ्थेश्वरी करवंज पर मंगला दरसथारवरि के सन्मुख आवतभई अर्धया बडे देत भीतर कों लिवाई जात भई......"

अन्त—"श्री महाराज किशोरी जू सब समाज कों बिदा करि भीतर पधारे तहाँ सषी श्री प्यारी लालजूं को...............मधुर बाजे बजाइके करत भई फिरि सब सषिन कों बिदा दे के श्री बड़ेतीलालजू सवन भवन द्वारे प्रति सकरतभए जहाँ चौसठचौसठि सषिन करिकै जुथ्थए सो लेबतिस जुथ्थ सो प्रतिघटिका एक-एक जुथ्थ चौसठ सो सवो सो सोषशतरसंग लिए तत्पर हैं। अरुभीतर प्रतीक जाएजाष्ट प्रसिद्धसेवा तत्पर हैं बाहेरकच्छ प्रतिसद्दुर्ग आवरन आवरन प्रतिमहल महलप्रति अपने-अपने समय सेवा तत्पर हैं ॥ इतिश्री सीता रसतरंगिन्यां प्रातःकालारभ्य सार्द्धैकयानिसापर्य्यंतं श्री सीतारामरहस्यवर्णनो नाम द्वादशस्तरंगः १२ समाप्तः ०० श्री सीताराम ००"

विषय--सीताराम की गद्य में दिनचर्या।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ गद्य में लिखा गया है। इसकी गद्यशैली खड़ी बोली के पूर्व की कथावाचकों जैसी है। इसमें प्रातःकाल से रात्रि सोने समय तक की सारी दिनचर्य्या बड़े ही रोचक ढंग से १२ तरंगों में लिखी गयी है। इसमें पूर्ण-विराम या अर्धविराम कहीं भी नहीं है। ग्रंथकार या लिपिकार का नाम,प्रारंभ या अन्त में नहीं है। किन्तु,'श्री बड़ेतीलाल' का नाम कई बार आया है। इससे प्रतीत होता है, इस नाम का ग्रंथ के साथ अधिक सम्बन्ध है। यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० १०० है।

७६. सुधारसतरंगिणी--ग्रंथकार—श्री कान्हूलाल गुरदा। लिपिकार—श्री कान्हूलाल गुरदा। अवस्था— अच्छी। पृष्ठ-सं०—१०६। प्र० पृ० पं० लगभग ४०। आकार-६"×८"। भाषा—हिन्दी। लिपि–नागरी। रचनाकाल—माघ, शुक्ल, ३ तृतीया, सं० १६५४ वि०, (१८६७ सन्)। लिपिकाल--माघ, कृष्ण २ द्वितीया, सं० १६७६।

प्रारंभ—"॥ दोहा ॥ दरनिदुरित दूषणदलनि, दायिनिबुद्धिवरवाणि ॥
वनजवदनि वनजासता बन्दौ बीणा पाणि ॥१॥
॥ छप्पै ॥
कल्प स्वेतवाराहमाँहि युगप्रथम भयोजब
त्रिपुरतनय गय नाम असुर महिमाहि भयोतव
तिन्ह कीन्ही तप प्रबल तप्योतेहितेज अमरगण
त्राहित्राहि कहि गयो शरणहरिदुःखित मन
विविधिभांति अस्तव किये भक्ति हिये सम्पुट
करन कान्ह जानिजन रक्षिये दीनवन्धु अशरन शरन ॥२॥
॥ दोहा ॥
तप्यो गयासुर प्रखरतप तेज तासु सुरधाम
तपत देव गण राखिये कृपावारिधर श्याम ॥३॥
॥ शोरठा ॥
सुनिसुर आरत वैन असुरनिकट प्रभुजात मे
बोले करुणऐन मांगुभाव जो तेहि मन ॥४॥
तीर्थन्हि सों सुपवित्र दैत्य कह्यो मैं होंउ प्रभु
सुरगण सुख सुविचित्र दै वर असुरहि देत मे ॥५॥

ह्वै पवित्रजनजूह दर्श करत छन दैत्य तन
चर अरुअचर समूह लहत भए सब परंपद ॥६॥"

अन्त--"रसिकपान्थ रस पान गुण होहिं हिये आनन्द
प्लव सिंवार हिंसक जलज द्वेष अन्वेष हि मन्द ॥६०२॥

कवि कोविदगण सो विनय प्रणय सहित यह मोर
जो कछु चूक सुधारिहैं करिकै कृपा अथोर ॥६०३॥

जो अनादरैं मूरखन्हि तौनाही कछुहान
कृत किरात अवमानते घटै न मणि सन्मान ॥६०४॥

वेद वान ग्रह कलानिधि सम्वत माघसुमास
प्रगटी सुधातरङ्गिणी शिवमुख तिथिसुखरास ॥६०५॥

ग्रंथसम्बत १६५४ विक्रमीय। श्रीमत्परमपूजनीय ब्रह्म प्रकल्पितद्विज गयापालकुलावतन्सगुरुदोपनामक श्री युक्त कान्हूलाल विरचित सुधातरङ्गिण्यां नवमस्तरङ्गः समाप्तः शुभम्।"

विषय— रस, नायक, नायिका, रीति, संचारी भाव, प्रहेलिका और मुरज-बन्ध आदि।

टिप्पणी—इस ग्रंथ के प्रारंभ के दो तरंगों (अध्यायों) में क्रमशः गया-माहात्म्य और कविवंशवर्णन हैं। अन्य १० तरंगों में रस, नायक, नायिका, रीति आदि का बड़ा ही भावपूर्ण और कवित्वपूर्ण वर्णन है। इसकी रचना पाण्डित्यपूर्ण, मनोहर शैली में है। ग्रंथ के अन्त में दिये गये आकारचित्रों में १ कामधेनुचित्र, २ अश्वचित्र, ३ गजचित्र, ४ खड्ग, ५ सबाणधनुषबंध, ६ छत्रबंध, ७ सूर्यचक्रबन्ध, ८ अष्टकोण सर्वतोभद्र, ६ अग्निकुंड बन्ध, १० चौपड़बन्ध आदि बड़े ही महत्व के हैं। ग्रंथ के अन्त में इन बन्धों में श्लोकों का पुनः परिशिष्ट दे दिया गया है। परिशिष्ट और मूल ग्रंथ में ६५३ पद हैं। अन्त में लिखा है—"दोहा छौ सततिर्पन सरसवर छन्दग्रन्थ यह माहि
है विरचितकविकान्हकोउ करव न घटवढ़ माहि ॥"

इस ग्रंथ में अग्निपुराण के अधार पर गया-माहात्म्य बड़े ही चमत्कृत रूप में लिखा गया है। शब्द-योजना अच्छी है। ३६ वें पृष्ठ पर लिखा है—

"॥ वासक सज्जा ॥
मंजुल महल मणिमंडित बिछाई सेज
मणिन प्रकाश की उजास जहाँ छाई है ॥
चंचल चलांक चारु पुरइन पुष्पनैनी
करन करेजे रेजे कज्जल बसाइ है ॥
उरज उचो ही आछी अँगिया अनोखी कसी
गजरे गुलाब गुल गूथि गर नाई है ॥
कान्ह साजि सुन्दरी शिंगार आज सामहींते
शामहींते मिलिबे को आनन्द समाई है ॥२५०
गेहते निकरिचली नीर के बहाने जहाँ
बकुल रसालन की शौरभित शाखी है ॥
धीरे-धीरे बहत समीर शुभ शीरे-शीरे
कूजत कपोत केकी कलरव पाखी है ॥
फूले-फूले फिरत फबीले भौर फूलन पै
धूसरे परागन मरन्द अभिलाखी है ॥
मालती के मंजुल निकुंज मै सरोजमुखी
पांखुरी सरोजन की सेजरचि राखी है ॥२५१॥"

कवि ने रचना में, अनुप्रास, उपमा, अर्थान्तरन्यास, आदि सभी अलंकारों का समुचित उपयोग किया है। यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं० १०१ है।

८०. सूर-सागर—ग्रन्थकार—श्री सूरदासजी। लिपिकार—श्यामलाल। अवस्था—अच्छी। मोटा, हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं०–८१। प्र०पृ०पं० लगभग–२६। आकार–७"×१२"। भाषा-प्राचीन हिन्दी (ब्रज)। लिपि––नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—आषाढ़, शुक्ल १० दशमी, सं० १६२४ बृहस्पतिवार।

प्रारंभ—"श्री गणेशाय नमः ॥ श्री भागवत प्रथमस्कंधः सूरकृत हरिपदावली सूरसागरवर्णनं ॥ ॥ रागवेलावल ॥
चरण कमल बन्दो हरि हरिराय ॥
जाकी कृपा पंगुगिरिलंघै अंधे को सबकुछ दरशाय ॥
बहिरा सुनै गूंगा पुनि बोलै रंक चलै शिर छत्र धराय ॥
सूरदास स्वामी करुनामय बार बार वंदो तेहि पाय ॥ १ ॥

॥ केदारो ॥

बंदो चरन शरोज तुम्हारे ॥
स्याम सरूप कमल दल लोचन ललित त्रिभंगी प्राण पियारे ॥
जे पद कमल सदा शिव को धन सिंधु सुधा उरतो नहिं टारे ॥
जे पद कमल तातरिस त्राषत मन वच कर्म प्रह्लाद संभारे ॥
जे पदकमल रमन वृन्दावन अहि शिर धरि अगिनित रिपुमारे ॥
जे पद परशि ऋषि पतनी वलि अहवालि पतित वहुतारे ॥
जे पदकमल परशि जगपावन सुरशरी दरश कटत अघभारे ॥
जे पदकमल पांडव गृह चलिके भए दूत जन काज सवारे ॥
तेई सूरदास जाचत पदपंकज त्रिविधि तापतन हारे ॥ २ ॥"

अन्त—"नारद वचन कथा वर्णनं ॥ रागविलावल ॥
हरि हरि हरि हरि सुमिरण करौ ॥ हरि चरनारबिंद उर धरौ ॥
हरि भजि जेसें नारद भरयौ ॥ नारद वासुदेव सों कह्यौ ॥
सो कथा सुनों चित धार ॥ नीच ऊंच हरि के इकसार ॥
गण गंधर्व ब्रह्मा सभा यकारी ॥
कह्यौ ब्रह्मा दासी सुत होहि ॥ सकुच न करी देखि तै मोहि ॥
तुरत छाड़िकै गंधर्व देह ॥ भयो दासी सुत ब्राह्मण ग्रेह ॥
ब्राह्मण ग्रह हरिजन जहां आइ ॥ दासी दासनि सो हित लाइ ॥
दासी सुत सुनि हृदय सो धरै ॥ हरिजस हरि चरचा जो करै ॥
सुनत-सुनत उपजै बैराग्य ॥ कह्यौ जाइ क्यौं माता त्याज्य ॥
ताकी माता खायो कारे ॥ सो सरि गई सांप के मारे ॥
दासी सुत वन भीतर जाय ॥ करि भक्ति हरि पद चितलाय ॥
ब्रह्मापुत्र तन तजि सो भच्यो ॥ नारद मुनि अपने मुख कह्यो ॥
हरि भक्ति करै जो कोई ॥ सूर नीचते ऊंच न होई ॥११॥
इति भागवत सूर कृत सप्तमास्कंध सूर सागर संपूर्णनं ॥"

विषय— सूरसाहित्य। कृष्ण-जन्म से लेकर ब्रजवास-लीला तक का वर्णन। श्रीकृष्ण की महिमा, उनका गोपियों के प्रति प्रेम, गोपियों का विरह और ऊधो के हाथ संदेसा भेजना आदि।

टिप्पणी—इस ग्रंथ में सूरसागर के प्रथम, द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ स्कंध है। बीच के ५ और ६ स्कंध नहीं है। सातवें स्कंध का भी केवल अन्तिम पृष्ठ है। लिपि प्राचीन है। लिखने की शैली भी पुरानी ही है। ग्रंथ बृहदाकार है। 'सूरसागर' की अन्य हस्तलिखित प्रतियों

भी उपलब्ध हुई हैं। नागरी-प्रचारिणी की खोज-विवरणि का में दो प्रतियों की चर्चा है। देखिये--खो० वि० (सन् १६२६-२८) पृष्ठ–६६४, ग्रं० सं० ४७१ एम्० और ४७१एन्० । बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के संग्रहालय में संगृहीत 'सूरसागर' की हस्तलिखित प्रति अवतक की प्राप्त प्रतियों में सबसे प्राचीन है। परिषद् की प्रति का लिपिकाल है—सं० १८२५। देखिये—'साहित्य' 'वर्ष–४, अंक–१, परिषद् खो० वि०, ग्र० सं०—८१ में। यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क—१०२ है।

८१. हितोपदेश—ग्रंथकार—श्री पदुमनदास। लिपिकार--देवचंद। अवस्था—अच्छी, हाथ का बना, प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ सं०—१३१। प्र० पृ० पं० लगभग—३४। आकार—६"×६½"। भाषा--हिन्दी। लिपि-नागरी। रचनाकाल—माघ, शुक्ल, पंचमी, सं० १७३८, (सन् १६८१) बुधवार। (ग्रंथ समाप्तिकाल--पौष, शुक्ल, पंचमी, सं० १७६६ (सन् १७०६) ॥ लिपिकाल—माघ, शुक्ल, दशमी, सं० १८७४, सोमवार ॥

प्रारंभ—"श्री गणेशाय नमः ॥ ॥ दोहा ॥

गुरु गिरीस गिरिजा गिरा ग्रहनायक गनईश ॥
पदुमन बिस्नु प्रनाम करि जाच्योइहैं असीश ॥ १ ॥
होउ सुफल प्रारंभ मम कोउ करै जनि हास ॥
स्रोता भनिता कों सदा मुद मंगल परगास ॥ २ ॥
विप्र बिस्नुशर्म्मा भनित हितेउपदेस विचित्र ॥
सुनत चाव प्रस्तावमय भूपति निति पवित्र ॥ ३ ॥
सुर भाषा पदु हीन तें कही चहै प्रस्ताव ॥
सिंघ दलेल महीप तहि हेतु कियो हिय चाव ॥ ४ ॥
काएथ पदुमनदास कों प्रेम सहित सनुमानि ॥
रचन कहौ सभ दोहरा वचन सुधामय जानि ॥ ५ ॥
तव गुरु द्विज पग बन्दि तिन्ह कविजन कों सिरनाय ॥
कविता पथ दुर्गम तदपि नृप अग्या जनि जाए ॥ ६ ॥
सेवक संकट हू चलै प्रभु अनुसासन पाई ॥
कवि जन सिष आसिष सुअन इन्हहीं पाए सहाइ ॥ ७ ॥"

अन्त—"चक्रवाक कों करि बिदा। विनय गीध तब कीन्ह।
सुभ कीजै अब देसकों सुजस वियातैं दीन्ह। ५४५ ॥
वंबदे आयो कूंच को ततिषन चले वेहेरि०
राम राम नृप हंस सौं कहिये जो तहिवेरि० ॥ ५४६ ॥
सोरठा ॥
चित्रवर्न नरनाह० सदल सचिवजुत मुदित चित ॥
गए बिंध गठमाह० संधि कथा पूरन भई ॥५४७॥
विप्र विस्नु सर्मादयो आसिष राजकुमार ॥
चारि कथा पूरन भई सुभद होउ सभवार ॥५४८॥
वत्थूआ छंद ॥
इति श्री पदुमन दास वरनि परिपूरन कीन्हो ॥
रुद्र सिंघ जुवराज जिओ जिन्ह हित करि लीन्हो ॥
जदपि आपु गुन सिंधु थाह गुनि अन्हत नहि पावा ॥
तदपि दान सनमान दास पदुमनहि बढ़ावा ॥५४९॥
दोहा ॥
भूपति सिंह दलेल के रुद्र सिंध जुवराज० ॥
जिऔ जलजु जल गंगअउ संभुसिस ससि छाज ॥५५०॥
इति श्री पदुमन दास विरचिते महराज दलेल सिंघ कारिते हितोपदेस संधिनाम चतुर्थो कथा समाप्तः ॥ शुभस्तु ॥ सिधिरस्तु ॥"

विषय— कथा-काव्य। हितोपदेश का पद्यानुवाद। राजा दलेल सिंह का वंश-परिचय और कविवंश का विस्तृत वर्णन।

टिप्पणी-१- संस्कृत भाषा का प्रसिद्ध कथा-ग्रन्थ 'हितोपदेश' का पद्यानुवाद है। संस्कृत के गद्य का भी पद्य में ही अनुवाद है। रचना बड़ी ही सरस, सुन्दर और रोचक है। यद्यपि रचना मौलिक नहीं है, किन्तु 'मूल हितोपदेश' को भाषा-निबद्ध करके श्री पदुमन दास ने अपनी प्रतिभा से उसमें और भी जान डाल दी है। कवि ने ग्रन्थ को प्रारम्भ करते हुए—

२- पहले अपने राजा की कीर्ति और वंशावलि कही है :—

"प्रथम भूप कुल नाम कहि कहौं कथा इतिहास ॥
सुवरन वलित सोहावनी भाषत पदुमन दास ॥८॥
पैरात्र पूर्व निवासतें पैरवार भइष्याति ॥
वेनु वंश विख्यात जग जानै छत्री जाति ॥९॥

छप्पै ॥

वाघदेव भूपाल भूमि भुअवल जिन्ह लीन्हो ॥
किर्ति सिंघ तसु तनय सिंघ विक्रम जिन्ह किन्हो ॥
राम सिंघ तप निष्ठ-कुष्ठ-उछिष्ठ गए दिज ॥
माधव सिंघ महिप भयो तसु नद महाभुज ॥
तसु नन्दन जगत जहाज नृप हेमत सिंघ तसु धर्म धुर ॥
श्री राम सिंघ सुअ तासु पुनि नीति निपुन जसु वचनफुर ॥१०॥

दोहा ॥

कुंअर करे रोव खुव पितु कृस्न सिंघ मतिमान ॥
प्रेमी सिंघ दलेलकों जिन्ह के सरिसर आन ॥११॥
सरस पितामहतें पिता राम सिंघ रन धीर ॥
तिन्ह के पुत्र पवित्र भुवि सिंघ दलेल गंभीर ॥१२॥
करनी सिंघ दलेल की वरनी जाति न काहु ॥
धरनी तल मे धन्यतम गुन गन सिंधु अगाधु ॥१३॥
तिन्ह श्री पदुमन दासकों दीन्हो वहु विध दान ॥
साखन और सिहात है निरांष जासु सनु मान ॥१४॥"

३– मूल ग्रन्थ 'हितोपदेश' का पद्यानुवाद निम्नलिखित रूप से किया गया है:—

"अथकथारम्भः ॥ सिद्धिदेउसोदेव० सदा साधुके काम में।
गंगफेन लेखेव जासु सीस ससि की कला ॥१८॥

सोरठा ॥

अमरजानि है काय० विद्या धन चिंतत चतुर०
केस गहें जमराय० धर्म्म करत अनुमानि है ॥२०॥

दोहा ॥

सर्व दर्वतें दर्व अति विद्या दर्व अनूप।
धनदेनी षरचत अछै अरजत जाते भूप ॥२१॥
विद्या मिलवै भूपतिहि सरिता सिंधु समान०।
तापर अपनो भागफल भोग करै मतिमान ॥२२॥
विद्या विनय हि देति है विनय ख्याति अनुकूल।
ख्याति भये धन-धर्म्म सुष तांते विद्यामूल ॥"

४– 'हितोपदेश' के गद्य का पद्यानुवाद :—

"भागरथी समीप बसत पट्टन पाटलिपुर।
नृपति सुदर्सन नाम सर्वगुन सरल धर्मधुर।
पुत्र तासु गुनहीन ग्यान बिद्या ग्रन्थ विमुष।
पर पीड़ करत कुपथ सुषित अपने सुष।"

× × × ×

"अति उत्तंग तट गंगहु त्यों सिंवारि विशालतन।
दिसि दिसि के निसि आए तहां निवसनिविहंगन॥
काक एक तहां हुत्यो नाम लघुपतनक ताको॥
अति प्रवीन बुधिवंत कथा है बिस्तर जाको॥"

५– यह ग्रन्थ अमुद्रित है। कवि ने अपना परिचय निम्नलिखित पदों में, संक्षेपत: दिया है।

"दामोदर काएथ करन जिन्ह के धर्म प्रकाश॥
चारि पुत्र तिन्हतें भए जेठे संकर दास॥१५॥
मध्यम पदुमन गुनगुरू अतथा लाल मनिजान॥
अनुज कृस्न मनिगुननितें अग्रजइ अभिमान॥१६॥
सत्रह सै अठतिस जब संवत विक्रम राई॥
सित पांचै मधुबुध दिवस रच्यो गनेश मनाई॥१७॥"

ग्रंथ की समाप्ति करते हुए कवि ने लिखा है:—

"सत्रहसै छियासठिजवै० पूष पंचमी सेत०
पदुमन लिषि पूरन कीओ रुद्रसिंघ के हेत०॥५५१॥"

इस ग्रंथ में कुल १२८५ पद हैं। कई अप्रचलित छंदों का प्रयोग किया गया है।

६. ग्रंथ की लिपि प्राचीन है। शैली पुरानी होने से लिपि अस्पष्ट है। ग्रंथ की समाप्ति के बाद लिपिकारने—

"संवत स्त्रुतिसागर सहित वसुवसुवासुन जानि०
सुलकदसमि मधुमास के ससिवासर अनुमानि॥१॥
तहि दिन लिखि पूरन कियों उकील देवचंदहेत,
चारि कथा उपदेसहित० पढहु समुहि चित चेत॥२॥"

पोथी बृहत्काय है॥ यह पोथी श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क—१०६ है।

८२. हितोपदेश — ग्रंथकार—पदुमनदास। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१५६। प्र० पृ० पं० लगभग—३६। आकार—४½"×८"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—माघ, शुक्ल, पंचमी, सं० १७३८, (सन् १६८१) बुधवार। (समाप्तिकाल—पौष शुक्ल, ५ पंचमी, सन् १७६६-सन् १७०६) लिपिकाल—पौष, शुक्ल, ३ तृतीया, सं० १८८६, (सन् १८२६) रविवार।

प्रारंभ — "श्री गणेशाय नमः॥ दोहा॥

गुरुगिरीस गिरिजा गिरा ग्रहनायक गण ईश॥
पदुमण विस्नु प्रनाम करि जायौ इहै अशीश॥१॥
होउ सुफल प्रारंभमम॥ कोउ करौ जनिहास॥
श्रोता भनिताको सदा मुद मंगल परगास॥२॥
विप्र वीस्नु सभभिनित॥ हित उपदेस विचित्र॥
सुनत चाव प्रस्तावमय॥ भूपति नितिपवित्र॥३॥"

अन्त— "भूपति सिंघ दलेल के रुद्रसिंघ जुवराज॥
जियो जलजु जल गंग अरु संभुसीस ससि छाज॥२५१॥
सत्रह सै दयासठिकै पौष पंचमी सेत॥
पदुमण लिपिपूरण कियो रुद्रसिंह के हेत॥२५२॥"

विषय—संस्कृत 'हितोपदेश' का पद्यानुवाद। राजा दलेल सिंह का वंश-परिचय और कविवंशवृत्त-कथन।

टिप्पणी—यह ग्रंथ भी ग्र० सं० ८१ के जैसा है। ग्रंथकार ने पूर्व ग्रंथ के समान ही इसमें भी अपना और राजा दलेल सिंह का तथा दोनों के वंश का विस्तृत परिचय दिया है। इसकी लिपि प्राचीन होकर भी कुछ स्पष्ट है। इसमें दन्त्य 'न' के स्थान पर मूधर्न्य 'ण' का प्रयोग किया गया है। लिपिकारने अपना नाम नहीं दिया है। यह पोथी श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क—१०७ है।

८३. हरिहरात्मक हरिवंशपुराण—ग्रंथकार—श्री शिवप्रसाद। लिपिकार—श्री शिवप्रसाद। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ-सं०—३। प्र०-पृ० पं० लगभग—१२। आकार—४½"×८"। भाषा—हिन्दी।

लिपि--नागरी। रचनाकाल-× । लिपिकाल—भाद्र, कृष्ण, अष्टमी, सन् १६४८ (सन् १८६१) बुधवार।

प्रारंभ—"श्री गणेशायनमः ॥ नमो रुद्राय कृष्णायनमः संहत-
चारिणेनमः षडर्द्धनेत्रायसद्धिनेत्राय वै नमः ॥१॥
नमः पिंगल नेत्राय पद्म नेत्राय वैनमः ॥
नमः कुमार गुरवे प्रद्युम्न गुरवेनमः ॥२॥
नमो धरणीधराय गंगाधराय वैनमः ॥
नमो मयूरपिच्छाय। नमः केयूरधारिणे ॥३॥
नमः कपालभालाय वनमालाय वैनमः ॥
नमस्त्रिशूलहस्ताय चक्रहस्ताय वैनमः ॥४॥
नमः कनकदंडाय नमस्ते ब्रह्मदंडिने ॥
नमश्चर्मनिरासाय नमस्ते पीतवाससे ॥५॥"

अन्त—"दामोदराय देवाय मुंजमेखलिने नमः ॥
नमस्ते भगवन् विष्णो नमस्ते भगवन् शिव ॥
नमस्ते भवते देव नमस्ते देवपूजित ॥१४॥
नमस्ते कर्मणां कर्म नमोमितपराक्रम ॥
हृषीकेश नमस्तेस्तु स्वर्णकेश नमोस्तुते ॥१५॥
इति श्री महाभारते हरिवंश पर्वान्तिर्गत विस्नुपर्वहरिहरा त्मक स्तोत्रम् सम्पूर्णम् ।।"

विषय—महाभारत के हरिवंश पर्व का हरिहरात्मक स्तोत्र।

टिप्पणी—इस ग्रंथ में महाभारत का हरिहरस्तोत्र है। लिपि स्पष्ट है। ग्रंथ के अन्त में लिखा है "श्री बाबू गंगा विस्नुहेतु लिखित्वा शुभमस्तु सिद्धिरस्तु।" यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क—१०६ है।

८४. विनय-पत्रिका—ग्रंथकार—गो० तुलसीदासजी। लिपिकार—गोपालदास वैष्णव। अवस्था—अच्छी, प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१८६। प्र० पृ० पं० लगभग—२६। आकार—७½"×१४½"। भाषा—हिन्दी (अवधी)। लिपि—नागरी। रचनाकाल--×। लिपिकाल—×।

प्रारंभ—"श्री गणाधिपतये नमः ॥ कवित्व ॥

तुलसी प्रसाद हिय हुलसी श्री राम कृपा
सोई भवसागर के पुलसी उर लसी हैं ॥
जाकी कविताई सर्वानर्थ तु उटंगा सभ
गंगा की प्रवाह भक्त जन मन धसी है
परम धरम मारतंड उर व्योम उग्यौ
काम क्रोध लोभ मोहत मनिसि नसी है
वाही के प्रकास जमगण मुह मसिलाई
अति सुखपाइ जिय मेरे उर वसी है ॥
है तुलसी को गहि रहौं जौं चाहत विश्राम
बाहर भीतर सहजहीं होत अधिक अभिराम
तुलसी माल धारण कियें बाहर होत सुवेष
तुलसी कृत के गहतहीं अचल भक्ति की रेष
कलि जीवन कल्याण हित भाषा ललित ललाम ॥
विये प्रबंध बनाय जेहिं तेहि कों करों प्रणाम

प्रथम श्री मद्रामायन ग्रंथ को संदर्भ सत्संग विलाश नाम किये तहाँ श्री गोस्वामी तुलसीदास जू के अनुग्रहतें उनके किये ग्रंथनि को अर्थ यथामति यथाभाग्य यत् किंचित् बूझि परौ श्री विनयपत्रिका श्री गोस्वामी को अंत ग्रंथ है सर्वसिद्धान्त को निरूपण यह ग्रंथ के विचारेतें प्रतीति होत है तहा यद्यपि ग्रंथ अत्यन्त कठिन है तथापि श्री गोस्वामी के कृपाकों अवलंब करि यथामति कछु अर्थ लिषे हैं ॥

मूल ॥ गाइये गणपति जगवंदन ॥

टीका ॥ गणपति शब्द तें ऐश्वर्य सूचित किए जगवंदन पदकरि जगत्पूज्यत्व जनाये ॥

मूल ॥ शंकर सुअन भवानी नंदन ॥

टीका ॥ सुअन औ नन्दन दोनों पद पुत्रवाचक है तहा पुनरुक्ति पद देवे को आसय ऐसो है की कोउ को माता श्रेष्ठ होय है कोउ को पिता इहां माता पिता दोउ की श्रेष्ठता जनायवे निमित्त पुनरुक्ति पद दिये यद्वा शिवजी के पुत्र भवानी के नन्दन नाम आनन्दकर्त्ता यह हेतु तें की श्री गणेश जू को गर्भ तें आविर्भाव नही है ॥"

मध्य की पंक्तियाँ—*पृष्ठ ६४*

"पूर्व सिद्धांत के पुष्ट करने कों तीसरो दृष्टांत दोत हैं चेत ऐसो संदेह होय की एक मनतें अनेक पदार्थ कैसे भये तेह पर कहत हैं की जैसें वृक्ष के मध्यमो अनेक फूल ली तथा सूत मो कंचुक नाम वस्त्र विनहीं वनायें नाम वनाये के पहलें भी हैं काहें वीना मोन होयतो आपौ कहां तैं तैसें नानाप्रकार के शरीर मन के विषैलीन रहत है औसर पाय प्रगट होत है अर्थात् जव जैसो काल तव जौने गुण को उदय तव तैसो इ देव तिर्जगादि शरीर जीवकों यह मनव नाम देत हैं ॥"

अन्त—मूल ॥ "विहंसि राम कह्यौ सत्य है सुधि मैं हूं लही है

मुदित माथ नावत वनीतुल अनाथ की परी रघुनाथ सही है ॥

सभ की सूनि तव स्वामी हंसि करि कह्यौ की यह सत्य है मेह ने सुधि पाई है तहां के हतें सुधि पाई है यह नहीं कह्यौ अरु हंसी बोले याको यह अभिप्राय है की पहीज़े ते श्री जनकनंदिनी महारानी कों विनय करि गोसाईं प्रशन्न किए हैं समैपाय कबहिं महारानी तेसई कियों हैं ते हेतु ते नाम नही कहे यह सभ समाचार सभा की अरुस्वामी की प्रसन्नता श्री महावीर कहि करि गोसाईं तें कहत है की हे तुलसी अनाथ जोतर के रघुनाथ के दरवारमो सही परीनाम गुलामन्ह मो लिख्यौ गयो अब आनद हो करि माथ नावत नाम प्रनाम करत रहु विनय करवे को कछु प्रजोजन नही नाम सब प्रकार तें तेरी वनी यह नीति तें गोसाईं कृतार्थ भए ॥ २७६ ॥ इति विनय पत्रिका ।

विषय—तुलसीदास के दार्शनिक पद । रामचंद्रजी और शंकरजी की स्तुति भजनों में ।

टिप्पणी—यह ग्रंथ श्री रामदास जी कृत 'रामतत्त्ववोधिनी' टीका के साथ है । इसीलिए ग्रंथ का आकार-प्रकार बढ़ गया है । टीका की शैली पुरानी है । टीकाकार ने ग्रंथ के प्रारंभ में (उपरिलिखित) मंगलाचरण के वाद श्री रामचरितमानस की भी टीका की सूचना दी है । ग्रंथ के अन्त में टीकाकार ने—

चौपाइ ॥

"प्रथम कियो सतसंग विलास श्री रामायण करत प्रकास।
दूसर भजन रसार्णव अमृत भजन तरंगन्ह करि सो आवृत
भंगवत वतरस संपुटती सर है जामे रस को उठत लहर है
अद्भुतरस तरङ्ग है नाम चौथ सो सव सिद्धांत ललाम
इतिहास लहरि पञ्चम सोभयो कहत सुनत जेहि निति सुख नयो
भागवत तत्व भासकर षट जो अज्ञान तिमिर नासत उ पुट जो
सप्तम विनय पत्रिका टीका राम तत्व बोधिनी सुनीका ॥"

इन पद्यों में ग्रंथकार ने अपने ग्रन्थों के सम्बन्ध में संकेत कियाहै। इस टीका के अतिरिक्त इन्होंने और सात ग्रन्थ बनाये हैं। यह ग्रन्थ नागरी-प्रचारिणी की खोजविवरण में भी है। देखिये-ग्रन्थ-संख्या-६२,६३,६४ और ६५ की टिप्पणी।

लिपि प्राचीन और अस्पष्ट है। ग्रन्थ के प्रारम्भ या अन्त में टीकाकार या लिपिकार ने समय, तिथि आदि का निर्देश नहीं किया है। लिपिकार ने अन्त में "दषखत गोपालदास वैस्नव मोकाम साडासी रनेतन को।" लिखा है, जिसमें स्थान का नाम अस्पष्ट है। यह ग्रन्थ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क—११६ है।

८५ वैराग्यप्रकरण—ग्रन्थकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी पृष्ठ-सं०—१६६। प्र० पृ० पं० लगभग—४१। आकार—४" × ८"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—पौष, कृष्ण, २ द्वितीया, सं० १९१९, (१८६२ सन्) बुधवार॥

प्रारम्भ—"श्री गणेशायनमः॥ श्री गुरुभ्योनमः॥ अथ वैराग्य प्रकर्ण प्रारंभ
सतचित आनन्दरूप जो आत्मा हे ॥ तिसको नमस्कार हे॥
केस हि सत चित आनंद रूप सो आत्मा कहत हे॥
जिससे इस सर्व भासत हे॥ अरुजीस विषे इह सर्वलीन होता है॥
अरु जिस विषे सर्व इस्थित होते है॥
तिस सत्य आत्मा को निमस्कार है॥ ज्ञाताज्ञानज्ञेय॥
द्रिष्टा दर्शन द्रिष्ट॥ कर्ताकरण क्रिया॥
जिस करी सिधी होते है॥ एसा जो ग्यान रूप आत्मा है॥
तिसको नमस्कार है॥ जिस आनन्द के कर॥

करि संपूर्ण विश्व आनंदवान हे ॥ अरु जिस आनंद करि सर्व ॥
जीवते हे ॥ तिस आनन्द आत्मा को नीमस्कार हे ॥"

मध्य की पंक्तियाँ–पृष्ठ–८३

"जेसे पंषी चोग को सुखरूप जाणी करी चुगणे आवते हे ॥
जब चुगणे लागरते हे ॥ तब जाल विषे बाधे जाते हे ॥
तिस बंधन करी दिन जेसे हो जाते हे ॥
तेसे यह पुरुष विषय भुके भोगणे की इच्छा करते हे ॥
अरु त्रस्ना रूपी जाल साथ बंधे जाते हे ॥
तिसकरी महादीनता को प्रप्ति भश्र होते हे ॥
ताते हे मुनीस्वर मुझको साई उपाय कहो ॥
जिस करि अहंकार को नास होवे ॥ जब अहंकार का नास होवेगा ॥
तब मे परम सुषी होवोगा ॥ जेसे विध्याचल परवत केहे ॥"

अन्त—"अरु दीपकवत प्रकावान हे ॥ अरुबोध का परम पात्र हे ॥
कहणे मात्र सीघ्र इसकों ग्यान होवेगा ॥
अरु हम जो सभही बैठे हे ॥ जो हमारे बिदमान इसकों ग्यान होवे
तउ जाणी जउ हंम सभही मूरष बैठे हे ॥२८॥
इति श्री बैराग प्रक्रसपूर्ण ॥ श्री रामचंद्राय नमो नमः ॥"

विषय—दर्शन । २८ सर्गों में, विश्वामित्र, वसिष्ठ, भारद्वाज, वाल्मीकि आदि ऋषियों और रामचन्द्र के बीच वार्तालाप। साथ ही, विलास, मान, अभिमान, मोक्ष, आत्मा आदि पर गद्य में दार्शनिक विवेचन।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ में राजा शार्दूल आदि के नाम का भी उल्लेख हुआ है। सम्भवतः इस पुस्तक की रचना किसी पौराणिक कथा के आधार पर हुई है। ग्रन्थ विवेच्य है। भाषा खड़ी बोली के विकास के पूर्व की है। 'बोलते भये' आदि वाक्यों का प्रयोग हुआ है। भाषा पर कथा-शैली का प्रभाव है।

२—ग्रंथ की लिपि पुरानी है और लिखने की शैली भी प्राचीन होने के कारण अस्पष्ट है। ग्रन्थ के प्रारम्भ या अन्त में लिपिकार ने अपना या ग्रंथकार का नाम नहीं दिया है। इस ग्रंथ का मूल नाम भी संदिग्ध प्रतीत होता है,

ज्ञात होता है किसी वृहत्काय ग्रंथ का यह 'वैराग्य प्रकरण' नाम का एक प्रकरण है। ग्रन्थ के प्रारम्भ के, पृष्ठ के हाशिये में लिखा है—'वैराग्य सुमोज', इससे प्रकट होता है, ग्रंथ का कोई और नाम सम्भव है। ग्रंथ अनुसंधेय है। अन्त में लिपिकार ने लिखा है :—

"संवत् १६१६ पोसवदी २ बुधवासरे लिखितं दवे परसोतं मत्मज मुरारेवासी श्री राजकोट मध्ये॥ समाप्त। संपूर्ण॥ ज्ञात होता है लिपिकार का शुद्ध नाम 'पुरुषोत्तमदेव' है जो 'मुरारि' के पुत्र हैं। किसी स्थान का नाम 'मुरार' है, जहाँ के वे निवासी हैं। राजकोट में या तो ग्रंथ लिखा गया है, या किसी राजदुर्ग में।

यह पोथी श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं०–१२० है।

८६ मणिमय दोहा—ग्रन्थकार—तुलसीदास। लिपिकार—भगवान मिश्र। अवस्था—अच्छी, पुराना हाथ का बना मोटा कागज। पृष्ठ-सं०—३४। प्र० पृ० पं० लगभग—२१। आकार—५½" × ११"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—आश्विन, कृष्ण, ७ सप्तमी, सं० १८१६, (१७६२ ई०) गुरुवार।

प्रारम्भ—"श्री गणेशायनमः मनिमे दोहा लिष्यते॥

दोहा॥

रामनाम मनि दिप चरु॥ जिह देहऋ छाइ॥
तूलसी वाहर भितर।। जो चाहसि उजियार॥
रामनाम के अंक निधि॥ साधणता सव सुण॥
अंक रहित सव सुण है अंक सहित दस गुण॥
रहु गुनो तिगुनो चौगुनो॥ पांच षष्ठ अरु सात
आगे ते पुनि नोगूनो॥ नव के नव रहि जात॥३॥
णव के नव रहि जात हे तुलसि किवो विचार॥
रमो रमइआ जगत्र में॥ नहि अद्वैत विस्तार॥४॥
जथा भुमि सव बिज यह॥ राषत निवास अकास॥
राम नाम सव धर्मभय जानत तुलसिदास॥५॥"

मध्य की पंक्तियाँ-पृष्ठ-१७

"जब लगी अंकुस सीस पर ॥
तव लगी निर्मल देह ॥
तुलसी अंकूस वाहरे ॥
सिर पर डारत षेर ॥२६५॥
तुलसी स्वारथ सासुरे ॥
परमारथ विन नेह ॥
अंध कहे दुष पाइहे...... ।"

अन्त—"तुलसी सम्पत्ति के सषा ॥ परत विपत्ति मे चीन्ह ॥
सज्जण कंचण कसको ॥ विपत्तिक सौधे कीन्ह ॥५६३॥
रोगणसौ तण जडीत जण ॥ तुलसी संग कू लोग ॥
राम कृपा निधि पाली है ॥ सब विधि पालन जोग ॥५६४॥
जीवण अपने मनतेत जी ॥ यह मन बड़ी बलाऐ ॥
तुलसी रघुवर जण सुषद ॥ भ्रमते निकट ण जाऐ ॥५६५॥
प्राकृत पनके भिणही ॥ मन सात रंग वीलाऐ ॥
तुलसी चीत जल थीर भऐ ॥ राम आतम दरसाऐ ॥५६६॥
इति श्री मनिमै दोहा समापतः संपूर्नः"

विषय—दर्शन। ५६६ पदों में हरि-भक्ति, माया, मोक्ष, सज्जन-दुर्जन आत्मा, और परलोक का संक्षिप्त विवेचन।

टिप्पणी—ग्रंथ की लिपि प्राचीन और अस्पष्ट है। इसमें दन्त्य 'न' के स्थान पर सर्वत्र मूर्धन्य 'ण' का ही प्रयोग है। यह पोथी श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं० १२१ है।

८७ गीतावली (लंकाकाण्ड)—ग्रंथकार—गो० तुलसीदास। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी, मोटा कागज, खंडित। पृष्ठ-सं०—१२। प्र० पृ० पं० लगभग—१६। आकार—४½"×१०"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"जीवत जैसे प्रेत भजन विनु ॥
घर घर डोलत मंद लिन मति वोद्र भरनक हेतु
सुष कटुवचन वो परनिंदा व संतन दुष देत
कबहु के पाये पाप कै दैसा गाडी धुरमे देत
श्री भागवत सुने नही सरवन धाव देव

नेक प्रीत न किवो वोह गीरधर लाल सो भवन लिलको षेत
गौ ब्राह्मन को सुकृतनहि जान्यो किवो न हरिसो हेतु
सुरदास भगवंत भजन विनु कुडे कुटुम्ब समेत ॥

रागमारु ॥

मानु अजहु सीष परि हरि क्रोधु ॥
पीय पुरो पायो कहु काहु करि रघुवीर वीरोधु ॥
जेई ताडका सुवाहु मोरि मप राषि जनायो आपु ॥
कौतुकहीं मारिच नीच मिश प्रगटे लवि सिष प्रतापु ॥"

अन्त—"रागहोडी ॥
आजु अवध आनंदवधावन रिपुरन जीति राम आए ॥
सजि सुविमानिनि सान बजावत सुदीत देव देषन धाए ॥
घर वर चारु चौक चंदन मनि मंगल कलस सब भी साजे ॥
ध्वज पताक तोरन वितान विविध भांति वाजन वाजै ॥
राम तिलक सुनी दीप दीप के नृप आए उपहार लिए ॥
सीय सहित आसिन सींघासन निरषि जोहारत हरषि हिए ॥
मंगल गान वेद धुनि मुनि असीस धुनिभुअन भरे ॥
वरषि सुमन सुर सीधप्रसंसत सब के सब संताप हरे ॥
रामराज भई काम धेनु मही सुष संप्रदा लोक छाए ॥
जन्म जन्म जानकी नाथ के गुन गन तुलसीदास गाए ॥२३॥
इति श्री राम गीतावलि लंका कांड समप्तं ॥ राम ॥ राम ॥ राम ॥ राम ॥"

विषय—राम-जीवन-सम्बन्धी काव्य। विविध रागों में राम-कथा-वर्णन।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ अपूर्ण है। केवल लंका कांड ही है। अतएव, लिपिकार के नाम का पता नहीं चलता है। नागरी-प्रचारिणी-खोज-विवरण में अन्य स्थानों पर भी इस ग्रन्थ के उपलब्ध होने की चर्चा है—

१–सं० १८०२ (खो० वि० १९०४ सं० ६०),
२–सं० १८६७ (खो० वि० १९०९–११ सं० ३२३ जी०),
३– (खो० वि० १९१७–१९ सं० १९६ सी०),
४–सं० १८२४ (खो० वि० १९२०–२२ सं० १९८ एच्०),
५– (खो० वि० १९२३–२५ सं० ४३२),

६– (खो० वि० १९२६–२८ सं० ४८२ आर० एस्०),
यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है।
पु० क्र० सं० क–१२२ है।

८६. नाममाला—ग्रंथकार—श्री नंददासजी। लिपिकार—×। अवस्था–अच्छी, मोटा, हाथ का बना कागज। पृष्ठ-सं०—१७। प्र० पृ० पं० लगभग—२८। आकार—५"×६½"। लिपि–नागरी। रचनाकाल–×। लेख-समय–×।

प्रारंभ—"श्री गणेशायनमः ॥ अथनाममाला लिख्यते ॥
जो प्रभु जोति मये जगत भये ॥ कारण करन अभव ॥
अशुभ हरन शम शुभ करन ॥ नमो नमो तेहि देव ॥
येक वस्तु अनेक हैं ॥ जगमगात जगधाम ॥
जिमि कंचनते कींकिनि ॥ कंकन कुंडल नाम ॥
तं नमामिपदपरमगुरु। दरसन कमल दल नयण ॥
जग कारण करुनार्नव ॥ गोकुल जाको अपन ॥
उचरिशकतिनहिं शंसक्रत ॥ जानोति चाहत नाम ॥
ताहिनन्द शुमति ॥ जथारचत नाम को धाम ॥
नाम रूप गुण भेद करि ॥ प्रगटि तश बहि ठौर ॥
तव विनुतंतुण और किछु ॥ कहत सो अति वडवौर ॥
गूंथहि नानानामको ॥ अमर कोष के भाय ॥
माणवति के माण पर ॥ मिलै अर्थं शव आय ॥
मान नाम ॥ अहंकार मददर्प्पपुनि ॥ गर्वशभयु अभिमाण ॥
मान राधिका कुमारि कौ ॥ शवकों कर कल्याण ॥"

मध्य पृष्ठ ८—
"सूर्य्य नाम ॥ सूर्य्य दीवाकर भानुकण ॥
दीनकर भाशकर अंश ॥ मीहीर प्रभाकर तीमीरहर ॥
वीवस्वान तीगमांशु ॥ व्रधन वीरोचन वीभावशु ॥
मारतंडत्रय अंग ॥ पुषन हरी दीन मनी तरनी ॥
शवीता शुर पतंग ॥ रवीमंडल मंडन जनका वरनत मुनिजन जाहि ॥
शो यह नंदन नंद को क्यों वलीक परि आही ॥ १४६ ॥

अन्त—"कोकिल नाम ॥ परभ्रीत कलरव रक्तद्रिग ॥
पिकधुनी जहं रशपुंज ॥ जनूपिय आरतिनिरषितव ॥
तुरित चलि चली कुंज ॥ इंद्री नाम ॥ अपूर्ण।"

विषय—शब्दकोष। २७१ शब्दों के पर्य्याय हैं। ग्रंथ खंडित है।

टिप्पणी—इसमें दोहे के एक चरण में शब्द के नाम कहे गये हैं और दूसरे चरण में ग्रंथकारने कुछ साहित्यिक रचना की है जैसे—।

"मीथ्या नास ॥ मीथ्या मोघ म्रीपा अन्रीत ॥ व्यार्थ अलीक नीरर्थ ॥
अैशे पोयशो झूठ अती ॥ चली का बोली अव्यर्थ ॥"

९९. दृष्टान्ततरंग—ग्रंथकार–श्री दीनदयाल गिरि। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ–सं०–१०। प्र० पृ० पं० लगभग–४४। आकार—८"×१२½"। भाषा—हिन्दी। लिपि–नागरी। रचना-काल–आश्विन, शुक्ल, १ प्रतिपदा, सं० १८३९, (१७८२ ई० मंगलवार) लिपिकाल—×।

प्रारंभ—"श्री गणेशायनमः ॥ दोहा ॥

वैया नैया जहंतहां विरत अति आनंद ॥
मुष पुनीत नवनीत जुत नौमि सुवदनंदनंद ॥ १ ॥
हरि के सुमिरे दुषसवै लघुदीरघ अघजाहिं ॥
जैसे के हरि भूरिभय करिमगदूरिन साहिं ॥ २ ॥
नीच बडन के संगते पदवी लहत अतोल ॥
परे सीप में जलद जल मुकुता होत अतोल ॥ ३ ॥
अमल मलीन प्रसंगते अधम मैहीं फल होत ॥
स्वाति अमृत अहि मुष परे बनि बिस होत उदोत ॥ ४ ॥
साधुन को पल संग में आदर अंग नसाय ॥
तपित लोह संदोह मे जिमि जल हूँ जलि जाय ॥ ५ ॥"

मध्य—

"क्रोध हु मे अप्रिय वचन कहैं नवुध गुन अैन ॥
व्है प्रसन्न मन नीच जन भाषत हैं कटुवैन ॥ ६५ ॥
नहीं रूपक कुछ रूप है विद्यारूप निधान ॥
अधिक पूजियत रूपते विनारूप विद्वान ॥ ६६ ॥
करैं सुजन सतकार पर परे गथा के बंध ॥
दहत देत सवको अगर अपनो सहज सुगंध ॥ ६७ ॥
छीर होत त्रिन षायके पयते विषव्है जाय ॥
यह विधि धेनु भुजंग रद पात्र कुपात्र लषाय ॥ ६८ ॥"

अन्त—"हिएसमिरि गोविन्द को नासहोंहि सब सोग ॥
जथा रसायनतें नसै सनै सनेही रोग ॥ २०० ॥
सबै काम सुधरै जबै करै कृपा श्री राम ॥
जैसे कृषी किसान की उपजावै घनस्याम ॥ १ ॥
जैसे जल लै बागकों सींचत मालाकार ॥
तैसेनिज जनकों सदा पालत नंदकुमार ॥ २ ॥
यह दृष्टांत तरंगिनी गिनी गुनी सुषदांनि ॥
बिरची दीन दयाल गिरि सुमिरि सुपंकज पानी ॥ ३ ॥
उठेउ मंगतरंग सों दोहा दो सत दोय ॥
या में जे सज्जन करैं बिमल होय मतिधोय ॥ ४ ॥
पान किए जल अरथ के मेटै जडता ताप ॥
ज्यों जदनंदन जापतें होय पलायन पाप ॥ ५ ॥
निधिमुनि बसुससिसाल मैं आसुन भास प्रकास ॥
प्रतिपद मंगल दिवसकों कीन्यो ग्रंथ विकास ॥ ६ ॥
इति श्री दृष्टान्ततरंगिनी समाप्ता ॥"

विषय—दृष्टान्त-सम्बन्धी काव्य। २०२ दोहों की रचना।

टिप्पणी—इस ग्रंथ में, दोहे में बड़े ही अच्छे दृष्टान्त और सुभाषित कहे गये हैं, लिपिकार का नाम नहीं है। यह पोथी श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क–१२७ है।

६० प्रिया प्रीतम रहस्य पद—ग्रंथकार श्री स्वामी राम वल्लभ शरण। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी, मोटा, देशी कागज। पृष्ठ–सं०—१६। प्र० पृ० पं० लगभग—३२। आकार—७ × "१०½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"॥ श्री ॥
श्री प्रीतम प्राण प्रियायै नमः ॥ श्री प्रिया प्राण प्रियायै नमः ॥
श्री सीतारामाभ्यां नमः ॥ श्री चन्द्र कलायै नमः ॥
श्री युगल प्रियायै नमः ॥ श्री हेम लतायै नमः ॥
श्री प्रीति लतायै नमः ॥ श्री युगल बिहारिणयैन नमः ॥
अथ प्रिया प्रीतम रहस्य सुख पदावली श्री ॥
१०८ स्वामी रामबल्लम शरण कृत ॥०॥

पद ॥१॥

किसोरी जूके अनुपम रस मम वैन।
मुधा सुधा कर सुक पिक हूं नहिं कोकिल हूं समहैन ॥१॥
मन्द हंस निरदल सन अधर छवि फंसानि पिया प्रदचैन।
अंग २ छवि फवि कवि दवि मति शारद बरनि सकैन ॥२॥
करत विहार अपार प्रिया संग कनक भवन सुख दैन।
युगल विहारिनि भरि उमंग सखि सेवती हैं दिन रैन ॥३॥"

मध्य की पंक्तियाँ–पृष्ठ–१०

"सत्य सत्य यह सत्य कहत हौं जेहि प्रिया दृष्टि परी।
सोइ भव तरिहि सुयुगल विहारि निमि गुरु सुफल फरी ॥४॥
चुटकी बजावै विहंसि प्रिय बोलो।
नेह नजर भरि हेरि लाड़िली चित जड़ ग्रंथी खोले ॥१॥
हौ चेरी तेरी तू मेरी प्रति पालिनि हिय तौले।
हेरी तजि भजि युगल विहारिनि निद्रवहु विरह ऋषि कौले ॥२॥"

अन्त—"सुनयना भाई भाग बाग फूला।
अनुपम फूल लाड़िली सिय जू छवि फवि कवि सुख मूला।
जाहि लखि श्याम भँवर मूला।
जाको अन्त वेद नहिं पावत सोई बना दूला।
सुखद सब विधि हर त्रय सूला।
रमा रमन आदिक कवि गति सुमति तुला तूला॥
युगल विहारिनि युगल परमहित नायक अनुकूला।
पाप जड़ कर्म्म जाल खूला॥
० श्री सीतारामाभ्यां नमः ०"

विषय—राम-सम्बन्धी शृंगार काव्य। राम और सीता के मिलन और परस्पर वार्तालाप के वर्णन द्वारा भजन और गेयपद।

टिप्पणी—लिपिकार ने अपना नाम पोथी के प्रारंभ या अन्त में नहीं दिया है। लिपि स्पष्ट और सुन्दर है। यह पोथी श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क—१२८ है।

६१ अन्योक्ति माला—ग्रन्थकार—श्री दयाल गिरि। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ-सं०–१४। प्र० पृ० पं० लगभग—१४४। आकार–७"×१०"। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल–×।

आरंभ—"श्री गणेशाय नमः ॥ अथ अन्योक्ति माला ॥
छंद कुंडलिया ॥
वंदो मंगल मय विमल अज सेवक सुष दैन
जो करि व सुष मूकहीं गिरा नचाव सुचैन ॥
गिरा नचाव सुचैन सिद्धि दायक सब लायक ॥
पसुपति प्रियहिय मोघ करन निरजर गन नायक ॥
बरनै दीन दयाल दरसि पद द्वंद अनंदौ ॥
लंबोदर मुदकंद देव दामोदर वंदौं ॥१॥
तारे तुम बहु पथिनकौं यह नंदधार अपार ॥
पार करौ यहि दीन कौं पावन षेवनिहार ॥
पावन षेवनि हार तजो जनि कूर कुवरनै ॥
वरनै नहीं सुजान प्रेम लषि लेहु सुवरनै
बरनै दीनदयाल नाव गुननाथ तिहारे ॥
हारे कों सब भाँति सुवनि है पार उतारे ॥२॥"

अन्त—"अथ चित्रको
कम है मूलत लषि इन्हें अहे चितेरे चेत
एतो अपने अँग में रचे आपने हेत ॥
रचे आपने हेत चराचर चित हितूनैं ॥
डरै भ्रमै मति नीत तोहि किनए सब सूनैं ॥
बरनैं दीनदयाल चरित अति अचरज या है ॥
रंच्यो आपने रंग तिन्हें लषि मूल तज्यो है ॥११०॥
यह कल्पद्रुम सुमन मय माला सुपद सुवेस ॥
विलसै दीनदयाल गिरि सुमन सहिये हमेस ॥१११॥
इति श्री अन्योक्ति माला समाप्त ॥ शुभमस्तु ॥"

विषय—अन्योक्तियाँ। चित्र, फूल, वृक्ष, सूर्य, चन्द्र, वायु, पर्वत, नदी तथा अन्य प्राकृतिक वस्तुओं और विशेष पुरुषों के माध्यम से अनेकविध दार्शनिक तथा लौकिक विचारों का प्रतिपादन।

टिप्पणी—यह ग्रंथ श्री दीनदयाल गिरि का है। यद्यपि प्रारम्भ या अन्त में नाम नहीं है, तथापि प्रत्येक पद्य में, अन्त में नाम है। लिपि-कार ने अपना नाम, प्रारम्भ या अन्त में नहीं लिखा है। लिपि प्राचीन और अस्पष्ट है। यह पोथी श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं० १२६ है।

६२. रामसगुनमाला — ग्रंथकार—गो० तुलसीदास। लिपिकार — बिहारीलाल। अवस्था—अच्छी; देशी, हाथ का बना कागज। पृष्ठ-सं०—१७१। प्र० पृ० पं० लगभग—४४। आकार—७"×११"। भाषा—हिन्दी। लिपि-नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—कार्तिक, कृष्ण २ द्वितीया, सं० १६११, (सन् १८५४, १२३२ साल)।

प्रारंभ— उों अथ श्री राम अज्ञासगुन माला लीष्यते ॥
अथ नेवता देने की विधि लिष्यत ॥
प्रथम एक सुपारी लेके साफ को ॥
जीनका दीन होऐ तिनको नेवता देना ॥
सो दीन रात मुनी का भेद सो ॥
सात मुनी सात दिन सात रात ॥ मुनीराम ॥
सीता भरत लछमन सत्रुहन ॥
सीव हनुमान ॥ दीन ॥ रवीससी भौमबुधगुरु ॥
भृगु सनीवार ॥..............................।"

(नेवताविधि लिखने के बाद पृष्ठ ४ से)

"मूल ॥ दोहा ॥
वानि बिनायक अंब हर रवीगुर रखा रमेश—।
शूमीरी करहु सब काज सुन मंगल देस वीदेस ॥

टीका— वानी जो शोरवती जी विनायक श्री गणेश जी अब जो पारवती जी हर जो महादेव जी रवी श्रि स्त्रुज गुर अपने रमा रमेशर जी सीता राम जी इनके शुमीरन किऐ देस परदेश सवत्र मंगल है ॥ यह अरथ सगुन विद्या पढ़ने को तथा व्यापार करने तथा चाकरी करने को तथा परदेशी० ॥"

अन्त— सगुन जो है वीस्वास करके सब सगुन का दोहा सो वीचीत्र सुंदर मनी ताको परोय के मनोहर हार बनाय के राम जी के दासते है सो हृदय मे पहीर के उज्जल वीचार सो देषे है सो तुलसीदास जी कहत है की सब दोहा है मनी का हार है सो जो राम दास पहीर ते है पहीरना कुहे की धारन करना राम जी की आज्ञा को....मन ही करते हैं सो नेवतादे हे हमेसा पूजाकर के सगुन देष के राम आज्ञा होय तो करे न राम आज्ञा पावे तो न करै यैसो जो रामदास है तीन के हृदय यो तीन सौ तेतालीस

दोहा है मनी फीरत रहत है से सब सगुन प्रसीध रहती है सो सगुन बस सोभा देत हैं कहैं सत्य होत है प्रकासीत होत है ॥ इती श्री राम आज्ञा कृत गोसाइ तुलसीदास की राम अज्ञा का टीका का सत्ताएस सर्ग के सत्तायस सतक का सात ससतत्तर दोहा है सोमापत ॥ ७७७ ॥ सूभमस्तु सीद्धरस्तु ॥"

विषय—राम-सम्वन्धी काव्य । सगुण-असगुण का विचार ॥

टिप्पणी—१. इस ग्रंथ की लिपि अत्यन्त प्राचीन और अस्पष्ट है । सभी शब्द संश्लिष्ट हैं ।

२. इस ग्रंथ में सर्वत्र राम को आधार मान कर लोक-प्रचलित, रामाज्ञा, और तंत्र-सम्वन्धी बातें हैं । किस प्रकार दोहे की माला बनाकर जपनी चाहिए, विदेश के लिए कौन-सा दोहा उपयुक्त है ? आदि विषय इसमें हैं । ग्रंथ में मनोरंजक बातें हैं । इसके टीकाकार की गद्यशैली भी काशी के आसपास की अवधि और भोजपुरीमिश्रित भाषा है । नागरी-प्रचारिणी के खोज-विवरण में भी यह ग्रंथ उपलब्ध हुआ है । देखिए-खोज-विवरणिका (सन् १६२६-२८) पाठ ७३६, ग्रंथ-सं ४८४ क्यू, यह ग्रंथ उससे प्राचीन है । खोज-विवरण की प्रति का लिपिकाल है सं० १६१६ = १८५६ ई० और इसका है सं० १६११ = १८५४ ई० है । किन्तु नागरी-प्रचारिणी के अन्य खोज-विवरणों में उपलब्ध प्रति का लिपिकाल देखिये-सं० १७६५ खो वि० १६०३ सं० ८७६८ खो० वि० १६०६-८ सं० २४५ डी०) लि० का० १८२४ (खो० वि० १६०६-११ सं० २३२ एच०) (खो० वि० १६२३-२५ सं० ४३२) । सबसे प्राचीन प्रति सं० १७६५ की है ।

३. ग्रंथ में टीकाकार का नाम स्पष्ट नहीं है । कई स्थानों पर 'रामदास' नाम कई प्रकारों से आया है । यह नाम टीका में ही है । मूल ग्रंथ में नहीं, इससे प्रतीत होता है, टीकाकार का ही यह नाम है ।

४. लिपिकार श्री विहारीलाल जी ने अपना परिचय देते हुए ग्रंथ के अन्त में लिखा है:—

"शींथ कृस्न पुस्क लीषा बीहारीलाल सा० फौत्र्या प्रगने बिहिया जिले शाहाबाद कसबे आरे सूबे बिहार हाल मोकाम दहिश्रावा प्रगने माभी जिला सारन ॥" यह पोथी श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं क—१३० है।

६३. अनुरागवाग—ग्रंथकार—श्री दीनदयाल गिरि। लिपिकार—श्री संजीवन लाल। अवस्था—अच्छी; हाथ का बना कागज। पृष्ठ-सं०—४८। प्र० पृ० पं० लगभग—४४। आकार—७½"×१२"। भाषा–हिन्दी। लिपि—नागरी। रचना-काल—फाल्गुन, शुक्ल, ६ नवमी, सं० १८८८, (सन् १८३१) भौमवार। लिपिकाल—पौष, शुक्ल, ४ चतुर्थी सं० १९०६, (सन् १८५२)।

प्रारंभ—"श्री गणेशाय नमः ॥ अथ अनुराग वाग लिख्यते ॥ दोहा ॥
श्री पसुपति प्रिय पद पदुम प्रन औं परम पुनीत ॥
मंगल रूप अनूप छवि कविवर दानि सुगीत ॥ १ ॥

कवित ॥ विनसैं विघन वृंद द्वंद पदवंद तही मानि अरविंद जे मिलिंद परसत हैं ॥
ध्यावत जोगींद गुन गावत कवींद जासु पावत पराग अनुराग सरसत हैं ॥
भागैं दुरभाग अंगराग देषि दीनद्याल पूरन प्रताप पापपुंज धरसत हैं ॥
ज्यों-ज्यों ही पिनाकी तनै वक्रतुंड टांकी परै त्यों-त्यों कवि तके झुंड वाके दरसत हैं ॥ २ ॥

मध्य की पंक्तियाँ--पृष्ठ २४

"एक समै लिए गोहन ग्वालन मोहन चोरिकै षात दही ॥
ऊधवजू छल सों हरये हरि को जसुदा दो उवांह गही ॥
ऊषल बांधि दयो उर काछिन आंषिन तें जल धार वही ॥
सोतक सीर भई हमतें सुन जों उत यादि करै तो सही ॥ २७ ॥
अवधेस नरेस की प्रीति सही प्रिय के विनुप्रान पयान कियो है ॥
संग फूटत फूट से फूटो नहीं मम पाहन कूं ते कठोर हियो है ॥
हमतें वरु मीन प्रवीन वडो जलतें पल एक नहीं न जियो है ॥
अव ऊधो हहा वलवीर विछोहत क्यों विधि नामोहि धीर दियो है ॥२८॥"

अन्त--"पालिये गुपाल प्रभु मेरे प्रतिपाल।
कहो तिहूं लोक तिहूं काल दास प्रीति पाली जू॥
होयगी वड़ाई सरनागत के पालन में।
नातो हंसैंगे नर दै दै कर ताली जू॥

मोहनी मनोज की सरोज मंजु ओज।
भई कव धौं लपै हो वह मूरति विसाली जू॥
कृपा कुंभ लैकै कुस हृदैवाग दीनद्याल।
पालिये दसन दीस ये होवन माली जू॥ ३४॥
विनय षट पदावलि सुषद यह निति होय प्रकास॥
करो सुदीन दयाल गिरि वदन वरज मैं वास॥ ३५॥
यह अनुराग सुवाग मैं सुचि पंचम केदार॥
विरच्यो दीन दयाल गिरिवन माली सुविहार॥ ३६॥
सुषद देहली पै जहां वसत विनायक देव॥
पश्चिम द्वार उदार है काशी को सुरसेव॥ ३७॥
तहं निवास गनपति कृपा चूकि रहयो कवि पंथ॥
दीन दयाल गिरीस पदवंदि करयो यह ग्रंथ॥ ३८॥
मनि करनी सुरसरि सरन परि करि कियो प्रकासु॥
गति सरनी वरनी कविन महिमा धरनी जासु॥ ३९॥
वसुवसुवसुससिसाल मैं रितु वसंत मधुमास॥
राम जनम तिथि भौम दिन भयो सुवाग विकास॥ ४०॥
सुमन सहित यह वाग है यामै संत वसंत॥
सुषदायक सव काल मैं द्विज नायक विलसंत॥ ४१॥"

पुष्पिका में लिखा है—"इति श्री गुसाई दीन दयाल गिरि कृत अनुराग बाग सम्पूर्ण॥ संवत १९०९॥ मिति पूस सुदी ४। लि० सजीवन लाल कायथ बनारस षास महलै पियरी बड़ी।"

विषय—लक्षणग्रंथ। एकस्वर चित्रम्, लघुमात्रिक चित्रम्, वात्सल्य रस-वर्णन, ध्यानद्रुमावली, मंदस्मित सुमनावली, श्रवणदर्शनम्, स्वप्न-दर्शनम्, चित्रदर्शनम्, प्रत्यक्षदर्शनम्, दोलावली, मधुपुरीगमनसमये वात्सल्यरसपूरित जसोदावाक्यसरणी, षड्ऋतु वर्णन, गोपिकानाम् परस्परोक्ति, गोपिकानाम् तन्मयतावर्णन; राधातन्मयता आदि शीर्षकों में विविध छंदों और अलंकारों से युक्त रचना।

टिप्पणी—लिपि प्राचीन किन्तु स्पष्ट है। लिखने की शैली भी पुरानी है।

यह पोथी श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में है। पु० क्र० सं० क—१३१ है।

६४. गीतावली—ग्रंथकार—गो० तुलसीदास। लिपिकार—मोतीराम दूबे। अवस्था—प्राचीन, मोटा, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१०६। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार-६"×१२½"। भाषा—हिन्दी (अवधी)। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल— अगहन,शुक्ल-३, (सं० १८८३)।

प्रारंभ—"श्री गणेशायनमः ॥ श्री जानकीवल्लभो विजयते ॥
निलांवुजस्यामलकोमलांग सीतासमारोपितवामभागं ॥
पाणौ महासायकचारुचापं नमामि रामं रघुवंस नाथं ॥१॥
राग असावरी ॥
आजु सुदिन सुभधरी सुहाई रूप सील गुन धाम रामनृप भवन प्रगट भे आई॥
अति पुनीत मधु मास लगन ग्रहवार जोग समुदाई ॥
हरषवंत चर अचर भूमि सुरत नरुह पुलकि जनाइ ॥२॥
वरषहि विवुध निकर कसुमावलि नभ दुंदुभी वजाई ॥
सुनि दशरथ सुत जन्म लिये सब गुरजन विप्र वुलाई ॥
वेद विहित करि क्रिया परम सुचि आनंद उर न समाई ॥३॥
सदन वेद धुनि करत मधुर मुनि बहु विधि वाजु वजाई ॥
पुरवासिन्ह प्रियनाथ हेतु निज निज संपदा लुटाई ॥४॥
मनि तोरन वहु केतु पताकनि पुरीरचितकरि छाई ॥
मागध सूत द्वार वंदिजन जहं तहं करत वड़ाई ॥५॥"

मध्य की पंक्तियाँ–पृ० ५४ "॥ रागगौरी ॥
देखत चित्रकूटवन मन अति होत हुलास ॥
सीताराम लषन प्रिय तापस वृंद निवास ॥
सरित सुहावनि पावनि पाप हरनि पय नामा ॥
सिद्ध साधु सुर सेवित देति सकल मन काम ॥
मिटप वेलि नव किशलय कुशमित सघन सुजाति
कंद मूल जल थल रुह अगनित अनवन भांति ॥
वंजुल मुंजल कुल संकुल तरु वल तामाल ॥
कदली कदंव सुवंधक पाटल पनस रसाल ॥
भूरुह भूरि भरे जनु छवि अनुराग सुभाग
वन विलोकि लघु लागहि विपुल विवुध वनवाग ॥
जाइन वरनि रामवन चितवत वितहरि लेत ॥
ललित लताद्रुम संकुल मनहु मनोज निकेत ॥"

अन्त—"हति कवंध सुग्रीव सषा करि भेदे ताल वाली मारयौ ॥
वानर रीछ सहाय अनुज संग सिंधु बांधि जस विस्तारयौ ॥
सकुल पुत्र दल सहित दसानन भारि अखिल सुर दुष टारयौ ॥
परम साधु जिश्र जानि विभीषण लंकापुरी तिलक सान्यौ ॥
सीता अरु लछमन संग लीन्हे औ जिते सपाते संग आये ॥
नगर निकट वेवान आयो सवु नरनारी देषन धाए ॥
सिव विरंचि शुक नारदादि मुनि अस्तुति करत विमलवानी ॥
चौदह भुअन चराचर हरषित आये राम राजधानी ॥
मिले भरत जननी गुरपरिजन चाहत परम अनंद भरे ॥
दुसह वियोग जनित दारुन दुष रामचरण देषत विते ॥
वेद पुरान विचारि लगन सुभ महाराज अविषेक कियो ॥
तुलसीदास जिय जानि सुऔसर भगति दान तव-मागि लियो ॥३३०॥
इति श्री रामायणे विष्णुपद गीतावल्यां तुलसीकृत उत्तरकांड समाप्त ॥ शुभमस्तु ॥"

विषय—रामजीवन-सम्बन्धी रचना। विविध रागों में राम-कथा। ३३० पद, सात काण्ड।

टिप्पणी—१—ग्रंथ की लिपि-शैली प्राचीन, किन्तु स्पष्ट है। सर्वत्र 'ख' के लिए 'ष' और 'स' के लिए 'श' का प्रयोग लिपिकार ने किया है। ग्रंथ की पुष्पिका में—'इति श्री रामायणे विष्णुपद गीतावल्यां तुलसीकृत उत्तरकांड समाप्तं ॥ शुभमस्तु ॥

जो देषा सो लिषा ॥ लिषा मोतीराम दुवे ॥ शम्वत् १८८३ ॥ पोथी देवान साहेब सीताराम ॥ अगहन शुक्ल ५६३"

२—यह ग्रंथ नागरी-प्रचारिणी के खोज-विवरण में भी है। देखिए, ग्रंथ सं०-८७ की टिप्पणी। ग्रंथ मन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं०—क० १३३ है।

६५. रामचरणचिह्नप्रकाश—ग्रंथकार—श्री किंकर गोविन्द। लिपिकार — ×। अवस्था —हाथ का बना देशी कागज, प्राचीन। पृष्ठ सं०—११। प्र० पृ० पं० लगभग—१६। आकार—६½"× ११"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचना-काल—ज्येष्ठ, शुक्ल सं० १८६७। लिपिकाल — ×।

प्रारम्भ—"श्री गणेशाय नमः अथ श्री रामचरण चिह्न प्रकाश लिख्यते
श्री गणपति चरण सरण आए जे कविजन
अभिमत फलते हि दिएदेत है हे अजहपन
सुमिरि चरण सोइ चरण चिन्ह वरनत रघुवरके
सेइ जासु वहु संत रसिक पाए वहिघरके
पुनि भारती पदारविन्द एकाम धेनुवर
वंदितईं किंकर गोविन्द की बुद्धि विमल पर
जासो श्री कोशल नरेंद्र पद कंजु मंजुतर
चिन्ह चारु उर धरि विचारु वरनत उदारपर
श्री गुरु के पद कमल अति युगल मनोहर
तिमिर हरन दुष दरन सरन असरन करुनाकर
कोटि कोटि दंडवत शिर धरि धरनीतल
रामचन्द्र के चरण चिन्ह चित वहि वरनी भल"

मध्य की पंक्तियाँ—पृष्ठ ४—"अवध नगर के निकट धार उज्जल हुलसति है
जनु हरिपुर के जानहेतु नृपडगर लसति है
चलत कुपथ भरि जन्म एकवारहु पथ चाही
चढि पहुंचे हरिधाम काम पुरो नहि काही"

अन्त—"अथ हरि गीत छन्द ॥ वरने जु प्रथमहि अंक षोडश वामपद श्री रामके
तेइ सुदच्छिन जनक जाके लसत करुना धामके
पुनि अष्टदश शुभ अंक दच्छिन चरन श्री रघुनाथके
सिय रामपद पंकज लसत अति माथ नाथ अनाथके
यह चरन चिन्ह प्रकाश रघुपति अमल मति करि है सही
श्री राम चरन सरोज सुन्दरमधुपमन करि है वही
यह अति कठिन कलिकाल अति विकराल चाल हुते कही
जो सुन सुमिरत धरत उखर जनन पै व्यापत नही"

विषय—इस पुस्तक में रचयिता ने श्री राम के लिए नाना प्रकार के (चंचरीक, सुखद, सवैया, दोहा, हरिगीतिका आदि) छंदों में भक्तिभावपूर्वक अपने मनःसंकल्पों को साधु-भाषा में प्रकट किया है। कहीं-कहीं भक्ति-भावना में अतिशयोक्ति से भी काम लिया है। ग्रंथ में किसी दूसरे ग्रंथ के भी कुछ पृष्ठ और पद दिये हैं, जिनका सम्बन्ध रस-वर्णन से है।

"शैल सुता जगत गुरु पशुपति सुत निर्वान
विघन हरण शुभ सुख करण पदपूरन कल्यान ॥१॥
देवी पूजि सरस्वती पूज हरि के पाय
नमस्कार कर जोरि के कहै महा कविराय ॥२॥
जगदम्बे जननी जगत हो सुमिरों कर जोरि
आनन्द रस पूरण करो अच्चर परै न खोरि ॥३॥
प्रथम सिगारसुहास रस करुनारुद्र सवीर
भय विभत्स वषानिए अद्भुत धीर"

आदि से प्रारंभ करके "भयो शान्त कछु नीरतैं सत संग मिले सब भागि
चंदन सम जिनको वचन जगत दाघ उर जासु
सो सत संगत कीजियै हिय सुनित होत हुलास ॥७०८॥
सब रचना करता रचि करता रचना महि
सास सांस भूल्यौ नही तू क्यों भूल्यौ ताहि ॥७०९॥"
आदि पदों से समाप्त किया है।

प्रतीत होता है, यह ग्रंथ किसी वृहद् ग्रंथ का खंडित पृष्ठ है। इसकी अन्तिम पद-संख्या ७०९ है। किन्तु इस ग्रंथ में इसके केवल दो पृष्ठ मात्र हैं।

टिप्पणी—ग्रंथ की लिपि प्राचीन और अस्पष्ट है। ग्रंथ की पुष्पिका में—"इति श्री किंकर गोविन्द विरचिते श्री रामचरन चिन्ह प्रकाश संपूर्णम् ॥० श्री सम्षत १८९७ जेठ सुदी" लिखा हुआ है। लिपिकार का नाम ग्रंथ में नहीं है। ग्रंथ की भाषा पर 'अवधी' का तो प्रभाव है ही, यत्र-तत्र सधुक्कड़ी की भी झलक स्पष्ट है। यह ग्रंथ अबतक अप्रकाशित है। नागरी-प्रचारिणी सभा के खोज-विवरणों में भी इसकी प्राप्ति-सूचना नहीं है। ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क० १३४ है।

९६. सुदामाचरित्र--ग्रंथकार—×। लिपिकार--×। अवस्था—अच्छी, प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं० ६। प्र० पृ० पं० लगभग—१६। आकार—४"×८"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल--×। लिपिकाल--×।

प्रारम्भ--"श्रीमते रामानुजाय नमः ॥ कक्का कलजुग नाम अधारा ॥
प्रभु सुमीरौ भवतरौ पारा।
साध सगत करि हरि रस पीजै ॥
जीवन जन्म सुफल करि लीजै ॥१॥
खखा खोजो सकल जहाना ॥
जाको गावै वेद पुराना ॥
निरभै नाम हरि कौ लीजौ ॥
चरन कमल को ध्यान धरीजै ॥२॥
गगा गुन गोविंद कौ गावौ ॥
माया जाल भुलि जनि जावै ॥................॥"

अन्त—"वारषठीज्ञा गुन गाऊं ॥
सव संतन को सिस नवाऊं ॥
दीन पती हि सदा सुषदेवा ॥
नमस्कार करो गुरु देवा ॥ इति श्री सुदामा......
तिनक पुत्र होय कल्याना
तीन लोक मै भयो अनंदा ॥
जय जय करत सकल सुरवंदा ॥
राम रतन जीन कीरत गाई ।
हीरदे सीयाराम सदा सुष दाई ॥
संत जनन मिल कीरति गाई ॥
तुलसीदास चरन चित लाई ॥"

विषय—वर्णमाला के प्रथम अक्षर को प्रारंभ में रखकर पद्य-रचना और सुदामा को माध्यम बनाकर भगवान् की स्तुति।

टिप्पणी—ग्रंथ के प्रारंभ या अन्त अथवा पुष्पिका में ग्रंथकार और लिपिकार के नाम का संकेत नहीं है। ग्रंथ की लिपि और कागज यद्यपि प्राचीन है, किन्तु ग्रंथ में कोई काव्यचमत्कार नहीं है। ग्रंथ मन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क—१३५ है।

९७. **रसिकविनोद**—ग्रंथकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—४२। प्र० पृ० पं० लगभग—८। आकार—६½"× ६½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—चैत्र शुक्ल ८, रविवार—सं० १९०६ वि०; १८५२ ई०।

प्रारंभ—"श्री रामानुजाय नमः श्री गणेशाये नमः श्री जानकी भल्लभाय नमः ॥

सोरठा ॥

पिंगल मे नहि हो सको काव्य रीति जानी
नाहि मोहि तुम्हार भरोस श्री विदेह नृप नदिनी ॥१॥
औगुन विस्वाबीस जद्यपि गुन एको नही।
सीय पद धरि सीस प्रेम सषी कहै यथा मति ॥२॥

कवित्त ॥

चंचला सिगरी तजिकै थिर थैर हुते यह बात भली है ॥
सेउ सिया पद पंकज धूरि सजीवन भूरि विहार थली है ॥
वारहिवार सिषावत है अपने मन को यह प्रेम अली है ॥
ठाकुर राम लला हमरे ठाकुरान श्री मिथिलेसलली है ॥१॥"

मध्य की पंक्तियाँ–पृष्ठ २१

"कल्पलता के सिद्धिदायक कल्पतरु कामधेनु कामना के पूरन करन है ॥
तीनि लोक चाहत कृपा कटाच्छ कमला की कमला सदाइ जाकि सेवत सरन है ॥
चिंतामनि चिंता के हरन हारे प्रेम सषी तीर की जनकवर वारिज वरन है ॥
नष विधु पूषन समन दूषनये रघुवंस भूषन के राजत चरन है ॥२२॥"

अन्त–बरवै "सिया बोलाये सषा सहित अनुराग ॥
दै असीस पट भूषन उचित विभाग ॥१॥
लछिमन कहि रिपु दमन स्वस्ति सुखमूल ॥
पट भूषन पहिराय जानि समतूल ॥२॥
चले चंठि मन मुदित छुधित मन नैन ॥
सियारूप उरधारि राम सुष औन ॥३॥
सषिन कहयौ पठय करि फागु अवदेह ॥
विहसि कहयौ रघुनाथ जथारुचि लेह ॥४॥
मागत यह करजोरि सिषा सियानाह ॥
प्रेम सषी हिय वसहु दिये गलवाहु ॥५॥
संपूर्ण यह छविमगन रसिक जन पूरन काम
जन्मलाभ जगमाह यह भजिये सीयराम ॥६॥"
शुभमस्तु ॥

विषय—राम और सीता के परस्पर प्रेम तथा सखी-सहेलियों के साथ सीता के अनुराग का वर्णन। राम-जीवन-सम्बन्धी मुक्तक रचना तथा भक्तिभावपूर्ण भजन। सवैया, बरवै, दोहा आदि विविध छंदों का प्रयोग।

टिप्पणी-१—यह ग्रंथ अप्रकाशित तथा महत्त्वपूर्ण है। कहीं-कहीं ग्रंथकार ने बड़ा ही कवित्वमय वर्णन किया है। देखिये—

"नाभी की निकाइ जाति कौन पइगाइ जाते
उपज्यौ विरंचि जो पसारे जग जाल है ।।
रूप सुधावापी सी विराजत गंभीर धीर
रोमन की राजी पै सुछप सेवाल हैं ।।"

पृष्ठ सं० १६ में, सीता-सौन्दर्य तथा शृंगार-वर्णन के प्रसंग में प्रस्तुत कल्पना की गई हैं, ग्रंथ अनुसंधेय है।

२—ग्रंथ की लिपि अत्यन्त प्राचीन और पृष्ठ जीर्ण-शीर्ण हैं। कहीं-कहीं अक्षर घिस गये हैं। यद्यपि ग्रंथकार के नाम का उल्लेख ग्रंथ में नहीं है, तथापि प्रतीत होता है कि ग्रंथकार का नाम रघुलाल था और ये मिथिला के राजा रामलाल ठाकुर के आश्रित थे। ग्रंथ प्रारम्भ करते हुए उन्होंने लिखा है—

"ठाकुर रामलला हमरे ठकुरान श्री मिथिलेसलली है।"

(देखिये 'प्रारम्भ की पंक्तियाँ' शीर्षक में उद्धृत कवित्त) और—

"धराये धरत पाय नैन तरसाय उठे
भूमे प्रतिबिंवन की फैलत ललाइ है २
नूपुर की झालर रेज राउरजोति हीरन की
देषि प्रेम सखी ताकी उपमा बताइ हैं ॥
आइ रघुलाल की पठाइ पाय गही रही
संध्याराग रंजित नवत संग ल्याइ है ॥३॥" (देखिये पृ० २)

ग्रंथ की पुष्पिका में भी ग्रंथकार अथवा लिपिकार के नाम आदि का कोई भी संकेत नहीं है। केवल "शुभमस्तु चैत्र मास शुक्ल पक्षे अष्टम्यां रविवासर शमत् १६०६" लिखा हुआ है। ग्रंथ अनुसंधेय है। 'रामलाल' नाम ग्रंथ के मध्य में भी कई स्थानों पर प्रयुक्त हुआ है। ग्रंथ मन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क०--१३६ है।

६८. **रामचन्द्रिका**—ग्रंथकार—श्री केशवदास। लिपिकार—×। अवस्था-अच्छी, प्राचीन, देशी कागज, सम्पूर्ण। पृष्ठ-सं०—३७। प्र० पृ० पं० लगभग—१६। आकार—५"×६½"। भाषा--हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल-कार्तिक, शुक्ल, बुधवार संवत् १६५८ वि०। लिपिकाल-×।

प्रारम्भ—"सुभ सुरजकुल कलस नृपति दसरथ भय भूपति
तेनके सुनि सुत चारि चतुर चित चारु चारुमति
रामचंद्र भुवचंद्र भरथभारथ भुव भूषन
लछिमन अरु शत्रुघ्न दीरुदावानल दहन
सरजु सरिता तरनगरवसै वर अवध नाम जस धामधर
अघअौघ विनासी सर्व पुरवासी अमर लोक मानहु निगर"

मध्य की पंक्तियाँ—*पृष्ठ १८*

॥ श्री रामचर्चरी छंद ॥

व्यौम मै मुनि देखिय अति लाल श्री सुषसाजही
सिंधुमै वडवाग्नि की जनु ज्वाल माल विराजही
पद्मरागनि की किधो दिव धूरी पूरित सी भई
सुरवाजीन की धुरी अति तिछतातिन्ह को हई

॥ सोरठा ॥

मुनि चढो गगना तरु धाई दिनकर वानर अरुन मुख दीनों झुकि कहरा
सकल तारका कुसुमवन"

अन्त— ॥ मधुभारछंद ॥

"दसरथ जगाई चले रामराई दुंदुभी बजाई
विजय तारका तारि सुवाहु संघारि कै
गौतम नारिको पात पठाऐ चाप हवोहर को
हठि के सवदेव अदेवहु तो सबुहारो
सीतहि व्याहि अभीत चले गिरि गर्व चठे भृगुनंद उतारो
श्री गरुड़ध्वज को धनु लै रघुनंदन अवधपुरी पग धारो ५५"

विषय—रामजीवन-सम्बन्धी प्रसिद्ध काव्य। रामायण का वर्णन। पृष्ठ १ से ३७ तक

टिप्पणी-१—ग्रंथ के प्रारंभ में कवि-परिचय और ग्रंथ-रचनाकाल, राजा इन्द्रजित सिंह के अनुरोध आदि से सम्बंधित कुछ पद लिखे गये हैं।

कवि ने ग्रंथ-रचनाकाल के सम्बन्ध में लिखा है—

"सोरह सै अठावना कातिक सुदि वुधवार
रामचंद्र की चंद्रिका तव लीन्हौ अवतार।"

अपने वंश के सम्बन्ध में कवि लिखते हैं—

"सुनाट्य जाति गुनाढ्य है जगसिध सुध सुभाव
कृष्ण दत्त मसिंध है हत मिश्र पंडित राव

गनेस सो सुत पारयो बुध काशीनाथ अगाध
असेष सास्त्र विचारि कै जिन्ह जानियो मति साध
दोहा
उपज्यौ तिनके मंद मति सुत कवि केसव दास
रामचंद्र की चंद्रिका कीन्है विविधी प्रकास ५"

प्रस्तुत ग्रंथ के मंगलाचरण में (कुछ पद) अन्य प्रतियों से विशेष लिखे गये हैं।

२—ग्रंथ की लिपि अस्पष्ट और प्राचीन है। लिपिकार और लिपिकाल का पता नहीं चलता है। यह ग्रंथ नागरी-प्रचारिणी के खोज-विवरण में भी है। देखिये विवरण—ग्रंथ-संख्या–५६। ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर, गया में सुरक्षित हैं। पु० क्र० सं० क०–१३७ है।

६६. **सीलकथा**—ग्रंथकार—श्री भारामल। लिपिकार—×। अवस्था प्राचीन, देशी कागज, संपूर्ण। पृष्ठ-सं०—३८। प्र० पृ० पं० लगभग–२०। आकार—५½"×६½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—ज्येष्ठ, कृष्ण ५ सं० १६५३; सन् १८६६ ई०।

प्रारंभ—ऊंनम सिद्धे भ्यः॥ अथा सीलकथा लिख्यते॥ दोहा॥
"पार्सनाथ परमात्मा वंदौ श्री जिनराइ॥
मो हिय मै वासन करौ कहौ कथा विलगाइ॥१॥
चौपदी॥
प्रथमहिं प्रनमौ श्री जिनदेव॥ इंद्र नरिंद्र करै तुवसेव॥
तीन लोक मैं मंगल रूप॥ ते वंदौ जिनराज अनूप॥२॥
पंच परमगुर वंदन करौं॥ कलंक जिन मैं हरौं॥
वंदौ श्री सरस्वती के पाई॥ वंदौ मनवच श्री मुनिराई॥३॥
सील कथा जो कहौं वषान॥ सील वंदौ जग मै परधान॥
सील समान अवर नहिं जान॥ सील हितै जपतप व्रमान॥४॥
सील विना निरफल अधिकार॥ सील विना उठौ व्येवहार॥
सील प्रतग्या जोमन ल्याय॥ सरस कथा जाकी जह भई॥५॥"

मध्य की पंक्तियाँ—पृष्ठ १८
"देषौ सील तरौ पर भावै॥ जाकौ कोउ नहि भय उपजावै॥
फिर मनु गाढ़ौ जब कीनौ॥ उरपंच परम गुर लीनौ॥६८॥"

अन्त—"जाघर सील धुरंधर नारी॥ जाघर सदा पवित्र विहारी॥
जाघर विभाचारनि त्रिय होई॥ ताघर सूतक सदा किसोई॥६३॥

तातैं सुनौ सवै नर-नारी ॥ करि ऐ सील प्रतिग्या भारी ॥
सील समान अतर नहिं कोई ॥ सीलहिं सारजग में सोई ॥६४॥
सील कथा जव पूरन भई ॥ भारामल प्रगट करकही ॥
भूल-चूक अछिर जो कोई ॥ पंडित सुद्ध करौ सब कोई ॥६५॥
मो मतिहीन जु है अधिकार ॥ सुनियौ बुधजन सव नरनार ॥
पढ़ैं सुनै अव जौ मनलाई ॥ जन्म-जन्म के पातिक जाई ॥
दुष दरिद्र सव जाई नसाई ॥ जो जह कथा सुनै मन लाई ॥
ताकौं श्री जिन करै सहाई ॥ जो जह सुनै चतुर मन लाई ॥
तो पावहि सुख अधिकाई ॥६६॥"

दोहा

"सीलकथा पूरन भई पढ़ैं सुनै नित सोई ॥
दुउष दरिद्र नासै तवै तुरत महासुष होई ॥७०॥
विच विचकीनौ दोहारा चंद सोरठा गाई ॥
भारामल प्रत कौ सरन दास किनो खनाई ॥५७१॥
ईति श्री भारामल कृत सीलकथा संपूर्णः ६॥ मिती जेष्टवदी ५ ॥
वि० संवत १६५३ ॥"

विषय—कौशल देश में वैजयंती नामक नगर में पद्मसेन नाम का एक राजा निवास करता था। उस नगर में 'महिपाल' नामका एक सेठ भी रहता था और वह बहुत धनवान् था, उसके पास छियानवे करोड़ दीनार थे। उसके 'वनमाला' नामकी स्त्री थी। उसे एक पुत्र हुआ। अनेक उत्सव और मंगलाचार के बाद उसका नाम 'सुखानन्द' रखा गया। उसने अनेक शास्त्रों और अनेक विद्याओं का अध्ययन किया। पढ़-लिखकर घर लौटने के बाद सेठ को उसकी शादी की चिन्ता हुई। मालव देश के उज्जैन नगर में 'महीदत्त' नामक एक सेठ निवास करता था। उसके 'श्रीमती' नामकी पत्नी थी। उसने अपनी पुत्री का नाम 'मनोरमा' रखा। वह रूपसंपन्ना, विविध-कला-निपुणा, सुरकन्या जैसी थी। सेठ ने उसे खूब पढ़ाया-लिखाया। जब वह सोलह वर्ष की हुई, तब सेठ जी को उसकी शादी की चिन्ता हुई। सेठ जी ने निश्चय किया कि जो मेरे समान धनवान् होगा उसीके साथ पुत्री की शादी होगी। सेठ के पास बारह करोड़ दीनार की माला थी। उसने निश्चय किया कि जो इसे खरीदेगा, उसके साथ पुत्री की शादी करूँगा। ब्राह्मण और

दूत उस माला को लेकर देश-देशान्तर घूमने लगे। घूमते-घूमते वे लोग कोसल देश पहुँचे। उस नगर की शोभा और धन-संपन्नता से उन्हें आशा हुई। वे 'महिपाल' सेठ के पास पहुँचे। अनेक प्रकार की बातें, विविध घटना। माला का लुप्त होना। 'सुखानंद का उज्जैन आना। अन्त में विवाह। इसी कथा का विस्तार इस ग्रंथ में है। अन्त में घर की चिन्ता, धन की चिन्ता से वह (सुखानन्द) व्याकुल होकर पत्नी को छोड़कर देशाटन के लिए निकल जाता है। उसके पीछे में 'मनोरमा' ने अपने नारीत्व की रक्षा किस प्रकार की है, ग्रंथकार ने इस रचना में इसी की विवेचना की है।

टिप्पणी-१—ग्रंथ की भाषा पर 'राजस्थानी' का प्रभाव है। साहित्यिक दृष्टिकोण से ग्रंथ विवेच्य है। ग्रंथ अप्रकाशित है। ग्रंथकार भी अश्रुतपूर्व हैं। इनकी अन्य कोई रचना नहीं मिली है।

२—ग्रंथ की लिपि अस्पष्ट और प्राचीन है। ग्रंथ मन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क०—१३६ है।

१००. **विनयपत्रिका**—ग्रंथकार—सूरदासजी। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, मोटा देशी कागज, खंडित। पृष्ठ-सं०—३२०। प्र० पृ० पं० लगभग—३६। आकार—६"×१०"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"अलिकुल गंजन रति रस रंजन नैन अंजन हीन
क्रीडत सुधा सरोवर महिमा मानो मनसिज को मीन
पिय त्रिखमोचन रति रसलोचन चंचल लोचन चारु
कुँअरि किसोरि चकोर............................."

मध्य की पंक्तियाँ—पृष्ठ १६०—"माइरी होवति वलियार रभकनकी
सरस हिंडोर डुलावत लाल नवल रंगीली अति अभिराम
सोहत लारी सुहीवाम धरकत उर मुकुता मनिदाम
छलक परत ग्रीवा छवि चाम
गुहि वेंनी सुठि सुफर सोहाति नाना रंग पुहुपनि कीपांती
सोभित पाछें आछि भांति रूपलता मानो फलि हुलसति"

अन्त—नट "दुती हुई स्याम....और कछु मुख कहतवानी तहा वैठी जाइ
....
...............सुर प्रभु आतुर पठाइ करनीमन अवलेइ"

विषय—कृष्ण-जीवन से सम्बन्धित बाललीला, गोपियों के साथ विहार, कंससंहार, पूतनावध आदि से सम्बन्धित भक्ति-भावना से पूर्ण विनय के गेयपद। पृष्ठ १ से ३२० तक ८४० पदों में समाप्त।

टिप्पणी-१—यह ग्रंथ सूरदासरचित है। सूरदासजी कृत 'विनयपत्रिका' अभीतक उपलब्ध नहीं हुई है। इस ग्रंथ के आरम्भ के ३ पृष्ठ खंडित हैं।

२—ग्रंथ की लिपि अत्यन्त प्राचीन होने के कारण अस्पष्ट है। ग्रंथकार और लिपिकार तथा काल आदि का उल्लेख ग्रंथ में नहीं है। यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क-१३८ है।

१०१. **वामविलास**—ग्रंथकार—श्री बैजनाथ कवि। लिपिकार—गुलाम सिंह। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज, संपूर्ण। पृष्ठ-सं०—१४१। प्र० पृ० पं० लगभग—१४। आकार—४½" × ७½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—माघ, शुक्ल, पंचमी सं०-१६३४। लिपिकाल—माघ कृष्ण चतुर्दशी, सोमवार सं० १६२८ वि०, सन् १८७१ ई०।

प्रारम्भ—"श्री गणेशाय नमः ॥ अथ वाम विलास लिख्यते ॥ दोहा ॥
जै लंवोदर गजवदन ॥ असरन सरन हमेस ॥
विघ्न हरन सव सुष करन ॥ सोइ करद गनेस ॥१॥

कवित्त

कुलिस समान मेरु विधन विनासिवे
मैका कनन अमंगल कुठार ह्वैं विदारे हैं ॥
हारे ताप सकल अनेक सित भानु ह्वैं
के अरित मनासिवे मै भानु से निहारे ह्वैं ॥
दावानल दारिद दवाइवे मे मानो
धन भने वैजनाथ आस रावरी विचारे है ॥
परम पुनीत औ प्रताप मान लौ प्रवीन
सुंदर रदन गननायक तिहारे है ॥२॥"

मध्य पृष्ठ की पंक्तियाँ—७०—अथ दूती—यथा दोहा
"दंपति के सुष......अति प्रवीन सव भांति
दूती तोहि वषानहीं कवि कोविद शुभ कांति ११

कहि उत्तम मध्यम अधम तिनि दूतिका भेद
हित कहि हितकरि उत्तमा मध्यम कहि हित षेद १२
अधमा अनहित कहि सदा कहत सयाने लोय
और यवनियों आदि सव उत्तमाहि मे होय १३

उत्तमा दूती मथा

कोकिल की कूकनि सी वोलनि मधुर जाकी
चंद्रमासे वदन निलोकि छवि वाकी है
कोमल कमल से विलोचन विरागि रही
मीन मृग खंजन सी चितवनि ताकी है
भने वैजनाथ दंत पंगति विकासि रही
दाडिम विजैनकली कुंद छवि छाकी है
वंनिता वसंत की वहार वनि वैसी
तहां चलु वनमाली वन हेरु वोरवाकी है १४"

अन्त— दोहा

"मुकुट कमल मुगदर चँवर, चक्र ढाल तलवार।
धनुषवान तिरसूल कहि, अंकुस वहुरि कुठार १७
कंकन रसना कूर्म पुनि, मोर धरनि धर हाल।
पुनि कपाट कहि अश्वगति, त्रिपदी वहुरि पहार १८
इति श्री मद्जगत जाहिर प्रतापावली बाबू सीतारामाज्ञानुसारेन सुकवि दिनेशात्मज वैजनाथ विरचिते वामविलासे पंचधा विरहवर्नन नाम ऐकादशऽउल्लासः ११ समाप्तः शुभंमस्तु लिषा सुर्म गुलाम सिंह सोहनीवासी जिला जउनपुर आज्ञानुसार श्री ब्रह्ममूर्ति वैजनाथ कवि संवत १६२८ माघ कृष्ण चतुर्दश्यां भौम वासरे सांयकाले समाप्तोयम्।"

विषय—पृ० १ से ७ तक (पद्य सं० १ से २४ तक) मंगलाचरण, राजवंश-वर्णन और ग्रंथ की भूमिका—

"भनै वैजनाथ वावू सीताराम तेरी कीर्ति
कैधौं शंभु अंगजानि भसम लगायो है...............
और भनै वैजनाथ वावू सीताराम तेरो ज्ञान
गौरव वड़ाई से सारदा गनेस से" से प्रारम्भ करके

× × × ×

आठ सुअन सियराम के आठहुं वुद्धि अगाध।
दया दान विद्या-निपुन, निपुनराम अवराध॥

..................................गुरु बकस लाल।
अति चित दयाल......छंदलाल हरफंद जेचे जानत जग
व्यावहार।
......रेवतलाल कृपान लिये कर जब साजि चढ़त तुरंग॥
....नौवतलाल सिकारहेत जव करि उमंग
सहजहु कहत...................सीताराम रावरो
सुवन वलिरामलाल भावी भूत वर्त्तमान ऐसो को जहान है......
मुकुट सहाय पै सहायक...शंकरदयाल" तक राजवंश-वर्णन है।
पृ० ७ और पद्य २० से दानवर्णन और नायक लक्षण, नायिका-वर्णन आदि।

टिप्पणी—१—ग्रंथ अनुसंधेय है। अभीतक अप्रकाशित है। ग्रंथ प्रारम्भ करते हुए कवि ने रचनाकाल की ओर संकेत किया है—

"जहाँ नृत्य वहुगीत वहु वहुरि कवित्त निवास॥
वैजनाथ वरनत तहां सुदर वाम विलास।
गुनिये गुन ब्राह्मन सिषा रस सशि संवतचार
माघ शुक्ल श्री पंचमी भयो ग्रंथ अवतार।"

२—ग्रंथकार ने ग्रंथ के विषय को प्रारम्भ करते हुए नायक का लक्षण लिखा है—

"जाहि लषे हुलसत हियो, पूरन रस को चाह।
ताहि बषानत नाइका सुकविन के समुदाय॥२६॥"

यथा-कवित्त

"हाटक जाहिलषे न सुहात
रुचपक केतकि केतिक कांत हैं।
ऐसिहि वेलि नवेलि लता लषि
मेलि हिये दुष जेति विशांत है।
चंदन चंदन है मुष की सरि
नैननि को लषि ऐनि लजात है।
कोविन दाम नही विकि जात
कहो जगमे इनको लषि गात है। २७

दोहा॥

चंपक केतक केतकी, हाटक हटत अपार।
लष तनमन काको लटत, को असहै संसार॥२८॥"

३—ग्रंथकार जौनपुर जिले के बादशाहपुर निवासी बाबू सीताराम के आश्रित थे। इनके पिता श्री दिनेशजी भी सुकवि थे, जैसा कि ग्रंथ की 'पुष्पिका' से स्पष्ट है।

४—ग्रंथ का समयसूचक दोहा अस्पष्ट प्रतीत होता है। दोहे से ग्रंथ का रचनाकाल सं० १७३४ होता है, किन्तु ग्रंथ के लिपिकार ने लिपिकाल सं० १६२८ बताया है और लिखा है कि कवि की आज्ञा पाकर ही लिपि की गई है।

ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क०—५३ है।

१०२. रामरसार्णव—ग्रंथकार—श्री दलेल सिंह। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज, जीर्ण-शीर्ण। पृष्ठ सं०—३६१। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार—५"×१०"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचना-काल—×। लिपिकाल—×।

प्रारंभ—"श्री गणेसावा नमः ॥ दोहा

गुरुदिज गनपति रामह विहर गौरिदास,
चरन कमल रजसिस धरि कहन चहो इतिहास ॥
हरि चरनोदक वर्भ मै हरिह रतन के षानि,
नाम दरस जल सुन्नदा जगत जननि मृदुवानि ॥
गंगादिक तिरथ सकल ब्रभादिक सुरविंद,
वेद आदि विदवा सभै नारद आदि मुनिन्द ॥
नृप पर उपकारि जिते युव आदिक रतनित,
करो दंडवत सभनिकह सविनव सभै सप्रीत ॥
वरषा हरिगुन हलकि कवि, सालि सुग्रंथ अपार,
उनछ विर्ति लै कहत हो निजमत के अनुसार ॥
बुध गुर जन सज्जन चरन, वंदि कहो करजोरि।
जग मंगल गुनवरनि कै यहो हिन मति भोर ॥
करो यथा मति हरि कथा रामरसार्नव नाम
......भि अध आषर सोधिओ, जानिदास विनदास ॥"

मध्य की पंक्तियाँ—पृ० १८० दोहा

"करि अस्तुति भृगु वंसमनि, कहेउ जोरि जुग पानि।
जेहि विधिवर प्रभु तेल है, सुनुहु सो कहा वषानि ॥

चौपाइ

पुरवधक तिरथ महजाइ, हरिहित महा कठिन तव लाइ।
प्रगटे जग मंगल स्रुति सारा, कहेउ भवउ तप सिद्धव तोहारा॥
सत्रु हेतु कीन्हेउ तप भारी, वधहु जाऐ छत्रि जत भारी।"

....

अन्त—"सुनि रघुनाथ बिभिषन बानी, नीति प्रताप विरति मति सानी।
भऐ तुस्ट जग मगल धामा, वर मागहु भाषेउ श्रीरामा॥
कहेउ विभिषन महि धरी माथा, निज पग भगति देहु रघुनाथा।
एवमस्तु भाषेउ रघुनायक, असत दवन संतन्ह सुषदाऐक॥
पुनि प्रभु कहेउ सुनहु मनलाइ,.................................।
....॥
का हमकरिहहि राम सहाइ तुअ पीछे रहहि कपिराइ॥
समघर रहहि राम ऐह... ....॥
....॥"

विषय—इस ग्रंथ में २१ तरंग या प्रकास (अध्याय) हैं। प्रथम, द्वितीय और तृतीय में कमठ, मीन आदि रूपों का वर्णन (पृ० ८ से ४६ तक); चतुर्थ तरंग में वराहचरित्रवर्णन (पृ० ४७ से ६० तक); पंचम तरंग में—नरहरि चरित्र कथनम् (पृ० ६१ से ७३ तक); षष्ठ तरंग में भी—नरसिंहचरित (पृ० ७४ से ६० तक); सप्तम तरंग में—हरिविराटरूपदर्शनम् (पृ० ६१ से १०६ तक); अष्टम तरंग में—वामचरित्रवर्णनम् (पृ० ११० से ११६ तक); नवम तरंग में—परशुरामचरित्र (पृ० ११६ से १३४ तक); दशम तरंग में—रामचरित्रवर्णनम् (पृ० १३४ से १४६ तक); एकादश तरंग से २१ तरंग तक रामकथा का विस्तृत वर्णन (पृ० १४६ से ३६१ तक) कथा-प्रसंग में, ध्रुव, अहल्या, निषाद, विभीषण, जनक, सुग्रीव आदि के जीवन पर अच्छा प्रकाश डाला गया है।

टिप्पणी-१—ग्रंथ अप्रकाशित है। अनुसंधेय है। ग्रंथकार की भाषा पर तुलसी के रामचरित मानस का तो प्रभाव है ही 'अवधी' के अतिरिक्त 'मगही' का भी प्रभाव है। प्रारंभ में पृष्ठ १ से ७ तक मंगलाचरण के बाद कवि ने अपना परिचय, वंश-विस्तार तथा ग्रंथ-रचना-प्रयोजन को दिखाया है। कवि ने अपने सम्बन्ध में—

"भजनते सुक नारदादिक संख्य अरजुन पाइआ,
प्रभु प्रनत हीत दलसीघ भूपति मोहवस बिसराईआ"
और—"कौन गरिव नेवाज, सीव समान अवढर ढहन।
अवुध अधम सीरताज, नृपदलेल जाके सरन॥" लिखा है।

२—ग्रंथ को प्रारम्भ करते हुए भूमिका में
"ग्वानरक मैं प्रेम विहिना, ताते उनछविर्त्रि- प्रिन लीन्हा।
तसुलछन मे कहो विचारी, सुनहु साधु बुध प्रउपकारी॥
कृषि काटि प्रथम ले जाइ, ताप्र लेहि दीन्ह जन आइ।
तेहि पिछे पछीगन षाही, भषि भषि निज इछवा उडि जाहि॥

दोहा
तापाछे दीन्ह अतमै आऐ चुनही जे धान,
ऐहि वीध जे वोदर भरे उनछवीर्ति तहिजान॥"

॥ चौपाई ॥
तेहि वीध राम रसानव भनी है, गुरु के कृपा सपुरन करी है।
करो प्रनाम साधु के चरन ही, जीन्ह के गुन अंन्त बुधवर नहीं॥
तीन्ह के गुन संछेपहि भाषौ, संतत जासु कृपा अभीलाषौ।
कृपा जुगुत वर्जितसम दुषन, छेमासील नियम सत्व विभूषन॥
समता दवा सर्व उपकारक, प्रेम........घन पर दुषहारक।
मृदुसुधि सान्त दान्त धुतिमाना, नीरवीकार करुना मतिसाना॥
प्रउपकार दछ मित भोगी, सवाधान सदगुन को षोजी।
आयुष्मान मानपर दाता, अनघ अवध करयेउ विधाता॥
समदमनी अम नीपुन समकरनी, सुषद सहीस्तु वेद वीध वरनी।
लोभ रहित स्रोता अरु वकता, हरीजन सजन भजन अनुरकता॥
वड़े भाग मानुषतम लहइ, जो तन सुर दुरलभ सुधी कहई॥"

तुलसी से प्रभावित यह रचना है। ग्रंथ-रचनाकाल के सम्बन्ध में राजादलेल सिंह ने एक संदिग्ध संकेत किया है—"नभहर मुखदिन...क्दिग संवते संषावादीन्ह, माघ अगहन दुजसीत कथा अरंभन कीन्ह।" लिखा है। इससे सं० १७३० वि० अस्पष्ट रूप से सिद्ध तो होता है, किन्तु स्पष्ट रूपेण नहीं कहा जा सकता है।

अपने विषय में कविने कहा है "राम सीघ त्रीप के· तने राम भगत के दास; करनपुर पति भगयतजी कीवो रामढ़वास।" इससे सिद्ध होता है कि इनके पिताजी का नाम 'रामसिंह था और 'राम भगता नामक इनके गुरु थे। कुल ५८४ दोहों में ग्रंथ समाप्त हुआ है। चौपाई, सोरठा, सवैया के अतिरिक्त निसिपालिका, मोतीदामद और परमानिका आदि विविध छंदों के प्रयोग हुए हैं। भाषाविज्ञान के दृष्टिकोण से भी ग्रंथ ध्येय है। श्री पदुमनदासजी ग्रंथकार के ही आश्रित कवि थे। उनके दो तीन ग्रंथ इस विवरणिका में हैं। दोनों के ग्रंथों के प्रकाशन से 'मगही साहित्य' पर प्रकाश पड़ने की संभावना है।

२—ग्रंथ की लिपि अस्पष्ट और प्राचीन है। पृष्ठ जीर्ण-शीर्ण हैं। साथ ही यह खंडित भी प्रतीत होता है। यह ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर, गया में सुरक्षित है। पु० क्र० सं० क० ७०६ है।

१०३. राधासुधानिधि—ग्रंथकार—श्री सुखलाल। लिपिकार—×। अवस्था—जीर्ण-शीर्ण, सभी पन्ने फटे-बिखरे। कागज-प्राचीन तथा देशी, खंडित। पृष्ठ-सं०—१७१। प्र० पृ० पं० लगभग—२२। आकार—६"×५$\frac{1}{8}$"। भाषा—हिन्दी लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारंभ—....."श्री सुषलाल कृपा करी दियौ मंत्र तिहिकाल ॥३॥
नवल किशोरी मोरीहित गोरी सषिहरिजीय,
कुंजरवन कृष्ना निकट कृत दै श्री सुषप्रीय ॥४॥
रौंम रौंम मै रमिरहे हित अछर श्री सुष रूप,
श्री सुषमंडलि दीजियै वूडौचित्त रसकूप ॥५॥
तुलसी अपनी जानिकै हित सुषलई बुलाइ,
निज मंदिर की टहल मै प्रिया चरन पर''''इ ॥६॥
·······प्रियासुधा निधि श्री तहां तामै दई बुडाइ ॥७॥"

मध्य पृष्ठ की पंक्तियाँ ८०—"(मूल) श्यामा मंडल मौलिमंडन मणिः, श्यामानुराग स्फुर द्रो–
मोद्भेद विभाविता कृति रहो काश्मीर गौर छविः ॥
साती चोन्मदकामकेलितरला मां पातु मंदस्मिता,
संदारद्रुसकंज मंदिरगता गोविन्दभट्टेश्वरी ॥१२१॥

(भाव) ॥ दोहा ॥

श्यामा मंडल मुकुट मणि कृष्ण राग बहु भांति,
रोंम भेद अंगनि लसैं अद्भुत मूरति कांति ॥१॥
के सरिसी छवि अंग की कुंज कल्पद्रुमवेलि,
मंदस्मित सोभित रहैं अद्भुत करत सुकेलि ॥२॥"

अन्त—"अद्भुत आनंद लोभ होइ नाम सुधानिधिसार,
श्रोत्र पात्र सौंपिवो नित श्री बुधवंत विचार ॥
इति श्री मत राधा सुधानिधि भाषा सहित संपूर्णं ॥"

विषय—राधासुधानिधि, नामक संस्कृत ग्रंथ का भावानुवाद (पद्यात्मक)। राधा और कृष्ण का शृंगारात्मक वर्णन। उत्तम साहित्यिक रचना। लेखक ने प्रारंभ में अपना सम्बन्ध श्री हित हरिवंश जी से दिखाया है और अपने आपको उनका शिष्य अथवा उनके मंदिर का एक साधारण दास बताया है। प्रारंभिक भाग खंडित होने के कारण प्रारंभ की पंक्तियाँ पृष्ठ २ से दी गई हैं। ग्रंथकार ने अपने को कहीं 'सुषलाल' कहीं 'सुषराम' कहा है। २७० पदों में ग्रंथ संपूर्ण है।

टिप्पणी १—ग्रंथ अनुसंधेय है। यदि ग्रंथकार प्रसिद्ध कवि 'हितहरिवंश' जी का समकालीन है, तो ग्रंथ का महत्त्व बढ़ जाता है। इस नाम के कवि की एक और रचना 'महाभारत का हिन्दी पद्यानुवाद' बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के संग्रहालय में संगृहीत है। भाषा तथा वर्णन-शैली से भी प्रतीत होता है कि दोनों एक ही हैं। ग्रंथकार ने प्रारंभ में तो अपने विषय में लिखा ही है, बीच-बीच में भी प्रायः प्रत्येक पद्य में अपने सांकेतिक नाम 'सुष' का प्रयोग किया है।

२—ग्रंथ में रचना-काल के सम्बन्ध में उल्लेख नहीं है। लिपि स्पष्ट और प्राचीन है लिपिकार का भी नाम ग्रंथ में नहीं है।

३—ग्रंथ में यत्र-तत्र 'तुलसीदास का नाम-स्मरण किया है।
"·····अपनौं दियौ सरूप तुलसी अपनी करिलई ॥
·····आरत तुलसीदास कौं श्री बचननि बिसराम ॥११॥

ग्रंथ के प्रारंभ में अनेक प्रकार से प्रभुस्तुति परक मंगला-चरण करते हुए कवि ने अपने विषय में लिखा है--
"कहा करौं रहयौ जात नहीं बाढी चाह अपार,
आसा पूरण कीजियै श्री सुधानिधि करौं उचार ॥१७॥
....
....श्रवन करौं श्री सुधानिधिता मै नित विश्राम ॥२८॥"

इस प्रकारस्तुति के बाद-"वृंदावन हरिवंशहित ललितादिक सुष नाम,
राधा हरि सुहृदिरसिक जय जय सदा नमाम।
श्री वृंदाबन वंशहरि ललितादिक हित नाम,
राधावल्लभ लाल सुष बहुत भांति परनाम।
....
श्री हितबंस मै प्रगट है श्री सुषलाल अनूप,
मेरे सब दुष निहनौं अद्भुत कृपा सरूप ॥३३॥"

कविने अपना परिचय दिया है। इस ग्रंथ के तथा परिषद्-संग्रहालय में संगृहीत हिन्दी महाभारत के अनुशीलन के बाद संभव है कि हिन्दी-साहित्य के इतिहास में इस अपरिचित कवि का सादर नामोल्लेख हो सके। कागज एकदम जीर्ण हैं। ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, सुरारपुर, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं० क० १६३ है।

१०४. **कुण्डलिया**—ग्रन्थकार—श्री अग्रदास। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी, प्राचीन, देशी कागज, पूर्ण। पृष्ठ-सं०—१०। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार—६"×१३½"। भाषा-हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारंभ—"ॐ श्री गणेशायनमः ॥
अथ कुंडलोया अगरदाश के लिख्यते ॥
अगर काम हरि नाम शों संकट होत सहाय।
कोऊ काहू के नहीं देषे ठोक वजाय ॥
देखे ठोक वजाय नारि पटभूषन चाहै।
सुत नित सोषत प्रान सुत प्रछित अवगा है ॥

तात मातु कर घेरि धूनित चित विगारी।
स्वात्लता के सजन दास दासी दै गारी ॥१॥"

मध्य की पंक्तियाँ—"अगर अजा के स्वादतें तृपित न देष्यो कोइ।
जो दिन जाहि अनंद में जीवन को फल सोय ॥
जीवन को फल शोय सदा आनंद उर धारे।
मंत्री ज्ञान विवेक असुभ अज्ञान निवारे ॥
पद्म पत्र ज्यों रहे काल मे विषै पिछाने।
जगपरपंचते दूरी सत्य सीतापति जाने ॥३२॥"

अन्त—"पूरव को रोवत रहे अगर सँउर के चित।
कंथाडारी कांध पर जोगी काको मीत ॥
जोगी काको मीत हंस तजि चलो सरीरे।
निरमोही अति निठुर कहां जाने परि पीरे ॥
मायाधुनि मुकचल्यौ रावल चौरासी।
जहां जाइ तहँ कुटुंव केरि नहि वहिपुर आसी ॥६६॥"

विषय—जीवन, मृत्यु, मोक्ष और हरिभजन आदि का दार्शनिक विवेचन।
भजन के सम्बन्ध में—
"अमर भजन आतुर करो जौं लौं यातन स्वांस।
नदी किनारे रूष को तव तव होइ विनास ॥
जवतव होइ विनास देह कागज की छागर।
आयु घटत दिनरात सदा यामै को आगर ॥
जरा जोर वर स्नान प्रान को काल सी कारी...... ।"
(नदी तट के वृक्ष के समान जीवन सदा मृत्यु के निकट है)

और देखिये—"अगर स्याम अनुराग दिन नही धर्म का लेस,
जैसे कंता घर रहयौ तैसे गये विदेस।
तैसे गये विदेस लोक परलोक न शाध्यौ...... ॥"

इस प्रकार—'हरि लीला रसपान मत्त निर्भय गुन गान'
और "प्रीतम वातन पूछइ धरयौ सोहागिनि नाम।
धरयौ सोहागिनि नाम विषै कुटनी वहकावै......"
आदि में दार्शनिक पुट है।

टिप्पणी—ग्रंथ प्रसिद्ध कवि अग्रदास जी का है। इनकी 'ध्यानमंजरी' भी उपलब्ध हुई है। ग्रंथ की लिपि स्पष्ट और प्राचीन है। ग्रंथ

खंडित होने के कारण 'पुष्पिका' नहीं है। रचनाकाल का भी संकेत इसलिए नहीं मिलता है। ग्रंथ मन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर गया में संगृहित है। पु० क्र० सं० क—१७ है।

१०४. हरिचरित्र—ग्रंथकार—श्री लालचदास। लिपिकार—परेखुराय। अवस्था—प्राचीन, देशी, मोटा कागज, सचित्र, पूर्ण। पृष्ठ-सं०—१६०। प्र० पृ० पं० लगभग—४०। आकार—६"×१२"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—आषाढ़, शुक्ल, सं० १५२७ वि०—१४७० ई०। लिपिकाल—चैत्र, कृष्ण त्रयोदशी, शुक्रवार, सं० १८४६ वि० १७६२ ई०।

प्रारम्भ—"स्री सुरसती माताजी सहाए स्री राधेकीस्नजी सहाए स्री दुरगा देवीजी सहाए स्री तेतीस कोटी देवाजी स्री पोथी भागवंतजी

चौपाइ

प्रथम ही चरन चीतवो ताके, सरवलोक वोदरवस जाके।
गनपत को मै चवन मनावो, सुरस कथा गोपाल गुनगावो।
प्रथम पिताम्ह स्री......उपाय, तुह प्रसाद गननाथ गोसाइ॥
संकर सुमीरी दंडवत कीन्हा, भस्म चढाऐ चीतवन कीन्हा॥
जटा मुकुट सीव सदा उदासी, गुरु प्रसाद पावो अभीनासी।
उतपती प्रलै जाही सो होइ, गढे सवारे भंजै सोइ॥
स्रवभुत के अंत्रजामी, ते हीते वरनो तो कह सामी।
वीघीनी हरन संतन्ह सुखदाइ, चरन गहै लालच हलु आइ॥

दोहा

कोटि अंड उपराजहु, छीनमौ करौ संघार।
लखीन जाए लंवोदर, माश्रा को वीस्तार॥

चौपाइ

अवसारद को वंदौ पाश्रा, गुन अतीत जग मोहनी माश्रा।
तुमते वेद प्रभा अनुसारा, तुहते वुधीजन करही........॥
तुम्हते नारदादी गुन गावही, गंन गंध्रव तुम्ह चरन मनावही।
नंदवेद वीदवा मन राता, गावत ही वुधीजन की माता॥
केस छोरी वंदौ तुम्र पाश्रा, हमहु कह किछु कीजै दाश्रा।
वुध वीहुन मै हरी गुन गावो, करहु प्रसाद मै अछर पावो॥

दोहा

भगत हेतु जन लालच, हरखीत वंदौ पाऐ।
स्री गोपाल गुन गावो, वुधी दे सारद भाऐ॥"

मध्य की पंक्तियाँ—

दोहा

"स्कल कामना पुरी कै, भगती करही मन लाऐ।
जन लालच के स्वामी, वासुदेव ग्रीह जाए॥

चौपाइ

कवहु के चले उधौ संगलाइ: चले कीस्न अ...र ग्रीह जाइ।
प्रम हर्ख अंकुर ही भऐउ, दुइकर जोरी कै दंडवत कीऐउ॥
धुपदीप आरती लैगे आइ, अवसनाथ मै ऐउ गोसाइ।
वहुत क्रीपा इहवा चली आए, गृह पवीत्र भौ दरस देखाऐ॥
बहुत पकवान तुरंत लेइ आऐ, तेल सुगंध लेपन कीहु जाऐ।
अस्तुती भगती जोग लै कीऐउ, गद गद बहुत आनंदीत भऐउ॥
कौन कारज अस पूछन लागे, ...।
....॥"

अन्त—"ऐही जकरतौ पुत्र न मीला, नारायन के दरसन मीला।
भुइ कर भार उतारन गऐउ, माआ मोलीपीतहोऐ रहेउ॥
अब जदुवंस बहुत भौउ, जाके मारन धरती समाउ।
सरग सुनहै वेगी तुम्ह आवहु, प्रीथी पती वीलंवु न लावहु॥

दोहा

प्रभु वालक उन्ह सौपा, पालै आगेजदुराऐ।
दीन्ह पुत्र वीप्रकह अव उन्ह सोक नसाऐ॥
ऐती स्री हरीचरीत्रे दसम सकंधे श्री भागवंते महा पुराने स्री गपुत्र प्रसादनो नाम छेआनवे मो अध्याऐ: ६६ ऐती स्री पोथी भागवत कथा क्रीतलालच आसानंद के संपुरन जो पोथी मो देखा सो लीखा मम दोख नदी अते॥"

विषय—भागवत भाषा, (दशमस्कंध) श्री कृष्णजी का जीवन चरित्र। छ अध्यायों में भागवत महा पुरान के आधार पर रचना। अवधी भाषा और दोहा चौपाइयों में, १६० पृष्ठों में समाप्त।

टिप्पणी-१—यह ग्रंथ श्री लालचदासजी कृत हरिचरित्र है। ग्रन्थकार की मात्र नामचर्चा 'शिव-सिंह सरोज' और 'मिश्र-वन्धुविनोद' में हुई है।

नागरी-प्रचारिणी सभा की खोज में भी इनके दो तीन हस्तलिखितग्रंथ उपलब्ध हुए हैं। विहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के संग्रहालय में इनके तीन ग्रंथ सुरक्षित हैं। इनकी रचना पर देखिए--साहित्य वर्ष-१ अंक-१ ग्रंथ सं०-४ यह ग्रंथ और कवि अनुसंधेय है। ग्रंथकार ने ग्रंथ रचनाकाल के सम्बन्ध में लिखा है--"संवत् पंद्रह सै सत्ताइस जव ही" इससे स्पष्ट है कि सं० १५२७ वि० (सन्--१४७० ई०) में ग्रंथ-रचना हुई है। नागरी-प्रचारिणी की खोज में उपलब्ध पोथी न तो इतनी प्राचीन है और न सम्पूर्ण।

२—ग्रंथ की लिपि-प्राचीन और अस्पष्ट है। लिपिकार ने ग्रंथ की पुष्पिका में लिखा है--

"पंडित जन सो वीन्ती मोरी टुटल अछर लेव सव जोरी ॥"
ली० संवत् १८४६ साल मीती वै जेठ वदी तीरोदसी रोज सुख को लीखा दसखत..........परेकुराय रजपुत..............। जो कोइ पोथी पढ़े तीस को राम राम औ प्रांभन। पोथी लीखाआ लाला केदार नाथजी मालीक पोथी के ॥

दोहा

"भला वुरा जो हम लीखा, हंसी करोमत कोऐ।
अछर मंत्रा सवाटीकै, पढै सो चातुर होऐ।"

३—ग्रंथ में, ग्रंथ के विषय से संबंधित १२६ (एक सौ छब्बीस) भावपूर्ण, कलात्मक चित्र भी दिए हुए हैं। लिपिकार ने प्रत्येक पृष्ठ में 'हाशिया' छोड़कर लिखा है। ग्रंथ मन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं० क—१४७ है।

१०६. विष्णुपुराण—ग्रंथ—श्री लालचदास। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज, मोटा, खंडित। पृष्ठ-सं०—१७। प्र० पृ० पं० लगभग—४०। आकार—१०"×१३"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"स्री गनेसजी सहाऐः। स्री भवानीजी सहाऐः। स्री कीश्नजी सहाऐ॥ पोथी वीश्न पुरानः॥
प्रनौ देववीप्र गुरु पाउ, जीन्ह प्रसाद उती भगती पाउ।
प्रनौ गनपती गौरी गनेसा, जीन्ह मोही वीदवा दीन्ह उपदेशा॥

प्रनौ सुरसती अंम्रीतवानी, जासु परताप प्रभु चरीत्र वखानी।
रीखी सुखदेव ही पुछै भुआला, कहो चरीत्र कछु प्रभु वेहवारा ॥
कैसे सतजुग त्रेता भएेउ, कैसे दवापर कलीजुग भएेउ।
कैसे चांद सुरज औतारा, कैसे पानी पवन अनुसारा ॥

दोहा

चांद सुरज तारागन, सो मोही कहहु बुझाऐ।
जेही पती आऐ मोरे मन, सोरीखी कहौ समुझाऐ ॥"

मध्य की पंक्तियाँ—पृष्ठ ८

दोहा

"दान पुन्य सत सुक्रीत, ध्रमकथा नही भाउ।
पाप कपट कली दारुन, सुनहु दुधीष्ठर राउ ॥"

....।

अन्त—"कीश्न जन्म औ रानी हौ जाइ, देवकी ग्रभ औतरी हौ आइ।
लछुमन वलीभद्र औतारा, मै जो कहावो कीश्न कुमारा ॥
तव मै वैरदेवपरचारी, मीथ्या होऐ न वचन हमारी।
तुम्ह व्याधा मै जन्महु आइ, जी अते प्रान लेहु मुकताइ ॥
जेही वंन मारा है पीता तोहारा, तुम्ह कर चली है वान हमारा ॥

दोहा

चांद सुरज हही साखी, कहौ वचन प्रवान
तेजे तनी भाखा तोसौ, सोतजी हो न आन् ॥"

विषय—विष्णुपुराण के दशमस्कंध के आधार पर, कृष्णवाललीला वर्णन तथा कृष्ण जीवन के विभिन्न अंगों पर प्रकाश। चारो युगों के के कारण, उन युगों के भिन्न भिन्न कर्मों तथा उनके फल आदि का विवेचन ॥

टिप्पणी-१—यह ग्रंथ भी श्री लालचदास जी कृत है। ग्रंथ खंडित होने के कारण ग्रंथकार के नाम आदि की चर्चा तो नहीं है किन्तु ग्रंथशैली, पूर्व ग्रंथ के ही समान है।

२—ग्रंथ में लिपिकार का नाम नहीं है, किन्तु ग्रंथ की लिपि आदि पूर्व ग्रंथ के समान ही है। ग्रंथ विषयानुकूल चित्र भी दिए हुए हैं। ग्रंथ श्री मन्नूलाल पुस्तकालय, मुरारपुर, गया में संगृहीत है। पु० क्र० सं० ए०—१४८ है।

१०७. कालयवनकथा-ग्रंथकार— ×। लिपिकार— ×। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—२। प्र० पृ० पं० लगभग—२४। आकार-प्रकार—५$\frac{१}{४}$"×१२"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल-×। लिपिकाल— ×।

प्रारंभ—"श्री हरये नमः ॥ श्री शुकदेव जी बोले हे! राजन् श्री कृस्नचन्द्र काल यमन के मधुपुरी में आवत मात्र ही सब यदुवंशीनकू मधुपुरी तें द्वारका भेज देत भये और काल यमन कू स्वयं युद्ध द्वारा नहीं वध करके मुचकुंद की दृष्टि द्वारा भस्मकरवत भये याको दो गुप्त कारण और बी है सो मै तोसूं कह दऊं हूं (१) मतो महादेव को वरदान सत्यकरनो हो (२) यकालयमन ब्रह्मण के वीर्य्य से उत्पन्न होतासूं स्वयं वध नहीं कीनो तब तो राजा परिक्षित बोलो महाराज या कथाकू विस्तारसूं वर्णन करिये क्यौं के ब्राह्मण के वोर्य्य ते यमन उत्पन्न होय यह बड़ो आश्चर्य्य है श्री शुकदेवजी वोले हे राजन् एक दिन यदुवंशीन की सभा में गर्ग मुनि बैठे हे वासमय...... ।"

मध्य की पंक्तियाँ—पृ० सं०—२

"तव तो गर्गाचार्य्य प्रशन्न होय के शम्भुदत्त फलकू राजा तालजंघ की बड़ी स्त्री कू देयके वाके संग रमण करके वीर्य्यदान करते भये किन्तु ईश्वर इच्छातें वा समय राजपत्नीने सपत्नीन के भयतें शीघ्रता में विना स्नान किये वा फलकू भक्षन कर लीनो तब तो गर्गमुनि बोले के हे! राजा तालजंघ पुत्र तो तोकू निस्संदेह वडो प्रतापी उत्पन्न होयगो किन्तु तेरी स्त्री ने अनाचार कीनो है तासूंवा बालक कोम्लेच्छवत आचरण रहै गो यह कह के गर्ग महाराज तो अपने आश्रम कू पधारे और प्रसूतिकाल प्राप्त भयेतें राजा तालजंघ की स्त्री के गर्भतें कालयमन उत्पन्न भयो ·········।"

अन्त—"तव तो गर्ग मुनिवोले के हे! राजा तालजंघ पुत्र तो तोकू निस्संदेह वडो प्रतापी उत्पन्न होयगो किन्तु तेरी स्त्रीने अनाचार कीनो है तासूंवा वालक को म्लेच्छवत आचरण रहै गो यह कहके गर्ग महाराज तो अपने आश्रयकू पधारे और प्रसूति काल प्राप्त भयेतें राजा तालजंघ की स्त्री के गर्भतें काल यमन उत्पन्न भयो परन्तु बाल्यावस्थाईतें वाके सवरे आचरण म्लेच्छ के से होत भये किन्तु विप्रवीर्य्यते उत्पन्न हो तासूं श्री कृस्नचंद्रते बाको निजकरतें वध

नहीं कियो और शिववाक्य सत्य करने के लिये सबरे यदुवंशी नहीं सहित आप भाजत भये इति यह गुप्त हेतु सुन के राजा परीक्षित को संदेह दूर होय गयो इति श्री इतिहास समुच्चयने। क्रमू दशमें एक पंचाशत्तमो ध्यायः ५१"

विषय—जीवन-चरित्र।

टिप्पणी—यह ग्रंथ भाषा-गद्य में लिखा हुआ है। इसकी भाषा प्राचीन कथा में शैली है। इसके लिपिकारने 'ब' और 'व' के लिए 'व' का ही प्रयोग किया है। ग्रंथ के अन्त में "इतिहाससमुच्चयेनोक्रम् दशमे एक पंचाशत्तमोध्यायः ५१" ऐसा लिखा है। अतः यह ग्रंथ अपूर्ण है। यह महाभारतान्तर्गत राजा परीक्षित और श्री शुकदेव जी के संवाद का भाषाबद्ध गद्यकाव्य है। इसमें ग्रंथकार ने काल-यमन के जन्मप्रसंग का उल्लेख किया है।

यह पोथी श्री चैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना-७ में सुरक्षित है। यह पुस्तक पुस्तकालय के जिल्द-०८ में है और इसकी ग्रंथ सं० ४३ है।

१०८. पंचाध्यायी—ग्रंथकार—श्री सुन्दरलाल गोस्वामी। लिपिकार—श्री राधालाल गोस्वामी अवस्था—प्राचीन, हाथ का बना, मोटा कागज। पृष्ठ-सं० २६। प्र० पृ० पं० लगभग-१८। आकार-प्रकार—५½" × १२"। भाषा—संस्कृत-हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—सं० १६५४ वि०।

प्रारंभ—"श्री श्रीराधारमणे विजयतेतराम् अथ श्री रासलीला वराष्यते तस्यां श्रवण फल माह बिना भागवतं शास्त्रं नैव भक्तिर्नृणां भवेन् ग्रंथोंऽष्टा दशसाहस्रं श्री हरेरंगमुच्यते १. गौरीतंत्रे पादे यदीयौ प्रथम द्वितीयौ तृतीय तूर्यौ कथितौ यदूरुः नाभिस्त तथा पञ्चमएव षष्ठौ भुजांतरं दोर्युगलं तथा द्वौ २. कण्ठस्तु राजन्नवमोयदीयो सुखारविंदं दशम प्रफुल्लं एकादशं भाल किरीटजुष्ट शिरस्तु यद्वादशमे विभाति ३. तमादिदेवं करुणानिधानं तमालवर्णं सुहितावतारं ऊपारसंसारसमुद्रहेतुं भजामहे भागवत स्वरूपम् ४. तत्र श्री दशम श्रेष्ठ तत्र गोकुलके लयः तत्रैव श्री रासलीला गोपिका गीतकास्ततः ५. तत्राटवीतिपद्यं तु प्रोच्यते परमं पदम् तत्रैव चरमश्लोकः प्रेम निर्व्यास रूपकः ६. अथपञ्चमिरध्यायैः पंच प्राणसमैर्मुनिः रासंप्राह हरेः सर्वलीलासंपतिसिरोमणि ७. भावार्थ श्री रास के शरंम में श्री वादरायणिहवाच ऐसो पाठ कह्यौ ताको कहा

प्रयोजन है तत्राह बदरीणां समूहो वादरं तद्वादरं अयनं यस्याऽसौ वादरायणो व्यासः तस्यापत्यं पुमान् वादरायणि शुकेति पाठे अन्यत्र दशभिवर्षैयत्पुराय मुपलभ्यते मनुजैरेकरात्रेण वासाद्वदरिकाश्रमे ८. भाषा वद्रिकाश्रम में जो तप कीनो ताको फलरूप होय के प्रघटो है तातें सर्वज्ञत्व श्री भागवत प्रेम रसमयत्व ये दोनों गुण श्री शुकदेव जी में नित्यसिद्ध है यो दिखायो अथवा जो भागवत प्रेम तें कहे है ते वी शुकदेव जी करके जाननो किं कुर्वन् प्राच्या ककुभः मुखंकरैर्विलपन् या में कहा ध्वनि निकसी अश्विनी भरणी सूं आदि लैके सत्ताइस रानीनकू संग वीलायो है तापेहू मन नाय मानें इन्द्र की स्त्री पूर्व दिशा ताके मुख में अपनी किरणन रूपी हाथ सूं अरुण कुंकुम केशर सौं तिलक शृंगार वनाय के अपनी ओर अनुरागवती करै है दीर्घ दर्शनः याको भाव ये है चंद्रमा कहै है हे प्यारी मावस्या कूं तो मैं मरोंईहौं न जाने तेरे ई भागनते प्राण वगद आयो·········"

अन्त—"जव गोपी मन में पछतांई हमारी वरोवर मंद भागी कोऊ नहीं है तव ध्यान में श्री कृष्ण आए और दिव्य देहते गोपी कृस्न निकुंज में पधारे परन्तु काऊकू खवर न पड़ी ॥ जैसे देवता सवकू देखै है परन्तु देवताकू कोई नहीं देखै है ॥ अथवा ॥ जैसे वासुदेवजी ने श्री कृष्णकू कारा-गार में तें लेके गोकुल में पहुँचाय गये और काऊकू खवर न पड़ी ॥ कारण। श्रीकृष्ण की आज्ञा तें योगमाया ने सवकू मोहित कर दिये हैं। जव कोठे में किवार खो........."

विषय—श्रीकृष्ण-जीवन-चरित्र-काव्य। कृष्ण-रासलीला-वर्णन। ब्रह्मसंहिता, भागवत की भाषा टीका तथा ग्रंथ के आधार पर कहीं कहीं कवित्त, सवैया और दोहे में स्वतंत्र रचना। ग्रंथ में हिन्दी में जहाँ भी काव्य-रचना की गई हैं, उसमें मौलिकता और अलंकार, भाषा की दृष्टि से सौमनस्य का समावेश है।

टिप्पणी—यह पोथी अपूर्ण है। यह श्रीमद्भागवत की 'रास पंचाध्यायी' की टीका व्रजभाषा में है तथा उसके आधार पर कहीं-कहीं ग्रंथकार की अपनी पद्य-रचना भी है। भाषा-माधुर्य्य प्रशंसनीय है। जैसे पृष्ठ-सं० १८ में—'रूप को उजागर, रस को सागर, गुणन को आगर, नट-नागर, जो चलो सोई लताजो, झुरमुट खाय रहीं हीं तिनके बीच में होयके मुकुटकूं बचावत काछनी सभारत चहुंदिशि निहारत पटकाके दोऊ छोर पकडत चटकत मटकत लतानकूं झटकत-पतालकूं पटकत डारनसूं

अटकत लटकत भूलत भटकत झुकत भूमत बैठत उठत झट्टपट्ट झपाके सूं वृंदावन बीच आय जमुना के तट पै धीर समीर के तीर निकट तट-वंशी वट पै........।" और पृष्ठ-सं० ६ में—"कवित्त, पेडन की पंगत में पच्छिन की संत में वागन की रंगत और फूलन की डालाहोंय चन्दन गुलाब खस केवडा सो सींचे चौक चौहाटे चौराहे हीरा मोतिन के जाला होंय जरी तासवाद लेके वस्त्रहू अनेक भांति रतन जटित गहेनें औ मोतीमाला होंय हीरन जटित कुञ्ज मोतिन के मन्दिर की मंडली सहित ही विचित्र चित्रसाला होंय ?"

पोथी अपूर्ण होने के कारण ग्रंथकार और लिपिकार के नाम का पोथी में संकेत नहीं है किन्तु पुस्तकालय के अधिष्ठाता श्रीकृष्ण चैतन्य गोस्वामी जी ने उपर्युक्त नाम बताया—लिपिकार श्री राधालाल गोस्वामीजी इनके पिता और पुस्तकालय के संस्थापक थे। पुस्तकालय के अधिष्ठाता श्रीकृष्ण चैतन्य गोस्वामीजी से यह भी ज्ञात हुआ कि—इस पोथी की मूल लिपि जो ग्रंथकार की स्वयं लिखी हुई है, वृन्दावन में श्री राधारमणजी के घेरे में स्थित मन्दिर के पुस्तकालय में है और पूर्ण है। यह पोथी श्री चैतन्य पुस्तकालय में सुरक्षित है—जिल्द ८ में, सं० ४६ है।

१०६. पञ्चाध्यायी—ग्रंथकार—पंडित नन्दकिशोरजी। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, मोटा, हाथ का बना, देशी कागज। पृष्ठ-सं०--१४। प्र० पृ० पं० लगभग--१८। आकार-प्रकार—५½"×१३"। भाषा—संस्कृत, हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री गणेशाय नमः अथ पचभिरध्यायैः पंच प्राणसमैर्मुनिः रासं प्राह हरेः सर्वलीला संपत् शिरोमणि। श्री रासके प्रारम्भमैं श्री वादरायणिरुवाच ऐसो पाठ कह्यो ताको प्रयोजन कहा है सूतजी शौनक ऋषिते॥ वदरीणां समूहोवादरं। वदरी खंडमंडितेति। प्रथमोक्तेः तत्वादरं अयनं आश्रयो यस्यासौ वादरायणो व्यासः। तस्यापत्यं वादरायणि शुकेति ततश्च अन्यत्र दशभिर्वर्षैं यत्पुण्यमुपलभ्यते मनुजैरेकरात्रेणावासाद्वदरिकाश्रमे इति पाद्मे।

वद्रिकाश्रम मैं जो वासकियो ताते वादरायण नाम विख्यात भयो। तहां वहुत काल रहे तप कियो सो श्रीकृष्ण को आराधन रूपी तप कियो ताको पुण्य को पुंज वडो सोफल शुकदेव रूप होय कै प्रगटो तातें सर्वज्ञत्व श्री भागवत प्रेम रसमयत्व दोउ गुण शुकदेवजी मैं नित्यसिद्ध

है ये दिखायो जैसे शुकदेवजी ने कही है राशकथा तैसे हीं और वक्ता प्रेम हीं सों कहै सब श्रोता हु प्रेम ते सुनै। यद्वा। श्री कृष्ण को रहस्य लीला रास गदिता कौवरण करै तौ अपने इष्टदेव कौ अपराध होय नवरण न करै तौ ज्ञानवंचकता दोष लगै उभयतो पाशारज्जू न्याय है दोनौं ओर ते चिंता भई तव शुकदेव जी ने पिता को ध्यान धरो है..."

मध्य की पंक्तियाँ—"यद्वा श्री मद्भागवत श्री कृष्णचन्द्र को देह है ता नै रासपंचाध्यायी पाँचों प्राण हैं ताहू नैं अंत को श्लोक सुषमना नाडी है यातैं सुजातचर्णाम्बु रुह स्तनेषु० इत्यादि श्री भागवत कृष्ण को देह हैं सो कहाँ लिख्यौ है सो सुनौ तंत्रे हर गौरी सँवादे। पादौ यदीयौ प्रथम द्वितीयौ तृतीय तूर्य्यौ कथितौ यदूरू नाभिस्तथा पंचम एव षष्ठो भुजातरं दोयु गलं तथा द्वौ कंठस्तु राजभवमो यद्रीयौ मुखारविंद दशम प्रफुल्लं एकादशं भाल किरीट जुष्टं शिरस्तु यद्वादशमेव भाती तनादि देवकरुणानिधानं तमालवर्णं सुहृदावतारं अपार संसार समुद्र हेतुं भजानहे भागवत स्वरूपं इति। अब श्री शुकदेवजी वर्णन करैं हैं भगवानपि ता रात्रा शरदोत्फुल्ल मल्लिका वीक्षरंतु मनश्चक्रे योगमाया मुपाश्रितः १ हे राजन् पर्म आश्चर्य्य तौ देख्यौ भगवान हू रमण करिवे कूं मन करत भये राजा वोल्यो हे ब्रह्मन् श्रीकृष्णचंद्र के अनेक नाम हैं दामोदर ब्रजचंद्र विहारी, मुरारी मुर्लीधर, गोविंद गिरधारी ऐसे नाम छाडि कै पर्म माधुर्य्य रसयी रासलीला को प्रारम्भ मैं ईश्वर संबंधी भगवान ये वूडो नाम क्यौं कह्यौ तव मुनि बोले भगो भाग्यं तद्वानपि नंद पुत्रत्वात वात्सल्यरसावलंवनात् नंद यशोदाभ्यां लाल्यमान-त्वान् सकल सुख पूर्ण यियिरंतु मनश्चक्रे इत्याश्चर्य्यपूर्ण कामोपि भगः श्री काम महात्म्य वीर्य्यंयन्नाऽक कीर्तिषु इति विश्व को शात् वदंति तत्वविदेति भगवानपि षडैश्वर्य—पृष्ठ-सं० ६ संपन्नोपि......"

अन्त—"ब्रह्म संहिता मे लिख्यो है वंशी प्रिय सखीतिच वंशी वडी प्यारी सखी है तव तौ फैंट मैंतौ वंशीरूपी योगमाया निकासि कै छाती तैं लगाई फेर आखिन मैं लगाई फेर मुख मैं लगाई कभूचूवैं कभूचाटैं प्यार करैं फेर वंशी के कान मैं कहवे लगे हे वंशी प्यारी जगत मैं कोई मानै देवि वराही देई और मैनें तो जन्मते एक तूही कूं से यौ अधरामृतप्यायो हाथ रूपी पलका पै सुधाइ नीचे को होठ विछौना कीनो ऊपर को होठ बोढना कीनो ङगलीन ने तेरे पावन की पगचर्या कीनी आठ पहरछाती

पैराखी अब आज एक मेरो काज है तातैं ऐसी वाजि सोसव नव किशोरी चली आवैं तव तेरी कीमत जानूगो इतनी कही कै श्री कृष्ण ने जो ऊधर पै धरी सोई वंशी ऐसी वाजी सो वंशी के वाजत ही जो गोपी कवहू उठि कि कै नहीं देखें श्री तिनहू कू ऐसी खलवली परी जो काम काज छोडि कै दौरी भई चली आई हैं ऐसी योजीन की सीमा या जो वंशी ने कीनी ताही तें श्री शुकदेवजी वने वंशी कू योगमाया कही है। औरहू या पद के अर्थ बहुत हैं कहाँ तो लीक हैंगे ।। शुभंमस्तु ।।"

विषय--श्रीकृष्ण-जीवन-चरित्र-काव्य। कृष्ण के रासलीला-सम्बन्धी भागवत के अंश का भाषानुवाद और उसकी दार्शनिक व्याख्या।

टिप्पणी--यह पोथी पूर्ण है। पोथी में व्रजभाषा-गद्य का प्रयोग है। भागवतान्तर्गत 'रास पंचाध्यामी' की भी भाषाटीका है। टीका के साथ स्थान-स्थान पर स्वतन्त्र दार्शनिक विवेचन भी है। पोथी में 'व' और 'ब' के लिए केवल 'व' का ही प्रयोग है। साथ ही 'ड' और 'ढ' के नीचे विन्दु भी नहीं दिया गया है। पोथी श्री चैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना में सुरक्षित है। पुस्तकालय—जि० ८, पु० सं० ४७ है।

११०. नन्दोत्सव-ग्रंथकार—श्री प्यारेलाल। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—३७। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार-प्रकार—५$\frac{1}{3}$"×१३"। भाषा—संस्कृत, हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारंभ—"श्री गणेशाय नमः श्री राधाकृष्णाभ्यां नमो नमः नंदोत्सवोयं तहा मूलमै श्री शुक उवाच क्यों कह्यौ ऋषिरुवाच वादरायणिरुवाच ऐसे क्यों नहीं कह्यौ तहां हेतु है कै ऋषितप सौ देषै है और वादरायण व्यास को नाम है वदरिका श्रम मै तपो भूमि मैं अपन निवास स्थान जिनको ताते वादरायण तिनके पुत्र वादरायणि इसहू वात से पिता के तप सु नंदोत्सव को दरसन आयो कछु प्रम अनदोत्सव को दरसन न पायो तहा श्री शुकदेव जी वृजराज के आंगण में जाइ जमलार्जुन वृक्षण पर वैठि शुक को रूप धारण करि प्रत्यक्ष नंदोत्सवदेव्यो तातें वादरायणिरुवाच और ऋषि-रुवाच ना कह्यो श्री शुक उवाच ऐसोई कह्यो अथवा एक तौ पढ्यो भयो तोता श्री राधाकृष्ण श्री रामकृष्ण कहि कै चित्त चौरै और एक वगैर पढ्यौ भयौ टे टे करि कै कान कोरै।' यामै श्री शुकदेव जू पठे भए तो

ताहे मामे वाङ् माधुर्य मनोहरत्व आयो तर्तें शुक उवा एसोई कह्यौ अथवा।"

मध्य की पंक्तियाँ—पृ०-सं० २०

"श्लोक गावः हु हु प्रकृत्वा सुललित गत्या पुच्छ गुच्छो छ्र्यंत्यः वाद्यन्घंटागलस्था सुललित स्वरा चालयंत्यः प्रशस्तैः रागैर्नाना विहारै ह ह हः ह ह हः प्राङ्गणे छोलयंत्यः नाना गत्यानुसारै व्र जयति भवने नेर्पयंत्यो विरेजुः इति या प्रकार जितेक गऊ हैं ते ते आनंद मे मग्न होती भई श्री शुकदेव जू बोले हे राजन् जहाँ पशून कू ये आनंद प्राप्त भयो है तहाँ के मनुष्यन की आनंद की दशा का पै वर्णन करी जायगी अव तो नंद महर ने वडी भीड देखि के विचार की नोके.............."

अन्त—"यद्वा हे नृपः त्वंतु राजा अतः महती सोभा दृष्ट्वा किन्तु इ यं पश्य मेघ सदृशोनंदो भूरीति ।। मेघो जलवृष्टिं करोति ।। नंदोधनं वृष्टिं करोति ।। घने गर्जनं करोति ।। नंदस्य गृहे सूतमागधवंदीनांशब्दो भवेत् ।। मेघे एकैवतडिद्भवति ।। अस्मिंस्थाने कोप्यः गोप्यतडिद्भवति ।। मेघं दृष्ट्वा वर्हि आनंद शब्दं कुर्वंति ।। नंदं दृष्ट्वा उपजीविनः शब्दं कुर्वंति ।। मेघो दुःखनाशको भवति ।। नंद सर्वेषां दारिद्रतारूप दुःख-नाशको भवत्ति ।। मेघे वर्षतिसति बहुनद्यः वहंति ।। नंदालये दधि-दुग्धादीनां वहुवेगा नद्यो वहंति ।। मेघे वर्षति सति मयूरा उल्लासयंति ।। अत्र श्रीकृष्णरूपवर्षायां माधुर्योपासक गोपांगनानां हृत्समुद्रोल्लासं भवेत् ।। मेघे वर्षति सतिभूमि हरिता भवति ।। अत्र सर्वेषां भक्तजनानां चित्तहरितो भवेत् ।। घने वर्षति सतितमालो प्रफुल्लित भवति ।। अत्र कृष्णतमालः ।। अर्कतापे जनास्तमालमाश्रयं कुर्वंति ।। अत्र भक्तजनाः संसारतापनाशाय कृष्णतमालयाश्रयं कुर्वंति तिप्रलापे ।।"

विषय—श्रीकृष्ण-जीवन-चरित-काव्य। श्रीकृष्ण जन्मकालीन, जातकर्म संस्कार और जन्मोत्सव का विशद वर्णन।

टिप्पणी—पुराणान्तर्गत कृष्ण-काव्य के आधार पर रचित ग्रंथ की भाषाटीका एवं स्थान-स्थान पर दार्शनिक विवेचन। ग्रंथ में व्रजभाषा का प्रयोग है। ग्रंथकार ने दोहे, कवित्त आदि में स्वतंत्र रचना भी की है। जैसे—पृ०-सं० २०—

दोहा

"व्रजवासी टेरत फिरै कोऊ वन जनि जाय।
नंदराय घर सुत भयो देहु वधाई आय ।।"

पोथी सुपठ्य और अनुसंधेय है। पोथी के प्रारम्भ या अन्त में ग्रंथकार या लिपिकार के नाम का उल्लेख नहीं है, किन्तु पोथी के मध्य पृष्ठ-सं० ३ में—

"देखि धाई नन्द को पड़े यशोदा पाय
कहै प्यारेलाल को नेंक हमें दिखाय।"

लिखा है। इससे प्रतीत होता है कोई 'प्यारेलालजी' ही इस पोथी के ग्रंथकार हैं। ग्रंथ की गद्यभाषा व्रजभाषा से तो प्रभावित है ही, कहीं-कहीं राजस्थानी का भी प्रभाव है। यह पोथी श्री चैतन्य पुस्तकालय में सुरक्षित है। पुस्तकालय—जिल्द ८ में, सं० ४८ है।

१११. **नन्दोत्सव**—ग्रंथकार—श्री रामलाल गोस्वामी। लिपिकार—श्री रामलाल गोस्वामी। अवस्था—प्राचीन-देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१८। प्र० पृ० पं० लगभग—२०। आकार-प्रकार—५$\frac{1}{2}$"×१३$\frac{1}{2}$"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री राधारमणो जयति ।। अव श्री दशम स्कंध की पंचमीऽध्याय में श्री शुकदेवजी नंदोत्सकूं अठारह श्लोक द्वारा प्रारम्भ करे है जो कहौ पाचईऽध्याय में क्यों कहौ तहा कहै है कि जो उत्तम वस्तु होय है सो पांच पंच की सलाहतें होयं है सो यहां पाचई अध्याय मान्ों पंच है याते कह्यौ अथवा यह पंचतत्व को देह है याते पांचई अध्याय नहीं मानौ पंचतत्व कौ भगवान को देह प्रगट भयो अथवा पांचईऽध्याय में याते कह्यौ के भगवान के पंच प्राण उत्पन्न भये अठारह श्लोक करके क्यों कह्यो तहा कहे हैं कि अठारह श्लोक नहीं मानौ श्री नंदोत्सव में।"

मध्य की पंक्तियाँ—*पृष्ठ-सं० १०*

"तव नायन वोली
लहगा सुंदर भारी ताकौ रंग गुलह अनारी
तामें कूप का मदारी सुंदर चीन समारी
ताऊपै लैउगी सारी तामें रंगन की लहर भारी
चौगिर दावेल समारी और एक सुंदर चोली

रतन अमोली और तुम सवरो गहनो
सब यह है मेरौ कहनो
नाइन मेरी संग की इने करो रंग रंग की
कीजै मो मन भाई तब देहौ लाल वधाई......"

अन्त—"ग्रंथ में यह लिषौ है श्री कृष्णतें राधिकाजी को जन्म पहले भयो है सो कल्पातर भेद है या मै कछु दूषन नही है अवश्री शुकदेव जू ऐसे कहीते कहीते श्री शुकदेवजी की आंखिनि मे सवरो उच्छाइव जो छाय रहयो है तहां, आपहू भाव करिके ठाडे हैं सोई माखन की जो मार भई एक तौ मणि ही की चिकनी सिला ता पै माखन के लौन्दा पड़े और तापै जो पाय परिगयो सो पामरपरयौ तब ये पुकारे हैं हे नृप अरे राजा तोकूं कथा सुननी है तौ मोहि हाथ पकरिकै लीगौ नहीं तौ या दधिकादौ कीच में रपट्यौ सो तो श्री शुकदेवजू सरीके वक्ता जो रपट गये तो ऐसो कौन वक्ता है जो कथा कहै तहां इ राधिका जन्मोत्सव गर्ग संहिता में कह्यौ है अथैव राधावृषभानु पत्नयाभावे श्यरूपं महसः पराज्ञं कलिंदजा कूल निकुंज देशे सुमंदिरे सावततार राजन् १ घनावृतेव्योम्नि दिनस्य मध्ये भाद्रे सिते नागतिथौ चसोमे अवाकिरन् देवगणास्फुरद्भिस्तन्मंदिरे नंदनजैः प्रसूनैः अवजासमै शुभलक्षणाकाल वृहस्पतिवार अष्टमी भाद्र शुक्ला अष्टमी विशाखा नक्षत्र ताही समै मध्याह्न में श्री राधिकाजी को जन्मभयौ अथवा इसीताष्टम्यां प्रभाते अरुणोदये गुरुवारे विशाखायां शिंह लग्नोदये खौ कर्के गुरौ तुलायाञ्च विधौ शुक्रे तुलागते भौमे मकरसंस्थेन्दु कंजे कन्यगते शुभे १ वुधो कुंभगते माता कन्यका शुभलक्षणा विश्वोद्धार करि साक्षान्नामस्मरण मात्रतः १ असौ सर्वगुणोपेतः काल परमशोभनः स्वयं वर्वष पर्जन्यो रसवृष्टि धरातले १ वबुर्वीताः सुखस्पर्शाः सुगन्धाः शुमनोहरा मनस्यासन् प्रसन्नानि सारासि सरितस्तथा आनंद सप्त वे मग्नाः वभूवुरखिलाजनाः ताही समै प्रगट होते ही श्री राधिकाजी ने दिव्य रूप दिखायौ वृषभानराजा और कीरति रानी हाथ जोड के वाल्पकौ दर्शन करण लगे केतौ रूप है द्विभुजविलास रूप द्विय वस्त्राभूषण पहिरे ऐसे रूपकौं देख के अस्तुति करत भये ।। इति श्री नन्दोत्सव संपूर्णम् ।। राम राम राम राम राम राम राम रामलाल ।"

विषय—श्रीकृष्ण-चरित्र-काव्य । श्रीकृष्ण के जन्मोत्सवकाल के समय नंद द्वारा आयोजित महोत्सव का साहित्यिक वर्णन ।

टिप्पणी—भागवत पुराणान्तर्गत श्री कृष्ण के जीवन के सामान्य आधार पर गद्य-ग्रंथ। यह पोथी व्रजभाषा में लिखी गयी है। पोथी किसी मूल संस्कृत ग्रंथ की टीका के रूप में लिखी गयी है। पोथी की लिपि सुन्दर तथा स्पष्ट है। पोथी में ग्रंथकार ने अपना नाम प्रारम्भ या अन्त में नहीं दिया है, किन्तु अन्त में 'राम राम राम' कहते हुए 'रामलाल' लिखा है और इस पुस्तकालय की परम्परा में श्री रामलाल गोस्वामी हो चुके हैं, अतः प्रतीत होता है—ये श्री रामलाल गोस्वामी ही ग्रंथकार हैं।

यह पोथी श्री चैतन्य पुस्तकालय, गायघाट पटना में सुरक्षित है। पुस्तकालय—जिल्द ८, पु०-संख्या ४६ है।

११२. मधुपुरी (मथुरा) वर्णनम्—ग्रंथकार—×। लिपिकार—श्री देवीप्रसाद। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—६। प्र० पृ० पं० लगभग—१६। आकार-प्रकार—४½"×११"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—चैत्र, कृष्ण, अमावास्या, शनिवार, सं० १६४६ ई०।

प्रारम्भ—"श्री राधारमणो जयति॥ श्री गणेशाय नमः॥ अतः मधुपुरी वर्णनमाह वडे वगीचे ते नंदजी के पास तें श्री कृष्णवलभद्र सखान सहित मधुरापुरी के देखिवे को आवत भये तहां आयके मधुपुरी को देखत भये कया देखत भये तहां को कहत हैं मथुरा के कछु दूरवाग वडेवडे ठडे हैं तिनमे चीता और गैडा भेडा हिरण रोज शूकर नाहर डोलत हैं तिनमें राजा के पालक हथियार बांधे शिकार खेलत हैं ताके आगे मथुरा के निकट छोटे वगीचा लगे हैं तामे अनेक माली घूम रहे हैं तिनकी कमर में दुशाला वंध हैं और हाथन में सोने के कडे पहिरे हैं सोने की दण्डी के बेलचा तिनसे रौसपट्टी वना रहे हैं"

अन्त—"सो हे राजा वासमय श्री कृष्ण कौ देखि के हजारन पुरुष सुन्दरी टूक ;टूक होइ के अपने अपने गहने उतारिके नोछावर करन लगि हैं ऐसी भांति आनंद में

भांर रही हैं और आगे वाजार में भीड के मारे कसा-मसि होय रही है और लोग वाग अपनी अपनी दुकानन में झूंकि झुकि झूमि झूमि सो नैन के थारन में मोतिन के हार भरि भरि कै आरतीन की त्यारि करै हैं

दोहा

वृन्दावन राधारमण चरण कमल में वास
लिखित देवी प्रसाद हैं गुरुपद पंकज दास

मिती चैत्र कृष्णामावस्या शनिवार सम्बत् १६४६ ई० शुभम् भूयात् ॥ श्री राधारमणो जयति ॥ हरे० ।"

विषय—मथुरा और विशेषतः श्री राधारमण-मन्दिर की शोभा और मन्दिर में स्थित वस्तुओं का वर्णन ।

टिप्पणी—इस पुस्तिका में मथुरा और वृन्दावन का बड़ा ही रोचक वर्णन है। इससे तत्कालीन मथुरा के पार्श्वप्रदेश, शोभा और उस युग की वेश-भूषा, पर्वोत्सव आदि का स्पष्ट पता चलता है। पुस्तिका व्रजभाषा में लिखी गयी है। पुस्तिका के प्रारम्भ या अन्त में ग्रंथकार का नाम नहीं है। अन्त में लिपिकार का नाम 'देवीप्रसाद' लिखा है। पुस्तिका की दशा अच्छी है। ग्रंथ के लिपिकार श्री देवीदासजी वृन्दावन में श्री राधारमण देव मन्दिर के मुनीम थे।

यह ग्रंथ श्री चैतन्य पुस्तकालय, गायघाट पटना में सुरक्षित है। पुस्तकालय—जिल्द ८, पु०-संख्या ५० है।

११३. बलभद्र-जन्मचम्पू-ग्रंथकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, हाथ का बना कागज। पृष्ठ-सं०—२। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार-प्रकार—$5\frac{1}{4}'' \times 10\frac{1}{2}''$। भाषा—संस्कृत-हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारंभ—"श्री राधारमणो जयंति अथोत्सव कथा तत्र बलभद्र जन्म गोपाल चम्पूकाव्ये ॥

ततश्च लब्ध सर्व समय संपछशे चतुर्दशे मासि श्रावणतः प्राक्पौर्णिमायां श्रवणर्क्षे समस्तु सुस्वरोहिणी गुणतया सुसमंसुतं सुसावणां द्रशुभ्रता विभ्राजमानतया पौर्णमासी चन्द्रमसमिव इति ॥ अर्थ ॥ पायो है सर्व लक्षण को संपत्ति जामै ऐसीजो आषाढ शुक्ल पौर्णमासी भृगुवार श्रवण नक्षत्र संयुक्त मध्यान समय पंचग्रह उच्चके ऐसे समय तुललग्न मे और भयो है"

अन्त—"ता समय वेद व्यास देवलऋ० देवरात वशिष्ट वाचस्पति नारद आदिक ऋषिगण के समूहनंदरायकू वलदेव जन्म की वधाई देने आये इन्है देख के नंदराय सब गोपन सहित उठके खडे होय गये और यथायोग्य आसन देयके सब देवर्षिनकूं वैठायौ और पाद्य अर्ध आचमनी इत्यादिक षोडशोपचारतें पूजन करिके हाथ जोडिके वडी स्तुती करतभये और बोले हे मुनीश्वर"

विषय—वलदेव-जीवन-चरित्र। श्री वलदेवजी के जन्मकाल तथा जन्म-सम्वन्धी पौराणिक रहस्य का उद्घाटन। श्री नंद द्वारा वलदेवजी के जातकर्म-संस्कार का वर्णन।

टिप्पणी—इस लघुकाय पुस्तिका में श्री भागवत पुराण की कथा के आधार पर श्री वलदेवजी की जीवनी गद्य और पद्य दोनों में लिखी गयी है। ग्रंथ व्रजभाषा में है। पुस्तिका के प्रारम्भ या अन्त में ग्रंथकार और लिपिकार के नाम का संकेत नहीं है। पुस्तिका श्री चैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना में सुरक्षित है। पुस्तकालय—जिल्द ८, पु०-सं० ५१ है।

११४. वेणु-गीत--ग्रंथकार—×। लिपिकार—श्री राधालाल गोस्वामी। अवस्था—प्राचीन, हाथ का वना, मोटा, देशी कागज। पृष्ठ-सं०--४। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार-प्रकार—५"×१३'। भाषा—संस्कृत, हिन्दी। लिपि--नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री गौरविधुर्जयति ॥ इत्थमिति—शुकः उवाचः स गो गोपालकः (श्री कृष्णः) इत्थं (एवम्भूतम्) शरत्स्वच्छजलम् (शरदा स्वच्छानि जलानि यस्मिन् तत्) पद्माकर सुगन्धिनावायुना वातं (व्याप्तं) वनं न्यविशत्-॥१॥

कुसुमितेति--सह पशु पालवः (पशुपालैः वलेन च सहितः) मधुपतिः (श्री कृष्णः) गाः चारयन् कुसुमितवनराजि शुष्मिभृङ्गद्विजकुल घुष्टसर: =

सहिन्महीध्रम् (कुसुमितासु वनराजिसु ये शुष्मिणः मत्ताः भृङ्गाः द्विजाः पक्षिणः च तेषां कुलैः घुष्टाः नादिताः सरांसि सरितः महीध्राः पर्व्वताः च यस्मिन् तत्वनम्) अवगाहय (प्रविश्य) वेणु चुकूज ॥२॥"

मध्य की पंक्तियाँ—पृ० सं०—२

"गावश्चेति—गावः कृष्णमुख निर्गत वेणु-गीत पीयूषं (अमृतम्) उत्तमित-कर्णपुटैः (उन्नमितै उत्तमितै कर्णरूपैः पुटैः पानपात्रैः) पिबन्त्यः (तथा) गोविन्दं दृशा (नेत्रभागेण) आत्मनि (मनसि) स्पृशन्त्यः (आलिङ्गन्त्यः इव तथा) शावाः (वत्साः) स्नूतस्तनपयः कवलाः (स्तनक्षरित दुग्ध-ग्रासमुखाः) स्म (एव) तस्थुः ॥१३॥

प्रायोविति—(हे) अम्ब, अस्मिन्वने ये विहगाः (ते) प्रायेण मुनयः (एव भवितु अर्हन्ति, यतः ते) कृष्णेक्षितं (कृष्णदर्शनं यथा भवति तथा) रुचिर प्रवालान् (रुचिराः प्रवालाः येषांतान्) द्रुमभुजान् (तरु-शाखाः) आरुह्य मिलितदृशः (संकुचितनेत्राः) विगतान्यवाचः (व्यक्तान्यवाचः सन्तः) तदुदिदं तेनउदितं प्रकटितं) कलवेणुगीतं (मधुर वेणुगीतं एव) शृण्वन्ति ॥१४॥"

अन्त—"एवम्विधेति—वृन्दावनचारिणः भगवतः (श्री कृष्णस्य) एवम्विधाः याः क्रीडा (ताः) मिथः (परस्परं) वर्णयन्त्यः गोप्यः तन्मयतां (कृष्णौ-कानुसन्धानपरतां) ययुः ॥२०॥"

विषय—श्रीकृष्ण-जीवन-काव्य ।

टिप्पणी—यह लघुकाय पुस्तिका प्रतीत होती है कि भागवतान्तर्गत 'वेणु-गीत' की व्याख्या (संस्कृत टीका) है। श्री कृष्ण के वेणु को आधार मानकर काव्य-रचना की गयी है। इसके पदों में लालित्य और ओज प्रतीत होता है। ग्रंथकार या लिपिकार के नाम का संकेत नहीं है। लिपि स्पष्ट, सुन्दर और प्राचीन है। यह पुस्तिका श्री चैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना में सुरक्षित है। पुस्तकालय-जिल्द ८, पु०-सं० ५३ है।

११५. भ्रमर-गीत--ग्रन्थकार—श्री सुन्दर लाल गोस्वामी। लिपिकार—श्री राधालाल गोस्वामी। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—६। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार—५½"×१२½"। भाषा—संस्कृत। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—सं० १६५० वि०।

प्रारम्भ—"श्री राधारमणोजयति गोप्यऊचुः मधुप किमुत वन्धो इति ॥ (हे) मधुप किमुत वन्धो सपत्न्याः (अस्मत्सपत्न्या) कुचविलुलितमाला कुंकुमश्मश्रुभिः (कुचाभ्यां विलुलिता आलिंगनदशायां सम्मर्दिता या माला तस्याः कुंकुमं येषु तैः श्मश्रुभिः) नः (अस्माकम्) अंघ्रि 'मा' स्पृश। मधुपतिः तन्मानिनीनां (पुरस्त्रीणांएव) प्रसादं वहतु (करोतु) किंच। यस्य इतः इहक् (स्त्री कुच कुंकुमयुक्त श्मश्रुवान् तस्य) यदु-सदसि विदुत्यं उपहासास्पदत्वं एव) १२"

मध्य की पंक्तियाँ—*पृष्ट-सं० ?*

"परावृत्यागत्वा पुनरागते प्रत्याह प्रियसखेति—(हे) प्रियसख, प्रेयसा (प्रियतमेन श्री कृष्णेन) प्रेषितः (त्वं) पुनः आगाः (आगतः) किम्? (तर्हि हे) अङ्ग, मे (मम) त्वं माननीयः (पूज्यः) असि। किंम अवरुन्धे (प्राप्तुमिच्छसि तत्) वरय (वृणीरव) (हे) सौम्य, इह (अस्मिन्नपि काले) दुरत्यज द्वन्द्वपार्श्वं (दुरत्यजं द्वन्द्वं मिथुनी भावः यस्य तस्य) पार्श्वं समीपम् अस्मान् कथं नयसि (नेष्यसि)? श्रीः (लक्ष्मीः नाम) वधूः = साकं (सहैव तत्र अपि) उरसि (एव) सततं (निरन्तरं) आस्ते ॥२०॥"

अन्त—"यावैश्रियार्च्चित मजादिभिराप्तकामैरिति—याः (गोप्यः) वैभावतः कृष्णस्य प्रिया आप्तकामैः (प्राप्तैश्वर्य्यैः) अजादिभिः (ब्रह्मादिभिः) अर्च्चितं (पूजितं तथा) योगेश्वरैः अपि आत्मनि (मनसि यत् चिंतितं) रासगोष्ठ्यां स्तनेषुन्यस्तं तत् पादारविन्दं परिरभ्य तापं (काम संतापं) विजहुः (परितत्युजः) ६२॥

वन्दे नन्दव्रजस्त्रीणामिति—यासां हरिकथोद्गीतं (हरिकथा सह 'उत' उत्कर्षेण 'गीत' चरीतं) भुवनत्रयं पुनाति (तासां) नन्द व्रजस्त्रीणां पादरेणुं (अहं) पुनः पुनः अभीक्षणासः वन्दे ६३" इति व्याख्येयम्"

विषय—कृष्णभक्तिपरक शृंगारकाव्य।

टिप्पणी—यह पुस्तिका 'भ्रमरगीत' की टीका है। मूलग्रंथ नहीं है। केवल टीका है और वह भी अधूरी है। प्रारम्भ में ११ श्लोकों की टीका नहीं है। अन्त में भी २० तक ही है। बाद के अन्य श्लोक नहीं हैं। टीका की शैली भी प्राचीन और अस्पष्ट है।

यह पुस्तिका श्री चैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना सिटी में सुरक्षित है। पुस्तकालय–जिल्द ८, पु०-सं० ५८ है।

११६. ब्रह्मस्तुति—ग्रंथकार—श्री सुन्दरलाल गोस्वामी। लिपिकार—श्री राधालाल गोस्वामी। अवस्था—अच्छी, देशी कागज। पृष्ठ-सं ६—८। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार—५½"×२१"। भाषा—संस्कृत। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री राधारमणाय नमः॥ नौमीड्येति—(हे) ईड्य, अभ्रवपुषे (अभ्रवत्वपुः यस्यतस्मै) तड़िदम्बराय (तड़िद्वत् अम्बरे यस्यतस्मै) गुंजावतंसपरिपिच्छ लसन्मुखाय (गुंजाभिः मुखं यस्यतस्मै) वन्यस्रजे (वन्याः वन पुष्पपत्र मय्यः स्रजः यस्यतस्मै) कवलवेत्रविषाणवेणु लक्ष्मश्रिये) कवलादिभिः लक्ष्मभिः श्रीः शोभा यस्यतस्मै) मृदुपदे (मृदुपादौ यस्यतस्मै) पशुपाङ्गजाय (पशुपस्य नन्दस्य अङ्गजः पुत्रः तस्मै तुभ्यं) नौमि॥१॥"

मध्य की पंक्तियाँ—पृष्ट-सं० ४

"यस्येति—इह (वहिर्जगति) इदं सात्मं (त्वत्सहितं) सर्वं यथा भाति, तथा (एव) यस्य (तव) कुक्षौ (अपि) तत्सर्वं (भाति) ततइदं (भानं) त्वयि मायया (त्वदिच्छया) विनाकिं (घटते)? ॥१७॥ आद्यैवेति—त्वत् (त्वत्तः, त्वाम्) ऋते (विना) अस्य (विश्वस्य) मायात्वं (स्वेच्छाधीनत्वं) ते (त्वया) अद्यएव किंमम न आदर्शितम् (अपितु प्रदर्शितम् एव तथाहि) प्रथमं (यदामया वत्सादयः न अपहृताः तदात्वम्) एकः (श्रीकृष्ण रूपः) असि। ततः वत्सवालादिहरणानन्तरम्) व्रजसुहृदवत्साः (व्रजसम्वन्धिनः सुहृदः वालाः वत्साः) समस्ताः (वेणुविषाणादयः चसर्वे) अपि (त्वं एव अमूः ततः) मया साकं (सह) अखिलैः (तत्वादिभिः) उपासिताः (सेविताः) तावन्तः (तावत्संख्याकाः) चतुर्भुजाः (अपिच अभूः ततः च) तावन्ति एव गजानि (ब्रह्माण्डानि त्वं) अभूः। तत् (तस्मात्) अमितं (अपरिमित) ब्रह्म (परिपूर्णम्) अद्वयम् (एव तत्स्वरूपम्) शिष्यते (अवशिष्यते)॥१८॥"

अन्त—"श्री कृष्णेति—(हे) श्रीकृष्ण! (हे) वृष्णिकुलपुष्कर जोषदायिन् (हे) क्षानिर्जरद्विजपशूदधिवृद्धिकारिन् (हे) उद्धर्मशार्व्वरहर (हे) क्षितिराक्षसध्रुक (हे) आर्कम् (आर्कम् अभिव्याप्यसर्वेषा) अर्हत (पूज्य) भगवन् (अकल्प) कल्प पर्य्यन्तं ते (तुभ्यं) नमः॥४०॥" इति॥

विषय—भक्तिकाव्य। श्रीकृष्ण के ब्रह्मरूप का विवेचन।

टिप्पणी—यह पुस्तिका मूल 'ब्रह्मस्तुति' की टीका है। श्रीकृष्ण के रूप को ब्रह्म का रूप मानकर निर्गुणस्तुति की गई है। टीका अच्छी तथा सुन्दर है। ग्रंथ के टीकाकार संस्कृत भाषा के विद्वान् प्रतीत होते हैं। ग्रंथ ध्येय है। यह पुस्तिका श्री चैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटनासिटी में सुरक्षित है। पुस्तकालय-जिल्द ८, पु०-सं० ५४ है।

११७. गोपी-विरहवर्णन—(टीका) ग्रंथकार—गोस्वामी सुन्दरलालजी। लिपिकार—श्री राधालाल गोस्वामी। अवस्था—अच्छी है। प्राचीन, हाथ का बना, मोटा, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—५। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार—५½"×१३"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री गौर विधुर्जयति ॥ गोप्य इति—कृष्णे वनं याते तं अनुद्रु तचेतसः कृष्णलीला प्रगायन्त्यः दुःखेन दुःखेन वासरान् निन्युः ॥१॥ भाषा—श्रीकृष्ण के वन में जाने के पीछे श्रीकृष्ण में आसक्त चित है ऐसी जो गोपी हैं ते सव श्रीकृष्ण की लीला कूं आपस वर्णन करके दिन समापन करती हीं ॥१॥ वामवाहु इति—गोप्य ऊचुः—वामवाहु कृतवामकपोलः वल्गितः भ्रूः मुकुन्दः कोमलाङ्गुलिभिः आश्रितमार्गम् अधरार्पितवेणुं यत्र ईरयति सिद्धैः सह व्योमयानवनिताः तत् उपधार्य विस्मिताः काममार्गेण समर्पितचित्ताः अपस्मृतनीव्यः सलज्जाः कश्मलं ययुः ॥२॥३॥ भाषा—गोपीगण परस्पर कहन लगीं—वामस्कंध में झुको भयो है कपोल जिनको, नाच रहीं हैं दोनो भौं जिनकी ऐसे श्रीकृष्ण कोमल अंगुरियान के द्वारा वंशी के सवरे छिद्र बंद करकें जव अधर मे अर्पण करके वजामने लगें है तव अपने पति सिद्धगण के संग वर्तमान व्योमयान में वैठी भई देवतान की स्त्री वेणुगीत श्रवण कर कामदेव के वाण से बिद्ध होयके खुल जाय है वसन जिनको ऐसी सुरस्त्री लज्जित होय करके मूर्च्छित होय जांय हैं ॥२॥३॥"

मध्य की पंक्तियाँ—*पृष्ठ-सं० २*

"प्रिय सुगन्धियुक्त तुलशी माल्यधारी श्रीकृष्ण कोई और मणि की सुमरणी हाथमे लेके गौअंन की गणना करत करत प्रिय-सखा के स्कंध में हस्तस्थापनपूर्वक जा समय गान करें हैं, ता समय उनकी वंशीध्वनि द्वारा आकर्षित कृष्णसार पत्नी सम्पूर्ण हरिणी गुण गण सागर श्री कृष्ण के समीप आयकर गृह की आशा त्यागन किये भई गोपिकागण की नांई तिन्हे चारो ओर सूं घेर लेंय हैं ॥१८॥१६॥"

अन्त—"एवमिति—हे राजन् तच्चित्ताः तन्मूमनस्काः महोदयाः व्रज-स्त्रियः अहःसु एवं श्रीकृष्ण लीलानुगायतीः रेमिरे ॥२६॥ हे राजन् श्रीकृष्णगतप्राण तन्मनस्का, महाभाग्यवती व्रजयुवती-गण तिनहीं की लीला गान कर करके नित्य क्रीड़ा करती हीं ॥२६॥"

विषय—कृष्ण-भक्ति-काव्य । गोपियों की कृष्ण के प्रति भक्ति और विरह का सुन्दर और मनोहारी वर्णन ।

टिप्पणी—कृष्ण-भक्ति-सम्बन्धी पुस्तिका है । इसमें मूल संस्कृत ग्रंथ की संस्कृत टीका का हिन्दी अनुवाद किया गया है । भाषा और शैली में खड़ी बोली का पुट है । पुस्तिका में गोपियों के विरह तथा श्रीकृष्ण के रूप का ललित वर्णन है । मूल पुस्तिका की भाषा सरल और प्रसाद गुणयुक्त है । पुस्तिका पूरी है ।

यह पोथी श्री चैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना सिटी में सुरक्षित है । पुस्तकालय की जिल्द–८ में पुस्तक-संख्या ५५ हैं ।

११८. इन्द्रस्तुति—(टीका) ग्रंथकार—गोस्वामी सुन्दरलाल गोस्वामी । लिपिकार—श्री राधेलाल गोस्वामीजी । अवस्था—अच्छी, प्राचीन, हाथ का बना, देशी कागज । पृष्ठ-सं०—२ । प्र० पृ० पं० लगभग—२२ । आकार—५$\frac{3}{4}$" × १२" । भाषा—संस्कृत-हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री हरिः ॥ इन्द्रस्तुति ॥ विशुद्धसत्वमिति हे ईश—तव धाम विशुद्धसत्वं शान्तं तपोमयं ध्वस्तरजस्तमस्कं च अग्रहणानुबद्धः माया-

मयः अयंगुणसंप्रवाहः ते न विद्यते १ हे भगवन् तुमारो स्वरूप विशुद्ध है सत्वगुण विशिष्ट है शांत है अर्थात् सदा एक सो है और रजो गुण तमो गुण-करके रहित है ये जो अज्ञान जनित मायामय गुण प्रवाह रूप संसार है सो तुमारे स्वरूप में नहीं है १ कुतोनु इति हे ईश तत्कृतः तद्धेतवः ये लोभादयः अबुधलिंगभावाः कुतः नु। तथापि धर्मस्य गुप्त्यै खलनिग्रहाय भगवान् दण्डं बिभर्ति २ हे ईश देह सम्बन्ध तुमकू नहीं है तो ता देह सम्बन्ध ते उत्पन्न जो लोभादिक हैं ते कहां सु आपमे होंयगे ये तो अज्ञानीन कू होय है अतः तुममे याकी सम्भावना नहीं है किंतु तथापि धर्म्मकू स्थापन करिबेकू एवं दुष्टन कू दण्ड देवेकू आप दण्ड धारण करो हो २"

अन्त—"नमस्तुभ्यमिति—भगवते तुभ्यं नम=सात्वतां (भक्त) पतये (रक्षक) पुरुषाय महात्मने वासुदेवाय कृष्णाय नमः ७

स्वच्छन्देति—स्वच्छन्दोपात्तदेहाय विशुद्धज्ञानमूर्त्तये सर्वस्मै सर्व-बीजाय सर्वभूतात्मने नमः ८

मयेदमिति—हे भगवन् यज्ञे विहते तीव्र मन्युना मानिना मया आसार वपुभिः गोष्ठनाशाय इदं चेष्टितम् ६

त्वयेशानुइति—हे ईश ध्वस्तस्तंम्भः त्वयानुगृहीतः अस्मि-भवामि अहं ईश्वरं गुरुं आत्मानं त्वां शरणं गतः १०"

विषय—पौराणिक भक्ति-काव्य।

टिप्पणी—१—यह लघुकाय पुस्तिका किसी पौराणिक भक्ति-ग्रंथ के स्तुति-अंश की टीका मात्र है।

२—उपरिलिखित इन पुस्तिकाओं का यद्यपि लिपिकाल नहीं दिया हुआ है, किन्तु प्रतीत होता है, इनकी लिपि बहुत प्राचीन नहीं है। तथापि १०० वर्ष की पुरानी लिपि होगी। किन्तु पुस्तिकाओं में जहाँ हिन्दी-भाषा का प्रयोग है, उसे देखने से स्पष्ट प्रतीत होता है कि भाषा प्राचीन और खड़ी बोली के नवीनतम विकास के पूर्व की है।

यह पुस्तिका गायघाट, पटना सिटी स्थित श्री चैतन्य पुस्त-कालय में सुरक्षित है। जि० ८, पु० सं० ५७ है।

११६. **श्री रामबाल-चरित्र**—ग्रंथकार—×। लिपिकार—श्री वंशीधर शर्म्मा। अवस्था-अच्छी, प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१३। प्र०

पृ० पं० लगभग—१६ । आकार—४½" x ११" । भाषा—संस्कृत, हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—सुन्दरलाल गोस्वामी । लिपिकाल—पौष, शुक्ल ११, सोमवार, सं० १६४४ वि० ।

प्रारंभ की पंक्तियाँ—"श्री गणेशाय नमः ॥ अथ श्री रामचन्द्रस्य वाललीला वर्णनं ॥ सूत उवाच ॥

श्री रामो बालरूपीच भ्रातृभिः सह सुंदरः ॥
जानुभ्यां सह पाणिभ्यां प्राङ्गणो विचचारहः ॥१॥
कौशल्यां प्राङ्गणे दिव्ये मणिरत्न विभूषिते ॥
तत्र सर्वासमापाता कैक्याद्याश्च मातरः ॥२॥
भरतं लक्ष्मणं चैव शत्रुघ्नं चापि क्रीडितुं ॥
मातुः क्रोडात्समुत्तीर्य रिंगणे कुरुते सदा ॥३॥
क्वचिन्नवेगतो याति क्वचिद्याति शनैः शनैः ॥
क्वचिच्च भरतो रिंगत् शीघ्रतो जानुपाणिभिः ॥४॥
पादयोर्नूपुरा एव शृरावन् याति शनैः शनैः ॥
कदाचित् किंकिणी एवं कटौ श्रुत्वा पलायते ॥५॥
आदर्शे क्वचिदात्मानं पश्यंतश्चात्मनो मुखम् ॥
वालकश्च द्वितीयं हि मत्वा स्पृशति पाणिना ॥६॥
अलब्ध्वा तस्य चांगानि रोदनं कुरुते पुनः ॥
क्वचिच्च वदनं रम्यं स्तंभेषु प्रतिविंबितम् ॥७॥
द्वितीयं बालकं मत्वा हास्यंच कुरुते प्रभुः ॥
भरतो हि निजं विंबं रत्नपृथ्व्यां हि भासितं ॥
हास्यं च कुरुते मंदं मंदमदं पुनः ॥८॥
लक्ष्मणोऽपि निजं बिंबं दृष्ट्वा हुंकुरुते मुहुः ॥
शत्रुघ्नो जानुपाणिभ्यां रिंगन् भूमौ निजं मुखम् ॥६॥
तस्याननेन संयोज्यो चोच्चैः कूजति तत्रह ॥१०॥
पंजरस्थं शुकं दृष्ट्वा तर्जनीं कुरुते प्रभुः ॥
सारिका तत्र पठति कर्णं दत्वा शृणोति सः ॥११॥
वाजपाला करे वाजं रामचन्द्रस्य सन्मुखे ॥
श्येनपालोपि रामाय श्येनं दर्शयते निजं ॥
विलोक्य सहते रामस्तत्तत्पक्षिगणं मुहुः ॥

कवित्त ॥

खेलन खिला में धने की रनपटा में
दुलरा में वहुभांति मनमोद हि वटा में हैं ॥
अंगन लगानें उठि सारिका वुलामें
फिर फिरकी फिरामें हसें हियो हुलसाम हैं ॥
देखन कूं धामें छविनगर की आमें
सवरूप कौं निहार भाग आपनौ सरामें हैं ॥
अंगना समाहि फूली अंगना में लालैं
लखिभालैं तोर मोती नवछावर लुटा में हैं ॥"

मध्य की पंक्तियाँ—पृष्ठ-सं०—८

"कौशल्या प्रांगणे तिष्ठन् रामार्थे सर्व वालकाः ॥
वालान् वीक्ष्य तथा रामो क्रीडार्थं तु मनो दधे ॥८१॥
उवाच लक्ष्मणं रामो धनुर्मे दीयतामिति ॥
सतूणं चापिखड्गच खेटकाय मनोमम ॥८२॥
लक्ष्मणो गृहकोणेषु चायुधार्थं जगामह ॥
न ददर्श धनुर्वाणं खड्गंचापि चुकोप स ॥८३॥
चत्वारो भ्रातरस्तेच कौशल्यां पप्रच्छुरुत्सुका ॥
धनुर्वाण स्तथाखड्ग क्वास्तिमातः प्रदीयताम् ॥८४॥
न जानीमो धनुर्वाणं तव वत्स तथाह्यसि ॥
नवीनं गृह्यतांवत्स माच शोके मनः कृथा ॥८५॥

रामाहृपद ॥

वाण धनैया कितधरी दे दे री मैया।
तेरी सौ आंगन खेलैं मिल चारौं भैया।
काल दूर यासौं गए सव सखा सहैया।
वाग सुभग वैठक वनी आछे वसन वनैया ॥
नाना विध पंछी वोलने लागे परम सुहैया।
वान एक खोयो गयो सरयूतट मैया।
नीर निकट हम ना गये वावा की दुहैया।
तुलसी भरत वोलायकें पूछे क्यों न मैया।"

अन्त की पंक्तियाँ—

सवैया

"धाई न चारहू भाई न चाहिकें
तोरें त्रिनें सुख आंसू नहाये ॥

राम निहार निमेष रह्यो
तजि मोदित भूप शरीर भुलाये ।।
जातते गायेन आनन एकही
देखि प्रमोद जे मातन पाये ।।
देद्विज देवन दान महान
नरेश कुमारन वेगि बुलाये ।।
संग सखान समेत आनन्दसौं
जाय पितापद वंदि नमाये ।।
सूंघ कै शीश सवैके सिकारके
कौतुक राउक्रमैं कहिवाये ।।
फेर दीये पल्ल बांटि प्रसंसलै
भीतर सानुजराम सिधाये ।।
वारि उत्तारके वारिमणी
मुखचूम महामुद मातन पाये ।।"

विषय—पौराणिक तथा ऐतिहासिक—श्री रामचन्द्र की जीवनी। रामचन्द्र के जीवनकाल की बाल-लीला के आधार पर रचना की गई है। रामचन्द्रजी के बाल-जीवन के आधार पर संस्कृत में श्लोक हैं और हिन्दी में उनका रूपान्तर है। कहीं-कहीं जिस प्रसंग का पूर्व भाग संस्कृत में लिखा गया है, उसी प्रसंग का उत्तर भाग हिन्दी में, कवित्त, सवैया में लिखा हुआ है। दो-तीन पद गोस्वामी तुलसी दास की 'कवितावली' से अविकल उद्धृत कर दिये गये हैं—(पृ०-सं० २ में) सं० श्लोक—"जलपात्रे च रामेण चंद्रविंवं विलोकितं आदि" के बाद—

कवित्त

"कवहू शशि मांगत आरि करैः ।।
कवहूं प्रतिविंव निहार डरैं ।।
कवहूं करताल वजायके
नाचत मातु सवै मनमोद भरैं ।।
कवहूं रिसिआय कहैं हठकै
पुनि लैंइ सोइ जेहि लागि अरैं ।।

अवधेश के बालक चार सदा
तुलसी मन मंदिर में विहरैं ॥"
और भी देखिये :—(उसी पृष्ठ में)

"दंत पंक्ति मुखे वीक्ष्य कुंद मुक्तासमप्रभाम् आदि" के बाद—

"दंत की पंगत कुंदकली
अधराधर पल्लव खोलन की ॥
चपला चमकै घन विज्जु जगै
छवि मोतिन माल अमोलन की ॥
घुंघरारि लटैं लटकै मुख ऊपर
कुंडल लोल कपोलन की ॥
नवछावर प्राण करैं तुलसी
बल जांउ लला इन बोलन की ॥"

यत्र-तत्र स्वरचित पदों में भी 'तुलसी' का नाम जोड़ दिया गया है। क्योंकि ये पद तुलसी की रचना में नहीं है। जैसे–पृ०-सं० ६ में—

"नीर निकट हम ना गये बाबा की दुहैया।
तुलसी भरत बोलाय कै पूछै क्यौं न मैया ॥"

टिप्पणी—मूल पोथी संस्कृत में है। प्रस्तुत पोथी में मूल संस्कृत के आधार पर 'सवैया' और 'कवित्त' में भाषा में रचना की गयी है। प्रारम्भ में संस्कृत के श्लोक हैं—बाद में हिन्दी के गेय पद हैं। रचना सुन्दर और स्पष्ट है। संस्कृत-रचना में भी प्रसाद गुण है। भाषा अवधी (रामचरित-मानस) से मिलती-जुलती है। यत्र-तत्र-ऐसी भाषा का भी प्रयोग है—"बान एक खोयो गयो सरयू तट मैया।" (पृ०-सं० ६) यहां 'खोयो गयो' देखिये। और भी (पृ०-सं० ३ में) रनियां, बचनियां, हसनियां और लटकनियां। कहीं-कहीं ग्रंथकार ने गद्य में भी वर्णन किया है—(पृ०-सं० ६ में) "कस्मिन् राज्याभिषेकश्च कस्मिंश्चिन्मुनिमेषकः आदि" के बाद—अथभाषावार्ता ॥ द्वादशवन के मध्य में प्रमोदवन है।

तहां खेलते भये। तहां एक धीवर आयकै बोलो। कुशा काश के बीच में अर्नां (अरण्य-जंगली) भैंसा है। मनुष्य बहुत मारै है। चारो भाइ गए रामने एकही बान में प्रानहर लए। देवता बन के चरन में पडो में बिल्वनाम गंधर्व हो। नारद में साप दीनो आज मुक्त भयो। मेरी आपके नाम की मूर्ति पूजा होय। तवसों बिल्वहरि तीर्थ भयो। वैशाष में यात्रा हाय है। गन्धर्व स्वर्ग में गयो ॥"

इस गद्य-भाषा से प्रतीत होता है कि ग्रंथ-रचना का अभिप्राय 'कथा-वाचन' रहा है। यह भाषा कथा-शैली को प्रकट करती है। ग्रंथ के लिपिकार श्री पं० वंशीधर शर्मा छपरानिवासी थे। लिपिकार ने 'ब' और 'व' के लिए केवल 'व' का प्रयोग किया है। लिपि स्पष्ट और सुन्दर है। यह ग्रंथ लगभग डेढ़ सौ वर्ष प्राचीन है।

२—ग्रंथ के अन्त में (संस्कृत) एक पृष्ठ की "रामयज्ञोपवीत-लीला" नाम की पुस्तिका भी है। पोथी सुपठ्य और अनुसंधेय है।

यह पोथी श्री चैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटनासिटी, में सुरक्षित है। जिल्द ६ में पोथी-सं० ६५ है।

१२०. श्रीरामजन्मोत्सव—ग्रंथकार—श्री सुन्दरलाल गोस्वामी। लिपिकार—श्री वंशी-धर शर्मा। अवस्था—अच्छी, प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१३। प्र० पृ० पं० लगभग—१६। आकार—४½"×४½"। भाषा—संस्कृत, हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—माघ, कृष्ण, रविवार, सं० १६४४॥

प्रारम्भ—"श्रीरामचन्द्राभ्यां नमः॥ अथ श्रीरामजन्मोत्सव लिख्यते॥ श्लोक॥

शांतं शाश्वतमप्रमेयमनघं निर्वाण शांति प्रदम्।
ब्रह्माशंभु फणीन्द्र सेव्यमनिशंवेदान्त वेद्य विभुम्॥
रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरुं माया मनुष्यं हरिं।
वंदेहं करुणाकरं रघुवरं भूपालचूडामणिम्॥१॥

चौपाई ॥

एकवार भूपति मनमाही ॥
भई ग्लानि मेरे सुतनाही ॥
गुरु गृह गये तुरत महिपाला ॥
चरण लागि करि विनय विशाला ॥
निज दुखसुख नृप गुरुहि सुनाएउ ॥
कहि वशिष्ठ बहुविधि समझाएउ ॥
धरहु धीर होइ हैं सुतचारी ॥
त्रिभुवन विदित भक्त भयहारी ॥"

मध्य की पंक्तियाँ—पृ०-सं० ८

कवित्त ॥

"आये सुर किन्नर-विमान-छाये
अवध में रामके जन्म भई शोभा शुभजालकी ॥
बाजत नगारे गामें बधाई नगरवारे।
द्वारे पै लसत हैं गजेन्द्र हम पालकी ॥
आई पुरबाल लियें कंचन के थाल ही के।
करत सराहना कौशल्याजी के भालकी ॥
नगर बधाई आज घर घर छाई देखैं
देवगण ठहें-जै-जै दशरथ लालकी ॥५७॥"

अन्त—"ईत में वशिष्ठादि सब मोद में मगन भये ॥
पुरवासी घर-घर मंगल-गीत गावत भये ॥
देवता-अमृत-पीकै नाच देखत भये ॥
जाचक धन पाय खुशी भये ॥ हे राजन् ॥
तीनो लोक में खुशी-भई ॥
ऐसी ही खुशी श्रोता वक्ता कैं होयगी ॥
श्री शुकदेवजी बोले ॥ राजा—
ऐसी खुशी छोड कै।
मोपै आगै कथा नाय कही जाय है ॥
आज तो सब याही-खुशी में खुशी रहौ ॥
काल छटी की कथा कहूंगो ॥
बोलो राजा रामचन्द्र की जै ॥७४॥"
इति श्री रामचन्द्र-जन्मोत्सव श्री सुन्दरलाल कृतसम्पूर्णम् ॥

विषय—श्री रामचन्द्र के जन्मकाल में दशरथ के घर में हर्षोल्लास और अयोध्यापुरी में महोत्सव का वर्णन के साथ-साथ जन्म, जातकर्म-संस्कार, विविधदान तथा जन्मकुण्डली आदि का भी वर्णन है। पूर्व ग्रन्थ के ही समान बीच-बीच में संस्कृत में श्लोक-रचना की गई है। विशेष रचना हिन्दी में ही है। एक स्थान पर 'राम-जन्म' काल में तुलसी के पद अविकल उद्धृत किये गये हैं—"भये प्रगट कृपाला दीन दयाला कौशल्या हितकारी, आदि।"

टिप्पणी—इस ग्रन्थ में रामचन्द्र के जन्मकाल तथा उसके बाद अयोध्या-वासियों के हर्ष आदि का मनोहारी-वर्णन है। यत्र-तत्र-गद्य में भी रचना हुई है। प्रारम्भ में संस्कृत श्लोक है, उसके बाद हिन्दी भाषा में रचना है। ग्रंथ सुपठ्य है। ग्रंथ की भाषा अच्छी और प्रसादगुणविशिष्ट है। लिपि स्पष्ट और सुन्दर है।

यह पोथी श्री चैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना सिटी में सुरक्षित है। जिल्द ६ में, ग्रंथ-सं० ६४ है।

१२१. **श्री जानकी-स्वयम्बर**—ग्रंथकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी, प्राचीन-मोटा कागज। पृष्ठ-सं०—६। प्र० पृ० पं० २०। आकार—५½"×१२"। भाषा—संस्कृत-हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्रीगणेशाय नमः॥ श्रीजानकी स्वयंवरवर्णयते॥
महेश्वरेण चाज्ञप्तो विश्वामित्रो महामुनिः॥
सिद्धाश्रमाच्चचालाशु रामार्थं मुनिपुंगवः॥१॥

सवैया॥

सूरज की अजकी कविराय दिलीप की रीत कहाले सुनाऊँ॥
श्री रघुके अजके जसकी सुकथान की ग्रंथ कहां लौ लिखाऊँ॥
जो रघुनाथ के तात की बात कहौ तौ कहूं कहिं अंत न पाऊँ॥
तातैं सुनो रघुवीर कथा तुमको कहि कै तन ताप सिराऊँ॥२॥

श्लोक॥

साकेत नगरं दृष्ट्वा मुमुदे कौशिको मुनिः॥
राजद्वारे समागत्य ददर्श महतीं श्रियम्॥३॥

द्वारपालैः समागत्य प्रनेमुः शिरसा मुनिम् ।।
मुनिनाः प्रेषिताः सर्वे राजानं च विजिग्युः ।।४।।
राजा दशरथः श्रुत्वा वशिष्ठादिभिरन्वितः ।।
पूजामादाय महतीं निर्जगाम सभासदैः ।।५।।
आगत्य वंदनं कृत्वा चरणौ जगृहे मुनेः ।।
आलिंगितस्तु मुनिना वशिष्ठेन महामुनिः ।।६।।
राजानं च समालिग्य विवेशांतःपुरं मुनिः ।।
पाद्यमर्घं ददौ राजा वर्त्तां चक्रुः परस्परं ।।७।।"

मध्य की पंक्तियाँ—पृष्ठ-सं० ४

श्लोक ।

"अन्येतु राक्षसा सर्वे लक्ष्मणेन हता युधि ।।
पक्षिणो भोजयामास सुवाहो पललेन वै ।।४६।।
विक्रमं तु तयोर्दृष्ट्वा सांयुगीनं महामुनिः ।।
ऋषयः पूजयांचक्रुः यज्ञपूर्तिं प्रचक्रमुः ।।५०।।
मुनि प्रणम्य तौ वीरौ मुमुदे तौ कुमारकौ ।।
आशिषा योजयामासुः मुनिः पाणितलेन वै ।।५१।।

सवैया ।।

पूरन यज्ञ कियो परिपूरन
ब्रह्म जहां तहां नादु चिताई ।।
नाम लियें अघवृंद टरै पुन
आपुन वान कमान चढ़ाई ।।
ता दिन तें मुनरावन की विधि
वामन ज्यों रुचि मीच वढाई ।।
देवन जाय कह्यौ सुर राजहि
रामभए जग लेहु वधाई ।।५२।।

सूत उवाच ।।

तस्मिन्काले नरेशस्य जनकस्य महात्मनः ।।
प्रतीहारो महावुद्धिराजगाम महामतिः ।।५३।।
प्रणम्य च मुनिस्सर्वान् यज्ञार्थं च विजिज्ञये ।।५४।।

दुत उवाच ।।

जनकस्य गृहे राज्ञो धनुर्यज्ञोहि वर्तते ।।
भवद्भिर्गम्यतां शीघ्रं दया च यदि क्रीयते ।।५५।।

कवित्त ॥

राम-लक्ष्मन जूसौं बोलि कह्यौ मुनि बात
दूत आयो प्रातहौं जनकपुर जाइहौं।
जो कहौ तो राजा दशरथ जू पै पहुंचाऊँ
नहि संग चलो तुमें कौतुक दिखाइहौं। *
छोटी सी कछौटी कटि धनुहीन मोटी
करचौंटी घर कह्यौ नेंकु होहि तौ चढाइहौं।
राज तेज नमर्रिषि राजतैं में पायो गुन
ग्रैसो ही शीव के धनुष हूतैं गुनपाइहौं ॥५६॥"

अन्त— दोहा ॥

"उठे लखन निशि विगत सुन अरुण सिखा धुनि कान ॥
गुरुतै पहिले जगतपति जागे राम सुजान ॥१६॥

वार्ता ॥

सौने की दीवार बनी है स्फटिक मणिकौ दरवाजो हैं कंचन के किवार चढे हैं तापै मानक कौ बंगला बारह द्वारे कौ बनो है ताके भीतर पधारे तहांरो सें पट्टी पन्ना पुखराज नीलम की बनी है त्रिकोण षटकोण अठपहलू बदरूमी कित्तावने हैं तामे पेंड लगे हैं सरौं हैं साल हैं तमाल हैं मोलसरी खिरनी खिजूर हैं ग्राम जामन ग्राड़ु ग्रनार नीबू नारंगी सेव सीताफल केर करौंदा ॥ बदाम छुहरी किसमिस ग्रंगूर सबरूत की मेवासौं पेंड झूम रहे हैं ताके ग्रागे ॥ ग्रठपहलू तलाव है मूंगा पन्ना की पीड बनी है ताके चारौ ग्रोर फुलवारी फूली है गेंदा गुल्दावदी गुलाव गुलवांस जहां जुलतुररा गुलमहदी गुड-हरा गुलाली केतकी चमेली रायबेल सौनजुही के बडा सदा बसंत दुपहरा तमाली मालती सृगारहार नरगस सुंगधराय चंदन की लपट झपट तुलसी की क्यारी ऐसी सोभा देखत जांय है ॥"

---

* कवित्त प्रारम्भ करने पूर्व गद्य में यह प्रसंग-निर्देश किया गया है। यह काव्य-शैली प्रायः सम्पूर्ण ग्रन्थ में है।

विषय—श्री रामचन्द्र के जीवन से सम्बन्धित रचना। राम-जन्म के पश्चात् विश्वामित्र का राजा दशरथ के यहाँ एक-दिन अचानक आना और असुर-संहार के लिए राम-याचना। यहीं से ग्रंथ का विषय प्रारम्भ होता है और "सीता स्वयम्वर" में जाकर समाप्त हो जाता है। बीच में असुर-संहार, अहल्या-उद्धार, जनक-बाग-दर्शन, सीता-मिलन, धनुर्भंग की रोचक कथा का सरस-शैली में वर्णन है। एक स्थान पर 'तुलसी' के पद अविकल रख दिये गये हैं—

'मांगहु भूमि धेनु धन कोपा
सर्वस देहुं आज सहरोपा।'

जिस प्रसंग का उल्लेख संस्कृत में है, उसके बाद का प्रसंग हिन्दी में लिखा गया है।

टिप्पणी—इस पोथी में संस्कृत के श्लोकों के साथ-साथ हिन्दी के दोहा, चौपाई, सवैया और कवित्त भी हैं। ग्रंथ अपूर्ण है।

कथा-वस्तु का मध्यकालीन गद्यशैली में वर्णन किया गया है। भाषा 'व्रजभाषा' से मिलती-जुलती-सी है। कहीं-कहीं पच्छिमी भोजपुरी के भी शब्द हैं अर्थात् मिर्जापुर और बनारस के आस-पास की बोली के शब्द हैं। ग्रंथ की रचना 'कथा-शैली' पर है। यद्यपि ग्रंथ में (खंडित होने के कारण) कहीं भी ग्रंथकार का नामोल्लेख नहीं है, तथापि प्रतीत होता है कि किसी 'रामकवि' नामक व्यक्ति ने इसकी रचना की है। जैसा कि ग्रंथ के प्रारम्भ की पंक्ति—

"सूरज के अर्जी की कविराम
दिलीप की रीत कहा लै सुनाओं।"

ग्रंथ की लिपि प्राचीन है। लिपि से ग्रंथ लगभग सौ वर्ष प्राचीन प्रतीत होता है।

यह ग्रंथ श्री चैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटना में सुरक्षित है। पुस्तकालय में जिल्द—६ में पु०-सं० ६६ है।

१२२. श्री रामचरित्र (अयोध्या से लंका)--ग्रंथकार—श्री सुन्दरलाल गोस्वामी। लिपिकार—×। अवस्था--प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—३८। प्र० पृ० पं० लगभग—२८। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। आकार--७½"×१३"। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारंभ—"अथ श्रीरामचन्द्रस्य वनगवन लीला वर्णयते
वांमांगे च विभाति भूधरसुता देवापगा मस्तके भाले वालविधुर्गले च गरलं यस्योरसि व्यालराट् सोयं भूति विभूषणः सुरवरः सर्वाधिपः सर्वदा सर्वः सर्वगतः शिवः शशिनिभः श्री शंकरः पातुमां १ प्रसन्नतां योनगतोऽभिषेकतः तथा न मम्ले वनवासदुःखतः मुखांवुज श्रीरघुनंदनस्य मे सदास्तुतन्मजुल मंगलप्रदं २ नीलांवुजश्यामल कोमलांगं सीतासमारोपितवामभागं पांणौ महासायकचारुचापं नमामिरामं रघुवंशनाथं ३

दोहा

जवतें राम व्याहि घर आये
नितनव मंगलमोद वधाए
मुदित मातु सव सखी सहेली
फलित विलोकि मनोरथ वेली
रामरूप गुणशील सुभाऊ
प्रमुदित होंहि देखि मुनिराऊ
सवके उर अभिलाख यह
कहहिं मनाय महेश
आपु अच्छत युवराज पद
रामहिं देहिं नरेश ४

एकसमें राजा सव समाज सहित सभा में विराजे हैं वातें अनेक हो रही हैं पास दरपन धरौ हौ राजा ने उठाय लीनो मुख देखो मुकुट सम्हारो पाछै कान के पाउ सुफेद वाल निहारे"—

मध्य की पंक्तियाँ—पृष्ठ-सं० २२

कवित्त

"दीरघ दरी नव सैं **केशोदास** केशरी ज्यौं
केश केशरी कौं देखिवन करी ज्यौं कपत हैं।
वासर की संपत उलूक ज्यौं नचिवत चकवा

ज्यौं चंद चितैं चौगुनौं चपत हैं ॥
केकी सन व्याल ज्यौं विलात गात घनस्याम
घनन के घोरन जवा सौं ज्यौं तपत हैं
भौंर ज्यौं भ्रमत वन जोगी ज्यौं जगतरत
साकत ज्यौं राम नामते रोइ जपत हैं २८" *

अन्त—"सुग्रीव बोले तेरे भीतर रामना है तव छाती की त्वचा फार रामनाम दिखाये सव विस्मित भये तव वरुण कौ विमान छीन लीनौ राम जानकी लक्ष्मण सहित पुष्पक विमान पर विराजे विभीषण बोलो कुछ दिन इहां रहौ राम बोले भर्त सौं करार करि आयो हूं चौथे वर्ष बीतैंगे तव आऊंगो सोई एक दिन वाकी है वानर राक्षस रिच्छसव मित्र कलत्र समेत पुष्पक चढ़ि रघुनाथ जू चले अवधि के हेतु जानकी कू संग्राम भूमि दिखामें है
अत्रासीत्फणिपासबंधनविधिः शक्त्या भवद्देवरे गाढं वक्षसि ताडिते हनुमता द्रोणाद्रिरत्राहृतः दित्यैरिंद्रजिदत्र लक्ष्मणशरै लौंकातरं प्रापितः केनाप्यत्र मृगाक्षि राक्षसपतेः कृंत्ताचकण्ठाटवी ४५
सेतु सीतहि सो मनो दरसाइ पंचवटी गए वांदरादिआनेक लैलै विदाइतउत कौ गए पाइ लगि अगस्त के पुनि अत्रि पै सुविदाभए चित्रकूट विलोकिकै गुरु गेह नेह जतायकै वालमीक विलोक प्राग गयो विमान उडाय कै भारद्वाज के आश्रम मे लखि उतरत विश्राम करत पै हनुमान पठत गये ते नर रूपधर मुनिके संग अनेक ज्ञानवार्ता कर्तभए ॥"

इति श्री रामायणे लंका विजय कथा श्री सुंदरलालेन विरचिता समाप्ताः मिति आसाढ़ वदि १३ शुक्रवार संवत् ।

विषय—रामभक्ति-काव्य । अयोध्याकाण्ड से जीवनवृत्त प्रारम्भ करके लंकाकाण्ड में समाप्त । कुछ स्थलों पर तुलसी के पद अविकल रख दिये गये हैं । ग्रंथकार ने बीच-बीच में रामकथा के आधार पर कवित्त, सवैया, दोहा और चौपाई में स्वतंत्र मौलिक रचना की है । (अपने ग्रंथ में इन्होंने प्रसंग-निर्देश के लिए गद्य में

* ग्रंथकार वैष्णवसिद्धान्त (माध्वसंप्रदाय) के माननेवाले हैं। यहां उन्होंने शाक्तों (शक्तिपूजक तांत्रिकों) का मजाक उड़ाया है।

लिखा है। गद्य की शैली 'कथा' वाली है।) जैसे—(पृष्ठ-संख्या २२)

"माली मेघमाल वनपाल विकराल भट
नीकैं सवकाल सींचैं सुधासार नीरकौं
मेघनाद तें दुलारो प्राणतें पियारो वाग
अति अनुराग जिय जातुधान धीरकौ
तुलसी सो गान सुन सियकौ दरस पाय
वैठि वाटिका सुजाय वल रघुवीर कौ
विद्यमान देखत दशानन कौ कानन सो
तहांसि नहसि कियो साहसी समीर कौ ३१
किलकि कोपि कपि भये भूमिपाल सिंधु
जायवन वामन में रौररूर पारी है
जामन जंमीरी जाम जावित्री औ जायफल
जीरो जिमि कंद जड पेडतें उखारी है
वेल वेर वहेडे विज्येरेवरख काचन वास
वोलसरी* आधौं आध करडारी है
भोजसिंही भोजपत्र भारंगी मरंग मोग
नारंगी नारियल अनंत के उजारी है
कारो रुख कायफल केतकी करौंदा
केरा कठर खरोट कुरु कुरु कचवाए हैं
दोंना दाख दालचीनी हरेई कदम फल
देवदारु दाडमी सो खाख में मिलाये हैं
आमली वदाम आम छुहारे सुपारी
सेव खिरनी खिजूर नीवू तोर-तोर खाए हैं
रामन कौ वाग जाकौ वाग जाकौ वडो अनुराग
हनुमान ने उखाड पेड सिंधु में वहाये हैं २"

टिप्पणी—वाल्मीकि-रामायण और रामचरित-मानस की कथा के आधार पर ग्रन्थकार ने रामवृत्त का गद्य-पद्य में, व्रजभाषा में वर्णन किया है। वर्णन-शैली-'कथा'-जैसी है।

वर्णन बड़ा ही रोचक और हृद्य है। कहीं-कहीं उक्त रामायण के श्लोक और पद भी अपने रूप में दिये गये हैं।

---

* वोलसरी = मौलश्री।

ग्रंथकार श्री गोस्वामी सुन्दरलाल जी संस्कृत और हिन्दी (व्रज) के अच्छे विद्वान् थे। इस सूची में उनके अनेक ग्रंथों के विवरण आये हैं। उनमें यह ग्रंथ सबसे बड़ा और मौलिक तथा अद्यावधि अप्रकाशित है। ग्रंथ के उद्धृतांश से यह स्पष्ट हो जाता है कि छन्द और अलंकार के साथ ही कवि का भाषा और अनुप्रास, पर भी पूरा अधिकार था। ग्रंथ में यत्र-तत्र अपने दार्शनिक सिद्धान्त की ओर भी ग्रंथकार ने संकेत किया है। प्रसंगानुसार सिद्धांतविरोधियों को भी उपमा के रूप में कटाक्ष का पात्र बनाया है। ग्रंथ हृद्य और अनुसंधेय है। रचना स्निग्ध और मनोरम है। ग्रंथकार ने रचनाकाल के सम्बन्ध में आषाढ़वदी, १२, शुक्रवार तो लिखा है किन्तु संवत् के लिए केवल 'संवत' लिखकर छोड़ दिया है। किन्तु श्री चैतन्य पुस्तकालय और मन्दिर के वर्तमान अधिष्ठाता श्री कृष्ण चैतन्य गोस्वामी जी के कथनानुसार इसका रचनाकाल लगभग डेढ़ सौ वर्ष प्राचीन है। ग्रंथकार इनके प्रपितामह थे।

यह पोथी श्री चैतन्य-पुस्तकालय, गायघाट, पटनासिटी में सुरक्षित है। जिल्द ६ में पु०-सं० ६७ है।

१२३. जन्माष्टमी-राधाष्टमी-वधाई—ग्रंथकार—श्री राधालाल गोस्वामी। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी, प्राचीन, हाथ का बना, देशी कागज, पूर्ण। पृष्ठ-सं०–५०। प्र० पृ० पं० लगभग–२८। आकार—६"×८"। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री राधारमणो जयति अथ जन्माष्टमी की वधाई प्रारम्भ श्री नंदराम जू की वंसावलि

रागमारू चौपाई

श्री चैतन्य चरन सिरनाऊँ
व्रजपति वंशावलि सुनाऊँ
जो वरनी श्रीरूप गुसांई
सो पुनि हित वृंदावनि गाई
ताहु ते संक्षेप करी अब
कारण यह आलस युत जन सब

यादव कुल मे परम प्रधान
देव मीठ जू सब गुन खान
तिनकी रानी द्वै सुखदानी
प्रथमा क्षत्री कन्या मानी
दूजी वैश्य जाती की कन्या
श्री हरिभजन परायण धन्या
पहेली के सुत सूरसेन हैं
तिनके श्री वसुदेव सुवन हैं
दूजी के परजन्य सुहाये
परम पुनीत पुराणन गाये
मेघ समान दया सनमान
वरषत सकल प्रजा परदान
गुण लच्छन परजन्य समानो
पत्नी तासु बरेसी जानो"

मध्य की पंक्तियाँ—पृष्ठ-सं० २५

"जो माग्यौ सो दियो नंदजू वहुत भाति सनमान्यौ ॥
और बहुत व्रजपति धनदीन्यौ बड़े ठौर को जान्यौ १।
देत असीस वरी सजुगन जुग चिरजीवो सुततेरो ॥
अग्रदास नंदलाल जगतपति रघुनंदन पति मेरौ ॥१२॥"

अन्त--

रागहमीर

"ममारखवादियाँ वे नित होवे असी सादियाँ वे ॥
गाँदी वजाँदी और रिझाँदी महलादी सुधर-सुधर साहे वजादियाँवें ॥१॥
गोवरधन वृजरानि प्रघटियाँ रसिक नमन अहलादियाँ वे ॥२॥"

विषय—(१) पृष्ठ-सं० १ से ३१ तक—जन्माष्टमी की बधाई (नन्दोत्सव) में श्री अग्रदास, श्री हितहरिवंश, श्री छीत स्वामी, श्री सूरदास आदि विभिन्न व्रजभाषा-कवियों की रचनाओं का संग्रह तथा विभिन्न रागों में स्वरचित पदों का समावेश। (२) पृष्ठ-सं० ३२ से ३६ तक ठाढ़ी (कौतुक) के पदों में जन्मोत्सव के बाद विविध परिधानों में आये कौतुक-नर्तकों के नृत्य तथा गान आदि का मनोहारी वर्णन। (सम्भवतः श्री राधालाल गोस्वामी जी की स्वकीय-रचना) (३) पृष्ठ-सं० ३७ से ५० तक—श्री राधिका जी की बधाई के पद में श्री

वृषभानजी की वंशावली और विभिन्न पदों में श्री कृष्ण-जन्म-वर्णन के साथ साथ राधिका-जन्मोत्सव-वर्णन। मागध, वन्दीजन आदि के गान और गोपियों में उल्लास का विशद वर्णन।

टिप्पणी—यह ग्रंथ श्री राधालाल गोस्वामी जी द्वारा संपादित है। इसमें श्री सूरदास, श्री हितहरिवंश, श्री गिरधर दास, श्री अग्रदास और श्री गुण-मंजरी जी प्रभृति अनेक कवियों, संतों की रचनाओं के साथ साथ श्री गोस्वामी जी ने अपने पद भी दिये हैं। विभिन्न रागों और छंदों में रचित पदों का विशेष रूप से निर्देश भी किया गया है। ग्रंथ में यत्र-तत्र अनेक भाषाओं और बोलियों में रचित रचना का समावेश है। प्रतीत होता है व्रजभाषा के अतिरिक्त राजस्थानी और पंजाबी भाषा के कवियों की भी रचना संग्रहीत हुई है। संग्रह के दृष्टिकोण से ग्रंथ का महत्व है। इसमें लिखित पद सम्भवतः अप्रकाशित और अप्रचलित हैं।

यह ग्रंथ श्री चैतन्य पुस्तकालय गायघाट, पटना सिटी में सुरक्षित है। पुस्तकालय में ग्रं०-सं० ४४१—१७४२ है।

१२४. अनेकार्थमंजरी—ग्रंथकार—श्री नंददास जी। लिपिकार—×। अवस्था—जीर्ण-शीर्ण, हाथ का बना, मोटा, प्राचीन देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१२। प्र० पृ० पं० लगभग—२०। आकार—४½"× ६"। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—मार्ग शीर्ष, कृष्ण १४, वुधवार, संवत् १८५८ वि०, सन् १८०४ ई०।

प्रारम्भ—"ॐ श्री गणेशाय नमः ॥ अथ अनेकार्थ मंजरी लिख्यते

सु प्रभु जोतिमय जगत भय कारन करन अभेद
विघन हरन सव सुषकरन नमो नमों ता देव १
एकें व·······अनेक ह्वै जगमगाति जगधाम
ज्यौं कंचनतें किंकिनी किंकिन कुंडल नाम २
उँचरि सत्क·······संस्कृत अरु समकरन असमर्थ
तिनहित नंद सुमत यथा भाषा अनेक अर्थ ३

गोनाम।

गो इन्द्रीय विव × × कजल स्वर्ग वज्र षग छंद
·········गोतर गो किरन गोपालक गोविंद ४"

मध्य की पंक्तियाँ—पृष्ठ-सं० ६ बुधनाम

"बुध पंडित कौ कहत कवि बुधससि सुवन वषान
बुध हरि को अवतार इक वोध भयो जिहि ग्यान ६०
अनंत नाम
गगन अनॅत जु कहत कवि व··········रि अनंत
अनेक सेस अनंत है अनंत है हरि अनंत अस एक ६१
छय नाम
छय विनास को कहत कवि छय कहिये छय रोग
छय पुरि·············हरि वचै लीन होत सवलोक ६२"

अन्त— रस नाम

"नवरस-नवरस औ संधनरस इमत विष नीर
सव रस कौ रस प्रेम रस जाके वस वलवीर ११७
सनेह हेत सनेह·····प्रेम सनेह·····निजचरनि
गिरधर सरन नन्ददास रति नदेह ११८
यह अनेकार्थ मेजरी पठै सुनें नर कोई
ताहि अनेक जु अरथ पुनि- अरु परमारथ होई ११६
इति अनेकार्थ मंजरी नंददास कृत संपूर्ण मिती मार्गसिर वदी
१४ वुधवासरे संवत् १८५८"

विषय—कोष-साहित्य। अनेकार्थ शब्दों का संग्रह।

टिप्पणी—ग्रंथ जीर्ण-शीर्ण है। इसी जिल्द में तीन और लघुकाय ग्रन्थ हैं। इस ग्रन्थ में अन्य प्राप्त 'अनेकार्थ मंजरी' की प्रतियों से पाठान्तर प्रतीत होता है। ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट, सुन्दर और प्राचीन है। लिपिकार का नाम ग्रन्थ में नहीं दिया हुआ है। बीच-बीच में अक्षरों के फट जाने के कारण भी पाठ में कठिनाई होती है। सम्पूर्ण ग्रन्थ ११६ पृष्ठों में समाप्त है।

यह ग्रन्थ श्री चैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटनासिटी में सुरक्षित है। पुस्तकालय में ग्रन्थ-सं० ७४८—२६७७ है।

१२५. श्री नागरीदासजी कृत दोहा—ग्रंथकार—श्री नागरीदास जी। लिपिकाल—×। अवस्था—प्राचीन, जीर्ण-शीर्ण, हाथ का बना, देशी कागज, खंडित। पृष्ठ-सं०—३। प्र० पृ० पं० लगभग—२०। आकार—४½" ×

६"। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×।
लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"अथ श्री नागरीदास जी के दोहा ।।
चरन कमल रज सेइ हौ
मन बच क्रम यह आस ।।
अपनौ सर्वस जानि कै
वलि जाइ नागरीदास ।।१।।
लै करुवो को पीन कामरी
कुंज निकुंज निकूल विलास ।।
तव मिलि है मित्र मन मुदित
विहारी विहारनिदास खवास ।।२।।
अति निरपेच्छ संग संग्रह
अनन्य आनि गति नाहि ।।
श्री विहारिनदासि उषासि,
सुख संग पैठि महल मन माहि ।।३।।
नित्य विहार सार सबकौ
अति दुर्ल्लभ अगम अपार ।।
अनन्य धर्म संधि सम······
विनु भाया कठिन किवार ।।४।।
यह उपदेश उपाई श्री विहारीदास
कृपा तै जानै ।।
नित्य सिद्ध विनु नागरीदासि कहा
कोऊ पहिचानै ।।५।।"

मध्य की पंक्तियाँ—पृ०-सं० २—"कुंज पुलिन कौतुक घनौ
मिलि खेलत रसरासि
श्री विहारी विहारनि दासि
संग सुष निरखि नागरीदासि १८
श्री विपुल विहारन दासि तैं
अव छिन छिन मन आनंद
यौ निरषत नागरीदासि
नित्य···············मकरंद १६"

अन्त—"मोहन हितस्यामा कौ जनम कहा जानौ जू
आनंद निधि मृदुता की अवधि वताइ है
जुवजो पिय प्यारी तिम जूथ कहा जोत भयौ
हित ह्वै राजत हैं गोप यह सुभाई है
भूषन गगन वाजे वरसह चरि ही चारन हैं
हरि चीर देही द्वै सव सुषदाई हैं
वेद की जू वेदन हैं विदित वषानी सो
विप्रन वर रसिकनि में सरस सुनाई है"

विषय—श्री कृष्ण-जीवन सम्बन्धी पद। गोपियों के साथ, विहार, क्रीडा और कौतुक का वर्णन। साथ-साथ आध्यात्मिक विचार-धारा का पुट भी। काम, क्रोध, इच्छा द्वेष आदि के परिणाम और उनके परित्याग का फल।

टिप्पणी—इस लघुकाय ग्रंथ में श्री नागरीदास जी के कुछ पदों का संग्रह मात्र है। प्रतीत होता है नागरीदास से सम्बन्धित कोई विहारीदास और श्री अनन्य नाम के कवि अथवा गुरु थे। इन नामों को कवि ने अपने अधिकांश पदों में स्मरण किया है। ग्रंथ की लिपि स्पष्ट किन्तु प्राचीन है। ग्रंथ खंडित है।

यह ग्रंथ श्री चैतन्य पुस्तकालय गायघाट, पटना सिटी में सुरक्षित है। पुस्तकालय में ग्रंथ-संख्या—७४८—२६७७ है।

१२६. हित-वाणी—ग्रंथकार—हितहरिवंश। लिपिकार—×। अवस्था—जीर्ण-शीर्ण, प्राचीन, देशी कागज खंडित। पृष्ठ-संख्या—६। प्र० पृ० पं० लगभग—२०। आकार—४½"×६"। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री राधावल्लभो जयति। अथ श्री हितजी की फुटकर वांनी लिष्यते॥

॥ सवैया ॥

द्वादसु चंद कृत स्थल मंगल वुद्ध विरुद्ध सुरगुरु वंक॥
जहि पदसम भवन भृगु सुत मंद सुकेत जनंम के अंक॥

अष्टम राह चतुर्थ दिन मन तौ हरिवंश करत न सेक ॥
जौ पै कृस्न चरन अर्पित तनमन तौ करि है कहा नवग्रहरंक ॥१॥
आंनद संमजमंम निसापति मंगल बुद्ध शिवस्थल लीके ॥
जौ गुरु होइ धरंम भवन के तौ भृगुनंद सुमंदप वीके ॥
तीसरौ केतु समेत विधु ग्रसतौ हरिवंश मन क्रम फीके ॥
जौपै छाडि गोविद भ्रमत दसौ दिस तौ करि है कहानव ग्रह नीके ॥२॥

छप्पै ॥

न जानौ छिन अंत कवन बुधि घटहि प्रकासित ॥
छुटि चेतन जु अचेत तऊ मुनि भएविषवासित ॥
पारासर सुरइंदु कल पकामिनि मनकंधा ॥
पखि देह दुखद्वंद सुकोन''''म काल निकंधा ॥
इह डरहि डरपि हरिवंशहित जिनिव भ्रमहिगुन सलिलपर ॥
जिह नामनि मंगल लोक तिहुसुहरि पद भजन विलंव करि ॥३॥

मध्य की पंक्तियाँ—पृष्ठ-सं० ५ रागसारग

वृषभानु नंदनी राजति है ॥
सुरतरंग रसभोर भामिनी सकल नारि सिरगाजति है ॥
इत उत चलत परत दोऊ पग मद गयंद गति लाजत है ॥
अधर निरंग रंगगंडन पर कटक काम कौ साजत है ॥
उर पर लटक रही लटकीरी कटिव किंकनी बाजति है ॥
जै श्रीहित हरिवंश पलटि प्रीतम पटजुवति जुगत सब छाजति है ॥६॥

अन्त— रागमलार ॥

दोऊजन भीजत अटके वातन ॥
सघन कुंज के द्वारै ठाढ़े अंवरल पठैगातन ॥
ललिता ललित रूपरस भीजी वूद वचावत पातनि ॥
जै श्रीहितहरिवंश परस्पर प्रीतम मिलवत रतिरस घातनि ॥ १४॥

विषय—श्री कृष्ण-लीला सम्बन्धी मुक्तक रचना विशेषत: गोपियों के साथ विहार, यमुनातट पर वेणुवादन-वर्णन, राधासौन्दर्य वर्णन और विभिन्न पक्षियों द्वारा सन्देश कथोपकथन आदि ।

टिप्पणी—क—प्रतीत होता है श्री हितहरिवंशजी कृत किसी वृहद्काय ग्रंथ का यह खंडित अथवा अपूर्ण अंश है। कवि ने इसमें श्रीकृष्ण और राधा की केलि का वर्णन तथा उनके

रूपसौन्दर्य की प्रशंसा कवित्वमयी भाषा में की है। रस और छन्दविधान पर कवि का पूर्ण अधिकार है। यह ग्रंथ अथवा कवि के ये पद संभवतः अप्रकाशित हैं।

ख—इस ग्रंथ के लिपिकार ने ग्रंथ के अन्त में श्री हितहरिबंश जी कृत संस्कृत के ४ श्लोक भी दिए हैं। ग्रंथ की लिपि स्पष्ट, सुन्दर किन्तु प्राचीन है। ग्रंथ संख्या १८, १६ और २० एक ही जिल्द में हैं। यह ग्रंथ श्री चैतन्य पुस्तकालय गायघाट, पटना सिटी में सुरक्षित है। पुस्तकालय ग्रंथ सं० ७४८—२६७७ है।

१२७. कवित्तरामायण—श्री गो० तुलसीदास। लिपिकार—श्री जीवनाथ पाण्डे शर्मा। अवस्था—अच्छी; प्राचीन; हाथ का बना, मोटा, देशी कागज; संपूर्ण। पृष्ठ—६६। प्र०-पृ० पं० लगभग—२८। आकार—"५ × ६½"। भाषा-हिन्दी। लिपि-नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—अग्रहण, कृष्ण द्वादशी, शनिवार-सं० १८६४ वि०' १७५६ शाके।

प्रारंभ—श्री गणेशायनमः॥अथ तुलशीदास विरंचिते कवितरामायन लिख्यते॥

॥ सवैया ॥

अवधेश के द्वार सकार गई सुत गोद कै भूपति लै निकसे॥
अवलोकि हौं सोच विमोचन को ठकि सी रहि जो न ठकै धिक से॥
तुलसी मनरंजन रंजित अंजन नयन सुखंजन जातक से॥
सजनी शशिमे समशील उभय नव नील सरोरुह से विकसे॥१
पग नूपुर औ पहुँची कर कंजन मंजु वनी मणिमालहिये॥
नव नीलकलेवर पीतझगा झलकै पुलकै नृपगोद लिए॥
अरविंदसे आननरूप मरंद अनन्दित लोचन भृंग पिये॥
मनमे न वसे अस वालक जौं तुलसी जगमेफल कवन जिये॥२

मध्य की पंक्तियाँ सं०४८—शोक समुद्र निते तब काठिक पीश किया जग जानत जैसे॥
नीच निशाचर वैरिकबंधु विभीषणकीन्ह पुरंदर सैसो॥
नाम लिये अपनाई लिये तुलसी सो कहै जग कौन अनैसो॥
आरत आरति भंजन राम गरीब नेवाज न दूसर ऐसो॥४

अन्त—देत संपदा समेत श्रीनिकेत याचकनी
भवन विभूति भंग वृषभावहनु है॥

नामवामदेव दाहिनो सदा असंगसंग
अरधंगना अनंग को महनु है ॥
तुलशी महेश को प्रभाव भावहु सुगम
अगमनिगम हूको जोनि वोगहनु है ॥
कहा कहै कविमुख शारदा लजानी जात
गात श्वेतचंद्र जातरूप को लहनु है ॥
चाहे न अनंग अरि एको अंग अंगनेको दियो
उपै जानि यै सुभावसिद्धि वणीसो ॥
करि बुंदवारि त्रिपुरारी परद्वारी येतौ
देत फल चारि लेत सेवा सांची मानि सो ॥
तुलसी भरोसो नभ वेश भोरा नाथ को तौ
कोटिक लेस करौ भरौ छार सानिसो ॥
दारिद दवन दुख दोष दाहकश मनसो
लोक तिहु नाही इजोर मनभावनीसो ॥ ३७॥

दोहा ॥

राम वाम दिशि जानकी लषण दाहिने ओर
ध्यान सकल कल्याणमय सुरतरु तुलशी तोर ॥

इति उत्तरकाण्डः संपूर्णः

इति श्री गोसाईं तुलशीदास विरंचित ।
श्री कवितरामायणँ संपूर्णम् ॥

विषय—श्री रामचन्द्र का चरित्र, कवित्तों में। बाल्यावस्था से युद्धकांड तक की विशेष घटनाओं के आधार पर रचना।

टिप्पणी—यह ग्रंथ गोस्वामी तुलसीदासजी का प्रसिद्ध ग्रंथ है। ग्रन्थ संपूर्ण है। ग्रंथ की लिपि अस्पष्ट और प्राचीन है। लिपिकार ने यत्र-तत्र 'ख' के लिए 'ष' का प्रयोग किया है और ज' के लिए 'य'के नीचे विंदु देकर (य़) प्रयोग किया है। यह ग्रन्थ श्री चैतन्य पुस्तकालय, गायघाट, पटनासीटी में सुरक्षित हैं। पुस्तकालय ग्रन्थ संख्या ४५०—१७७४ है।

—::※::—

परिशिष्ट

☆ अज्ञात रचनाकारों की कृतियाँ

☆☆ ग्रंथों की अनुक्रमणिका

☆☆☆ ग्रंथकारों की अनुक्रमणिका

प्रथम परिशिष्ट

अज्ञात रचनाकारों की कृतियाँ

क्रम-संख्या	ग्रंथों के नाम	विषय	रचनाकाल	लिपिकाल	विशेष
१	काल-यवन-कथा	जीवन-चरित्र			
२	जानकी-स्वयंवर	रामचन्द्र-जीवन-सम्बन्धी-रचना।			
३	दृष्टान्त-प्रबोधिका	विविध कथा।			
४	निषेद-बोधिका	विविध विषयों के लक्षण और नाम।			
५	बलभद्र-जन्म-चम्पू	बलदेव-जीवन-चरित्र।			
६	मधुपुरी-वर्णनम्	मथुरा-वर्णन।		सं० १६४६ वि०	
७	रुक्मिणी-स्वयंवर	भागवत महापुराणांश			
८	वैराग्यप्रकरण	आध्यात्मिक विषयों का दार्शनिक विवेचन।		सं० १६१६ वि०	
९	सीताराम-रस-तरंगिणी	गद्य में सीता और राम की दिन-चर्या।			
१०	संक्षिप्त दोहावली रामायण	रामचन्द्र-जीवन-चरित्र।		सं० १६४६ वि०	
११	सुदामा-चरित्र	सुदामा द्वारा भगवत्-स्तुति।			
१२	शतपंच चौपाई	रामचन्द्र-बाल-लीला-वर्णन।			
१३	शंकावली	रामचरित मानस-शंकाओं का निराकरणात्मक उत्तर।			

द्वितीय परिशिष्ट

ग्रंथों की अनुक्रमणिका

[ग्रंथों के सामने की संख्याएँ विवरणिका में दी गईं क्रम-संख्याएँ हैं]

ग्रंथकारों की अनुक्रमणिका

[ग्रंथकारों के सामने की संख्याएँ विवरणिका में दी गई ग्रंथ-संख्या की क्रम-संख्याएँ हैं]

तृतीय परिशिष्ट

महत्वपूर्ण हस्तलेखों के समय एवं अन्य प्रकाशित खोज-विवरणिकाओं में उनके उल्लेख का विवरण

क्र० सं०	ग्रंथकार	हस्तलेखों के नाम	प्राप्त ग्रंथों के उल्लेख तथा उनका विवरण	विशेष
१	केशवदास	१ कविप्रिया	ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १६०० सं० ५२, १६०२ सं० १८३, १६०४, सं० १२५, १२६। १७६६ वि०, खो० वि० १७६ सं० ६६ ए०, १६२०-२२-सं० ८२ ए० बी०, १६२३-२५ सं २०७, १६२६-२८ सं० २३३ बी० सी० डी०। वि० रा० भा० प०, ह० लि० ग्रं० खो० विव० (द्वितीय खं०) ग्रं० सं० १०, ११,	
		२ रसिकप्रिया	ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १६०३ सं० ८६। सं. १८१४ वि०-खो० वि० १६०४ सं० १२८, खो० वि० १६१७-१६ सं० ६६ बी०। सं. १७१७ वि०, खो० वि० १६२०-२२ सं० ८६ बी०, खो. वि. १६२३-२५ सं० २०७, खो० वि० १६२६-२८ सं० २३३ एफ० जी०। वि० रा० भा० प०,-ह० लि० ग्रं० खो० विव० (द्वितीय खं०) ग्रं० सं० ५६, ५७	
		३ रामचन्द्रिका	सं. १८२५ वि०-ना० प्र० खो० वि० १६०२ सं० २५२। सं. १६३१ वि०, खो० वि० १६०३ सं० २१, खो० वि०	

क्र० सं०	ग्रंथकार	हस्तलेखों के नाम	प्राप्त ग्रंथों के उल्लेख तथा उनका विवरण	विशेष
			१६२३-२५ सं० २०७, खो० वि० १६२६-२८ सं० २३३ ई० । वि० रा० भा० प०, ह० लि० ग्रं० खो० वि० (द्वितीय खं०) ग्रं० सं० ५८,५६ और ६८ ।	
२	गिरधरदास	१ कुण्डलिया	ना० प्र० स० (काशी) सं० १७७० वि०;-खो० वि०-१६०६-८ सं० १०७ । वि० रा० भा० प०, खो० वि० (२ खं०) ग्रं० सं० १४ ।	
३	तुलसीदास (गोस्वामी)	१ कवित्त-रामायण (कवितावली)	सं. १६६६ वि०, ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १६०३ सं० १२५ । सं. १८५६ वि०-खो० वि० १६२०-२२ सं० १६८ एफ०, खो० वि० १६२३-२५ सं० ४३२, खो० वि० १६२६-२८ सं० ४८२ ई० एफ० । वि० रा० भा० प०,-खो० वि० (र. का. स० १६१६ वि०) ग्रं० सं० १३,१२७ ।	
		२ गीतावली रामायन	सं. १८०२ वि०,-ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १६०४ ग्रं० सं० ६० । सं. १८६७ वि०,-खो० वि० १६०६-११ सं० ३२३ जी०, खो० वि० १६१७-१६ सं० १६६ सी०; सं. १८२४ वि०, खो० वि० १६२०-२२ सं० १६८ एच०, खो० वि० १६२३-२५ सं० ४३२, खो० वि० १६२६-२८ सं० ४८२ आर० एस० । वि० रा० भा० प०,-खो० वि० (द्वितीय खंड) (रा० का० १६१० वि०) ग्रं० सं० १७,८७ । १८८३ वि० ग्रं० सं० ६४ ।	

क्र० सं०	ग्रंथकार	हस्तलेखों के नाम	प्राप्त ग्रंथों के उल्लेख तथा उनका विवरण	विशेष
३	तुलसीदास	३ छप्पय रामायण	सं.१८७१ वि०, ना० प्र० सं० (काशी) खो० वि० १९०६-८ सं० २४५ एच। वि० रा० भा० प०, खो० वि० (खंड २) ग्रं० सं० १९,२०।	
		४ बरवै रामायण	सं. १८१६ वि०; ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १९०३ सं० ८०। १८९० खो० वि० १९०९-सं० २४५ ए०, खो० वि० १९१७-१९ सं० १९६ बी०। वि० रा० भा० प०, खो० वि० (खंड २) ग्रं० सं० ३६,३७,३८।	
		५ दोहावली	ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १९०४ सं० ६२, १८४४ खो० वि० १९०६-८ सं० २४५ सी०, १८३९ खो० वि० १९०९-११ सं० ३२३ बी०, खो० वि० १९२०-२२ सं० १९८ बी० सी०, खो० वि० १९२३-२५ सं० ४३२, खो० वि० १९२६-२८ सं० ४८२ ओ. पी. क्यू.। वि. रा. भा. प.,-खो० वि० (२ खंड) ग्र० सं० ४४।	
		६ विनयपत्रिका	१८२७ ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १९०६-८ सं० २४५ जी.। १८२२ खो० वि० १९०९-११ सं० ३२३ एल., खो० वि० १९१७-१९ सं० १९६ एफ., खो० वि० १९२०-२२ सं० १९८ के., खो० वि०	

क्र० सं०	ग्रंथकार	हस्तलेखों के नाम	प्राप्त ग्रंथों के उल्लेख तथा उनका विवरण	विशेष
३	तुलसीदास		१६२३-२५ सं० ३३२, खो० वि० १६२६-२८-४८२ ए.२ बी.२ सी.२। बि. रा. भा. प.,-खो० वि० (२ खंड) लि० का० १८६८ ग्रं० सं० ६२, ६३,६४,६५,८४।	
		७ वैराग्यसंदीपनी	ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १६०० सं० ७, खो० वि० १६०३ सं० ८१। १८२६-खो० वि० १६०६-८ सं० २४५ ई०। १८००-खो० वि० १६०६-११ सं० ३२३, खो० वि० १६१७-१६ सं० १६६ डी., खो० वि० १६२०-२२ सं० १६८ जे., खो० वि० १६२६-२८ सं० ४८२ डी.। बि. रा. भा. प.,-खो० वि० (खंड २) लि० का० १६१६, ग्रं सं० ६६।	
		८ रामसगुनमाल।	१७६५ ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १६०३ सं० ८७,६८, खो० वि० १६०६-८ सं० २४५ डी.। १८२४-खो० वि० १६०६-११ सं० २३२ एच०, खो० वि० १६२३-२५ सं० ४३२, खो० वि० १६२६-२८ सं० ४०४,४८२ एल० एम० एन० ओ० पी० क्यू०। बि० रा० भा० प०-खो० वि० (खंड २) १६११ ग्र० सं० ६२।	
		६ तुलसी सतसई	१६०१ ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १६०६-८, सं० २४५ सी०।	

क्र० सं०	ग्रंथकार	हस्तलेखों के नाम	प्राप्त ग्रंथों क उल्लेख तथा उनका विवरण	विशेष
३	तुलसीदास	६ तुलसीसतसई	१६१५ वि० रा० भा० प०; खो० वि० (खंड २) ग्रं० सं० २२,४६ और १६७४ (लि० का० ग्रं० सं० ५३।	
४	दीनदयालगिरि	१ अनुरागबाग	१८७१ ना० प्र० स० (काशी); खो० वि० १६०४ सं० ४०। १८८८ वि० रा० भा० प०; खो० वि० (खंड २) ग्रं० सं० ३,६३।	परिषद् के प्रस्तुत संग्रह में ग्रंथकार के अन्य ग्रंथ भी हैं। दे०—ग्रं० सं० १, २ और ६१।
		२ दृष्टांत-तरंग	१८७१ ना० प्र० स० (काशी); खो० वि० १६०४, सं० ७७, खो० वि० १६०६-११; सं० ७४ ए०। १८३६ वि० रा० भा० प०; खो० वि० (खंड २) ग्रं० सं० ८६।	
५	देवदत्त (देव)	१ अष्टयाम	ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १६००; सं० ५३, खो० वि० १६०२, सं० १२१; वि० सं० १७५७; खो० वि० १६०३, सं० १३८; खो० वि० १६०४, सं० १२०; वि० सं० १८२०, खो० वि० १६२०-२२, सं० ३८ बी०, खो० वि० १६२३-२५ सं० ८६; खो० वि० १६२६-२८ सं० ६५ ए०। वि० रा० भा० परिषद् (पटना) लि० का० सं० १८६२ वि०; खो० वि० (द्वितीय खंड) ग्रं० सं० ६,७।	कवि के अन्य १७ ग्रंथ नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में मिले हैं।

क्र० सं०	ग्रंथकार	हस्तलेखों के नाम	प्राप्त ग्रंथों के उल्लेख तथा उनका विवरण	विशेष
६	नन्ददास	१ अनेकार्थ-मंजरी नाम-माला	ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १६०२, सं० ५८; १८०२—खो० वि० १६०३, सं० १५३; १८०६ खो० वि० १६०६-११, सं० २०८ डी०; १८०१-१८४६ खो० वि० १६२०-२२, सं० ११३ डी० ई०; खो० वि० १६२६-२८, सं० ३१६ ए० बी० सी० डी० ई० एफ्० जी० । बि० रा० भा० परिषद् (पटना) खो० वि० (खंड २) ग्रं० सं० ८८, १२४ ।	इनके अन्य ६ हस्तलेख नागरी-प्रचारिणी सभा काशी) को खोज में मिले हैं ।
७	पद्माकर (भट्ट)	१ गंगालहरी	१८५३ ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १६०६-११, सं० २२० बी०; खो० वि० १६२६-२८, सं० ३३८ । बि० रा० भा० परिषद् (पटना) सं० १६२० वि० (लि० का०), खो० वि० (खंड २) ग्रं० सं० १५ ।	ग्रंथकार के अन्य ग्रन्थों के हस्तलेख नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में मिले हैं ।
		२ जगत-विनोद	ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १६०२, सं० ६; १८३१ खो० वि० १६०३, सं० १५८; १८२४ खो० वि० १६०६-८, सं० ८२ ए०; १८५५, १८८३ खो० वि० १६२०-२२, सं० १२३ ए०, बी०; खो० वि० १६२३-२५, सं० ३०७; खो० वि० १६२६-२८, सं० ३३८ ई० । बि० रा० भा० परिषद् (पटना) वि० सं० १६२२ खो० वि० (खंड २) ग्रं० सं० १६ ।	

क्र० सं०	ग्रंथकार	हस्तलेखों के नाम	प्राप्त ग्रंथों के उल्लेख तथा उनका विवरण	विशेष
८	विहारीलाल	१ सतसई	ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १६००, सं० ११५; १७१८ खो० वि० १६०१, सं० १७; १७८० खो० वि० १६०१, सं० ५२,७५; १७६६, १७४६ खो० वि० १६०२, सं० ८; १७८२ खो० वि० १६०३, सं० १३३-१३५; खो० वि० १६०६-८, सं० ३ ए०; १७६३ खो० वि० १६०६-८, सं० ६६ ए०; १७१७ खो० वि० १६२०-२२ सं० २० ए०; १८०५ खो० वि० १६२०-२२ सं० २० बी०; खो० वि० १६२३-२५ सं० ६२ ए० से जे० तक; खो० वि० १६२६-२८ सं० ६८ ए० से ई० तक। वि० रा० भा० परिषद् (पटना) सं० १६१३ वि० (१८५७), सं० १६१२ वि० (१८५६) खो० वि० (खंड २) ग्रं० सं० ४२, ४३।	
६	मतिराम	१ रसराज	ना० प्र० स० (काशी) १६८२ खो० वि० १६००, सं० ४०, १७६१ खो० वि० १६०१, सं० ६७, १८३३ खो० वि० १६०६-८, सं० १६६ ए०, खो० वि० १६२०-२२, सं० १०५ बी०, खो० वि० १६२३-२५, सं० २७६, खो० वि० १६२६-२८, सं० ३०० डी० से जे० तक। वि० रा० भा० परिषद् (पटना) सं० १६२१ वि०, खो० वि० (खंड २) ग्रं० सं० ५४।	अन्य हस्तलेखभी नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में मिले हैं।

क्र० सं०	ग्रंथकार	हस्तलेखों के नाम	प्राप्त ग्रंथों के उल्लेख तथा उनका विवरण	विशेष
१०	रामचरनदास	१ चरनचिह्न	१८२० ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १६०६-११, सं० २४५ आई०; खो० वि० १६२३-२५, सं० ३३६; खो० वि० १६२६-२८, सं० ३७७ । बि० रा० भा० प० खो० वि० (खं० २) र० का० सं० १८६७ वि०, ग्रं० सं० ६५ ।	इनके रचित अन्य १२ हस्तलेख-नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) की विवरणिका में विवृत हैं ।
११	सरदार कवि	१ शृंगार-संग्रह	१८७५ ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १६०६-११, सं० २८३ ए० । बि० रा० प० खो० वि० (खं० २) लि० का० सं० १६२३ वि० (सन् १८६६ ई०) ग्र० सं० ६८ ।	ग्रंथकार के अन्य ४ ग्रंथ नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में मिले हैं ।
१२	सुन्दरदास	१ सवैया	१७७३ ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १६०२, सं० २५, २६; १८७० खो० वि० १६०६-८, सं० २४२ ए०; १८३४ खो० वि० १६१२-१६, सं० १८४ बी०; खो० वि० १६२३-२५, सं० ४१५; खो० वि० १६२६-२८, सं० ४६६ बी०, सी०, डी० । बि० रा० प० खो० वि० (खंड २) लि० का० सं० १६०६ वि० (सन् १८४६ ई०); सं० १६२० वि०, ग्रं० सं० ७५, ७६ ।	कवि के अन्य ग्रंथों के हस्तलेख भी ना० प्र० स० काशी) को खोज में प्राप्त हुए हैं ।

क्र० सं०	ग्रंथकार	हस्तलेखों के नाम	प्राप्त ग्रंथों के उल्लेख तथा उनका विवरण	विशेष
१३	सूरजदास	१ रामजन्म	लि० का० सं० १६०६=१८५२ ई०; ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १६२६-२८, सं० ४७३ बी०। बि० रा० भा० प० खो० वि० (सं० १) लि० का०-सं० १६३७ वि०, ग्रं० सं० ४५-क, खो० वि० (सं० २) लि० का० सं० १६८८ वि०, ग्रं० सं० ४७।	
१४	सूरदास	१ सूर-सागर	लि० का०-सं० १८५३, सं० १७६२, सं० १८७३ और सं० १८६६। ना० प्र० स० (काशी) खो० वि० १६०१, सं० २३; खो० वि० १६०४, सं० १४२; खो० वि० १६०६-८, सं० २४४ सी०; खो० वि० १६२६-२८, सं० ४७१ एम्०, एन्०, (लि० का० सं० १८२७) स० १८२० वि० (सन् १७६३ ई०) सं० १८४४ वि० (१७८७ ई०), खो० वि० १६३२-३४ सं० २१२ जी०, एच्; १८३१ वि० (१७७४ ई०) १७६७ वि० (१७४० ई०) १८७४ वि० (१८१७ ई०) १६१७ वि० (१८६० ई०) खो० वि० १६२६-३२, सं० ३१६ ए०, बी०, सी०, डी०, ई०, एफ्०, जी०, एच्०।	श्री सूरदासजी कृत विनय-पत्रिका की प्रति भी प्रस्तुत संग्रह में है। ग्रं० सं० ६३ और १००।

क्र० सं०	ग्रंथकार	हस्तलेखों के नाम	प्राप्त ग्रंथों के उल्लेख तथा उनका विवरण	विशेष
			वि० रा० प० खो० वि० (खं० १) लि० का० स० १८२५ वि०, ग्रं० सं० ८१; खो० वि० (खं० २) लि० का० सं० १६१३ (सन् १८५७ ई०) ग्रं० सं० ३६; सं० १६२४ वि०, ग्रं० सं० ८० ।	
१५	हलधरदास	१ सुदामा-चरित्र	ना० प्र० स० (काशी) लि० का० सं० १६११ वि०, खो० वि० १६०६-११, सं० १०४; खो० वि० १६२६-२८ (र० का० वि० सं० १८००=१७४३ ई०, लि० का० सं० १८८२ वि०=१८२५ ई०) ग्रं० सं० १६३ । बि० रा० प०—खो० वि० (खं० २) सं० २५ ।	



शुद्धि-पत्र

[प्रस्तुत विवरणिका में 'ग्रन्थकारों का संक्षिप्त परिचय' में कुछ अशुद्धियाँ रह गई हैं, जिनका संशोधन निम्नलिखित रूप में उपस्थित है।]

पृ० सं०	पंक्ति-सं०	अशुद्ध	शुद्ध
क	४	अग्रदास की 'कुराडलिया' इस खोज में मिली है।	अग्रदास की कुछ पोथियाँ पहले मिल चुकी हैं। 'कुराड-लिया' इस खोज में मिली है।
क	५	इसके अन्य ग्रंथ नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) की खोज में मिले हैं। सभा की खोज-विवरणिका के अनुसार ये गलता, आमेर (जयपुर-राज्य) की वैष्णव गद्दी के अधिकारी थे।	नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) की खोज-विवरणिका के अनुसार ये गलता, आमेर (जयपुर-राज्य) की वैष्णव गद्दी के अधिकारी थे।
क	१५	झूलने	झूलने'
क	२१	दे० ना० प्र० स० (काशी) के त्रयोदश त्रैवार्षिक विवरण—सन् १६२६—२८ ई०, पृष्ठ-संख्या ११।	[दे०—ना० प्र० स० (काशी के त्रयोदश त्रैवार्षिक विवरण—सन् १६२६—२८ ई०, पृष्ठ-संख्या ११]।
क	२४	उक्त खोज-विवरण के उद्धरणों से।	उक्त खोज-विवरण के उद्धरणों की तुलना करने से।
क	२५	दे०—ना० प्र० स० (काशी) का द्वादश त्रैवार्षिक विवरण, सन् १६२३—२५, खंड १ ग्रन्थ-सख्या ६—बी०।	[दे०—ना० प्र० स० (काशी) का द्वादश त्रैवार्षिक विवरण, सन् १६२३—२५, खंड १ की ग्रंथ-संख्या ६ बी०]।
ख	१	रचे ही हैं झूलना	रचे ही हैं। झूलना

पृ० सं०	पंक्ति-सं०	अशुद्ध	शुद्ध
ख	५	है। जिसमें	है, जिसमें
ख	२७	रचना	पद्य
ग	७	उससे	उनसे
ग	८	है। किन्तु,	है और
ग	६	उससे	उनसे
ग	११	२२, ग्रं० सं०	२२ सं०
ग	१३	१६०६–११,	१६०६–११ सं०
ग	१३	सं० २४५ डी०,	२०५ डी०,
ग	१४	और २४५ एम्०,	२४५ एम्०,
ग	१६	३३६,	३३६;
ग	१७	डी० ई०,	डी०, ई०,
ग	२४	१६३७ के	१६३७ वि० के
ग	२७	१८८३ बि०	१८८३ वि०
घ	२	(रचनाकाल-सं० १६८४ वि०)	(रचनाकाल-सं० १६८४ वि०)।
घ	६	हुइ	हुई
घ	२०	कवित्त रामायन	कबित्तरामायन
ङ	११	महाराज के पुत्र	महाराज के पुत्र।
ङ	१५	नवोलब्ध	नवोपलब्ध
ङ	२५	संग्रह में हैं।	संग्रह में हैं :—
ङ	२७	६११७ चि०, सं० १८२२ वि०,	१६१७ वि० सं० १८२२ वि०
ङ	२८	१६२२ वि०; १६२७ वि०;	१६२२ वि० १६२७ वि०
च	१	१८८८ वि०,	१८८८ वि०
च	४	१८३६ वि०,	१८३६ वि०
च	१०	दे० "हिन्दी-पुस्तक-साहित्य" —पृ० ४७७	दे० 'हिन्दी—पुस्तक—साहित्य' (कामताप्रसाद गुप्त)–पृ० ४७७

पृ० सं०	पंक्ति-सं०	अशुद्ध	शुद्ध
च	१६	(मैनपुरी) निवासी	(मैनपुरी) के निवासी
च	२२	खो० वि०—	खो० वि०
च	२३	५३, खो० वि०	५३; खो० वि०
च	२८	१६०३ ग्रं० सं०	१६०३ सं०
च	२४	क्र० सं०	सं०
च	२५	ग्रं० सं०	सं०
च	२६	खो० वि०,	खो० वि०
च	२७	१६११-ग्रं० सं०—६४	१६११ सं० ६४
च	२७	एफ़	एफ्
च	२७	६४, बी., सी., डी., ई.।	६४ बी., सी., डी., ई.।
च	३०	साहिन्य'	साहित्य'
छ	७	विट्ठलदास	विट्ठलदास
छ	२३	(नामलाला)	(नाममाला),
ज	१	प्रस्तुत खोज में इनका पता, प्रथम है।	साहित्य-जगत् के लिए नये हैं।
ज	३	भाषाटीका—	भाषाटीका
ज	६	वर्त्तमान	वर्त्तमान।
ज	१३	१७६,	१७६;
ज	१३	१६०५ ग्रं०	१६०५
ज	१४	१६१२—ग्रं० सं०	१६१२ सं०
ज	१५	२५, ग्रं० सं०	२५ सं०
ज	१८	ग्र० स०	सं०
ज	१८	उद्धारण	उद्धरण
ज	१६	प्रसिद्ध कवि	प्रसिद्ध कवि।
ज	१६	(सन् १७५३ ई०),	(सन् १७५३ ई०)।

पृ० सं०	पंक्ति-सं०	अशुद्ध	शुद्ध
ज	१६	(१८३२ ई०)	(१८३२ ई०)।
ज	२०	जन्मभूमिसागर	जन्मभूमि—सागर
ज	२७	२२, ग्रं० सं०	२२ सं०
ज	२८	२८, सं०	२८ सं०
झ	६	नागरी-प्रचारिणी-सभा	नागरी-प्रचारिणी सभा
झ	८	की ग्रं० सं०—३३६	सं० ३३६
झ	११	हैं। जिसमें	हैं, जिसमें
झ	१५	वैतालपचीसी'	बैतालपचीसी
झ	१६	बलदेवजी भी खोज में नये हैं।	बलदेव नये कवि हैं।
झ	२७	'बैजनाथजी नवीन अनु-संधान हैं।'	बैजनाथ नवोपलब्ध हैं।
ञ	३	श्री दिनेशजी	दिनेश
ञ	८	श्री भारामलजी नये मिले हैं।	भारामल नवानुसंहित कवि हैं।
ञ	१०	कश्चित् जैनकवि	जैनकवि
ञ	१३	मिलता है। न किसी	मिलता है, न किसी
ञ	१८	सम्प्राप्त	सम्प्रति
ञ	२६	मिला	उल्लिखित
ट	६	१८७३—वि०,	१८७३—वि०
ट	८	काशी-नरेश;	काशी-नरेश।
ट	६	वर्त्तमान;	वर्त्तमान।
ट	६	साहित्यिक समाज के प्रेमी;	साहित्यिक समाज के प्रेमी।
ट	१५	विवरण,	विवरण'
ठ	१०	रामवल्लभशरणजी नये मिले हैं।	रामवल्लभशरण नवोपलब्ध हैं।
ठ	१४	बरेली-निवासी;	बरेली-निवासी।
ठ	१४	हलवाई;	हलवाई।

पृ० सं०	पंक्ति-सं०	अशुद्ध	शुद्ध
ठ	१५	अनुवादक;	अनुवादक ।
ठ	२०	२३८,	२३८;
ठ	२३	परिषद्-विवरण	परिषद्-हस्तलिखित-ग्रंथ-विवरण
ड	४	विक्रमी	वि०
ड	६	निवासी;	निवासी ।
ड	७	आश्रित;	आश्रित ।
ड	७	र्त्तमान;	वर्त्तमान ।
ड	१०	रूपान्तरकार	रूपान्तरकार ।
ड	१०	श्रीसुखलाल जी	श्री सुखलाल
ड	१४	हितहरिवंश जी	हितहरिवंश
ड	१६	शिष्य;	शिष्य ।
ड	१६	पुत्र;	पुत्र ।
ड	२०	वैश्य;	वैश्य ।
ढ	२	छट्ठ	छह
ढ	५	रचनाएँ । प्रकाशित	रचनाएँ प्रकाशित
ढ	२५	(पटना) को,	(पटना) को
ण	१३	रखते हैं ।	रखती हैं ।
ण	२३	श्री हरदेवजी	श्री हरदेव
ण	२३	कोई विशिष्ट	कोई महत्त्वपूर्ण
त	१	श्री हलधरदासजी	हलधरदास
त	७	...रचयिता श्री हरिरामजी का	...रचयिता । हरिराम का
त	१०	(काशी) को,	(काशी) को
त	१५	और देखिए—	और,
त	१८	पृष्ठ-सं०	पृ० सं०

——::——